अमृत लाल नागर के उपन्यासों का शिल्प-विधान

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी

की

पी. एच. डी. उपाधि के निमित्त प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

२००४
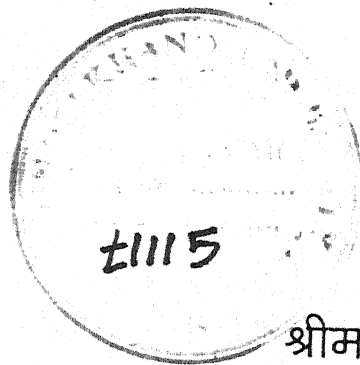
शोध निदेशक

डॉ0 (श्रीमती) नीलम मुकेश

विभागाध्यक्ष

हिन्दी विभाग

डी.वी.पी.जी. कालेज, उरई

अनुसंधित्सिका

श्रीमती ज्योति पाठक

प्रधानाचार्या

एम.ए.(हिन्दी), बी.एड.

अमूल्या जूनियर हाईस्कूल औरैया

डॉ. (श्रीमती) नीलम मुकेश

विभागाध्यक्ष
हिन्दी विभाग
डी.वी.पी.जी. कालेज, उरई

कार्यालय : 52214
निवास : 50532

निवास :
1075, सिविल लाइन, जालौन रोड
उरई – 285001 (जिला जालौन)

दिनांक 23-02-04........

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्रीमती ज्योति पाठक ने मेरे निर्देशन में बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी (उ0प्र0) की हिन्दी विषय में पी0एच0डी0 उपधि हेतु "अमृत लाल नागर के उपन्यासों का शिल्प-विधान " विषय पर विधिपूर्वक अनुसंधान कार्य किया है एवम् प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इनकी मौलिक कृति है।

श्रीमती ज्योति पाठक अपने शोध कार्यकाल में दो सौ वासरों से अधिक अवधि तक मेरे सान्निध्य में रहीं हैं। इनकी साहित्यिक अभिव्यक्ति उच्चकोटि की है। अतः निरीक्षण के पश्चात 'मूल्यांकन' के लिये इस प्रबंध को विश्व विद्यालय में प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करती हूँ।

नीलम मुकेश

डा० (श्रीमती) नीलम मुकेश

अध्यक्ष – हिन्दी विभाग
डी0वी0 कालेज, उरई

समर्पण

अपने जीवन साथी को जिन्होंने प्रतिक्षण मुझे

अपने लक्ष्य की प्राप्ति

के लिए सतत् प्रेरित

किया।

ज्योति पाठक

श्री अमृत लाल नागर (जन्म सन् 1916 मृत्यु सन् 1990)

प्राक्कथन

प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यास धारा के महान साहित्यकार अमृतलाल नागर अपने युग के प्रचलित उपन्यासकारों में से एक हैं। उनका व्यक्तित्व अपने ही आलोक से आलोकित है। नागर जी ने अपने उपन्यासों में कथाओं को कमवार कुशलता से गुम्फित किया है। नागर जी ने मानव जीवन के व्यापक धरातल को अपनी कृतियों में यथार्थ रूप में उतारकर जनमानस को सचेत करने का सफल प्रयत्न किया है । उनके उपन्यासों की सुरभि से हिन्दी साहित्य आकण्ठ सुवासित ही नहीं अपितु प्रेरणास्त्रोत भी बनी हुई है। नागर जी ने अतीत के रस निर्झर में स्नात होकर वर्तमान की गंध वितरित करते हुए भविष्य के लिए जिन अमृत बिन्दुओं की साहित्यिक आंगन में वर्षा की है, वे उनके लेखन को प्रामाणिक भी बनाते हैं और विश्वसनीय भी। उनका लेखन अनुभव सिद्ध लेखन है और उनकी प्रतिभा कहानियों के रूप में जीवन के कण बटोरती हुई लम्बे परिश्रम के साथ परिपक्व होकर उपन्यासों के रूप में प्रस्फुटित हुई है यही कारण है कि एक दो उपन्यासों के प्रकाश में आते ही नागर जी हिन्दी साहित्य जगत् में महत्वपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित हुए।

नागर जी ने मुख्य रूप से मध्यवर्गीय समाज की समस्याओं के अन्तर्बाह्य स्वरूप का यथार्थ वर्णन प्रस्तुत किया है। प्रेमचन्द के सामाजिक चिन्तन को नया आयाम देते हुए उन्होंने कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से युग–परिवेश के मध्य जीवन

मूल्यों का समुचित ढंग से विश्लेषण किया है। नागर जी के उपन्यासों में शिल्प–विधान स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। नागर जी ने शिल्प को एक सुन्दर साधन मानकर अपने साध्य मानव धर्म की स्थापना करने का बड़ा ही सुन्दर प्रयास किया है जिसमें वे सफल भी रहे हैं। उनकी साहित्यिक रुचि और उसमें निहित लक्ष्य ने साहित्य शिल्प को अभिनन्दनीय बना दिया है क्योंकि उनकी सृजन प्रतिभा अन्ध–विश्वासों, उथली मान्यताओं और समाज को हानि पहुँचाने वाले तत्वों और रूढ़ियों के प्रति विद्रोह का मार्ग अपनाती है। उनकी अनुभव सम्पन्नता और भोगे हुए यथार्थ ने उनके शिल्प को परिमार्जित व परिष्कृत किया है। हिन्दी गद्य साहित्य की कोई भी विधा ऐसी नहीं है जिसे नागर जी की लेखनी ने स्पर्श न किया हो और उन्होंने हर प्रकार की रचना में सफलता भी प्राप्त की है। नागर साहित्य अपनी विविधता में अनुपम है तो शिल्प में भी अप्रतिम है। कथात्मक संगठन, प्रासंगिक वृत्तों के समीकरण और घटनाओं के कुशल नियोजन के कारण उनका कथा–शिल्प रोचक बन गया हैं शैल्पिक ईमानदारी के कायल नागर जी का साहित्य परिवेश की कोख से जन्मा है तो उनका शिल्प भी परिवेश, चरित्र, कथा और भाषिक संरचनाओं से संयुक्त होकर आया है।

अमृतलाल नागर के उपन्यासों में शिल्प–विधान पर शोध–कार्य करने के पीछे एक विचार यह भी था कि हिन्दी अनुसंधान में 'वस्तु' पर ही अध्ययन अधिक हुआ, 'शिल्प' पर कम। नागर जी जैसे कुशल शिल्पी की कला को प्रकाश में लाने का एक लघु प्रयास इस शोध प्रबंध के माध्यम से करने का साहस किया है। प्रस्तुत शोध ग्रन्थ "अमृत लाल नागर के उपन्यासों का शिल्प–विधान" को मैने नौ अध्यायों में विभाजित

करते हुए नागर जी के शिल्प का विवेचन करने का भरसक प्रयत्न किया है। नागर जी के उपन्यासों में शिल्प का अध्ययन करते समय मैंने प्रथम अध्याय में "उपन्यास रचना के आन्तरिक अवयव" का अध्ययन करते हुए नागर जी के अनुभूति जगत् का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है। नागर जी ने वैसे भी कहीं सिर्फ कल्पना का आश्रय न लेकर अनुभूतियों को अपनी रचना का आधार बनाया है।

द्वितीय अध्याय "उपन्यास–घटना–अनुक्रम" है। जिसमें कि सामान्य से विशिष्ट, विशिष्ट से सामान्य घटनाओं का आंकलन करते हुए नागर जी के उपन्यास–घटना–अनुक्रम का विवेचन किया गया है।

तृतीय अध्याय में 'कथा संगठन' का अध्ययन करते हुए नागर जी के उपन्यासों मे आवेग और स्थैर्य के संश्लेषण पर प्रकाश डाला गया है। अमृत लाल नागर के उपन्यासों में कथा–संगठन का विवेचन भी प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में 'कथा–विकास के विन्दुओं' का अध्ययन किया गया है। घटनात्मक गति, चरित्रात्मक विशिष्टता, वर्णनात्मक वस्तुगतता का अध्ययन करते हुए नागर जी के कथा विकास का विश्लेषणात्मक चित्र प्रस्तुत किया गया है।

पंचम अध्याय 'चरम–बिन्दु' से संबंधित है। इसमें वर्णनात्मक गति और संवेदन की चरम–स्थिति का विवेचन करते हुए नागर जी के उपन्यासों में संवेदना के चरम–बिन्दुओं का सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है।

षष्ठ अध्याय "घटना – चक्र का क्षैतिज प्रवाह" से संबंधित है। क्षैतिज प्रवाह की विभिन्न धाराओं का परस्पर समीकरण प्रस्तुत करते हुए अमृत लाल नागर के उपन्यासों में धारात्मक समीकरण का अध्ययन करके नागर जी की विभिन्न कथा धाराओं को आपस में गूँथ देने के कौशल का विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

सप्तम अध्याय "घटना – प्रवाह में स्थिति चक्रवात" से संबंधित है। एक व्यक्ति का जीवन स्थिति चक्रवात से कैसे बनता बिगड़ता है? इस बात को नागर जी ने अपनी रचनाओं में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है। अमृत लाल नागर के उपन्यासों में देश तत्व का अध्ययन करते समय नागर जी की देश प्रेम की भावना का वर्णन बहुत ही सजीव व स्पष्ट ढंग से किया है।

अष्टम् अध्याय में 'घटना – विकास में काल' का अध्ययन है। इसमें नागर जी का वर्तमान में अतीत का स्मरण, घटनाओं की परस्पर काल–स्थिति को दर्शाया गया है। समय का मानव जीवन में बहुत बड़ा महत्व है वही व्यक्ति के जीवन में अपने स्पष्ट पदचिन्ह छोड़ जाता है। नागर जी के उपन्यासों में काल तत्व का अध्ययन करते हुए काल का व्यक्ति के ऊपर पड़ने वाले प्रभाव का वर्णन किया गया है।

नवम् अध्याय घटनाक्रम का पर्यवसान से संबंधित है। पर्यवसान की विभिन्न स्थितियों का अध्ययन करते हुए नागर जी के उपन्यासों में यथार्थ वस्तुगतता का अध्ययन प्रस्तुत किय गया है क्योंकि कोई भी रचना कोरी कल्पना पर आधारित नहीं हो सकती उसमें यथार्थ का पुट आवश्यक है। संकेतात्मक सम्भावना व्यक्त करते हुए अमृत लाल नागर के उपन्यासों में विभिन्न घटनाक्रमों के पर्यवसान का विवेचन किया है।

मेरे इस शोध कार्य में जिन लोगों ने मुझें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग दिया है उनके प्रति मैं अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ। उदारमना, प्रतिभाशाली व्यक्तित्व की धनी, सौम्या, मधुरभाषिणी परमविदुषी डा. (श्रीमती) नीलम मुकेश जी को अपने शोध–कार्य में मार्ग निर्देशिका के रूप में पाकर मैं अपने आपको परम सौभाग्यशाली मानती हूँ उनके असीम स्नेह व कृपा दृष्टि की ही देन है जो मैं अपना शोधकार्य पूरा कर सकी हूँ। मैं अपनी सम्पूर्ण भावनाओं के साथ उनका नमन करती हूँ, इस कामना के साथ कि जीवन–पर्यन्त उनका स्नेहाशीष मुझे मिलता रहे। उनको नमन करने के साथ ही तिलक इंटर कालेज औरैया के प्रख्यात साहित्यकार डॉ0 आञ्जनेय सहाय अवस्थी को अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा के साथ नमन करती हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर मेरा मार्ग दर्शन किया तथा इस कठिन कार्य को करने के लिए प्रेरित भी किया, जिसके अभाव में यह भागीरथ प्रयास दुरुह ही नहीं असंभव भी था। उनका प्रोत्साहन और आशीर्वाद मेरे इस शोध कार्य को पूर्ण करने में सहायक बना। पितृष्वसुपति द्वय श्री उपेन्द्र कुमार तिवारी डी.वी. डिग्री कालेज उरई एवम् श्री वीरेन्द्र कुमार शुक्ल (अंग्रेजी व्याख्याता) बी.एन.एस.डी. इंटर कालेज कानपुर के अपेक्षिताधिक सहयोग ने हमारे धैर्य तथा साहस में न्यूनता नहीं आने दी। श्री रमेश चन्द्र द्विवेदी (अंग्रेजी व्याख्याता) बुधौली इण्टर कालेज का मैं आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने समय समय पर मेरा उत्साह वर्द्धन किया एतदर्थ मैं सर्वदा इन सभी की आभारी रहूँगी।

इस कार्य में अविस्मरणीय सहयोगी रहे मेरा पुत्र शिवांश, मेरी बेटी अमूल्या व मेरी ममतामयी माँ। जीवन के झंझावतों में पड़कर बार–बार कार्य से विरत हो जाने पर

मेरी माँ ही मुझे प्रेरित करती थी उनकी प्रेरणा से ही यह कार्य संभव हो सका। विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्य की प्रेरणा उनसे ही सीखी। उनको अपनी अशेष श्रद्धा के साथ नमन।

इसके अतिरिक्त मेरे पति श्री रामू पाठक एडवोकेट, भाई श्री कुलदीप अवस्थी व्याख्याता श्री राधावल्लभ इण्टर कालेज (फफूँद), विकल्प अवस्थी, अमित अवस्थी बहिन कु0 जागृति, कु0 प्रियंका और भोले मामा ने मुझे समय – समय पर कार्य पूर्ण करने में सहयोग तथा प्रोत्साहन दिया। इन लोगों का स्नेह भी मेरे लेखन का आधार बना। अपने बड़े भाई श्री कमलेश पाठक जी (विधायक डेरापुर) की भी मैं हृदय से आभारी हूँ जिनसे मुझे कठिन से कठिन लक्ष्य पर अडिग रहते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली। अपने सभी बन्धु–बान्धवों को मेरा मौन नमन जिनके सहयोग ने मुझे अपने शोध कार्य को पूरा करने का मार्ग प्रशस्त किया। मैं इन सभी के प्रति अपना आभार व्यक्त करती हूँ

अन्त में हार्दिक नमन उनको जो मेरे इस कार्य की आधार शिलाएँ बनी– यद्यपि वे बाह्य रूप में दृष्टिगोचर न हो सकीं, किन्तु उन्हीं पर यह सम्पूर्ण शोध का भव्य भवन प्रस्थापित हुआ है – मेरे श्रद्धेय पिता व मेरी श्रद्धेया माँ । मैं इनको पुनः नमन करती हूँ।

अनुक्रमणिका

अमृत लाल नागर के उपन्यासों का शिल्प - विधान

उपन्यास-विधा और विकास

अमृतलाल नागर का रचना - संसार

उपन्यास-रचना - प्रविधि

उपन्यास विधा और विकास

हिन्दी उपन्यास के विकास में मुंशी प्रेमचन्द की देन मील के पत्थर के समान सुस्पष्ट है इसीलिए हिन्दी उपन्यास का इतिहास प्रेमचन्द को केन्द्र में रखकर प्रमुखतः तीन खण्डों में विभाजित किया जाता है। ये खण्ड हैं –

1. प्रेमचन्द पूर्व 2. प्रेमचन्द कालीन 3. प्रेमचन्दोत्तर

साहित्य की अनेक विधायें हैं जिनमें से एक गद्य विधा–उपन्यास भी है। उपन्यास में किसी घटना का सहज और स्वाभाविक चित्रण होता है। इसी कारण लोग इसे अधिक पसन्द करते हैं।

उपन्यास आधुनिक युग की देन है। शिक्षा के प्रचार – प्रसार, मुद्रण कला के विकास और जनतांत्रिक सिद्धान्तों की प्रतिष्ठा के फलस्वरुप उपन्यास का जन्म और विकास होता है। हिन्दी में भी उपन्यासों का जन्म इन्हीं प्रेरणाओं से हुआ। उपन्यासों में आख्यानों की सी रोचकता और विस्तार होते हुए भी उसमें आख्यानों के विपरीत दैनिक जीवन की सामान्य घटनाओं का वर्णन होता है। इसी प्रकार उसमें महाकाव्यों की सी प्रबन्धता और चरित्र–चित्रण होते हुए भी महाकाव्यों के विपरीत साधारण जनों के यथार्थ जीवन का चित्रण होता है। इसीलिए उपन्यास को जनजीवन का 'महाकाव्य' कहा गया है।

एक शताब्दी से भी अधिक समय से भारतीय साहित्याकाश को तारक मंडल के समान समावृत किए हुए उपन्यास साहित्य के प्रथम नक्षत्र का जन्म हुआ? यह आज भी विद्वानों के विचार का विषय बना हुआ है। साथ ही साथ गद्य काव्य की इस विधा का 'उपन्यास' नामकरण क्यों किया गया? यह विचार का विषय है। इन सभी विचारणीय बिन्दुओं से पूर्व उपन्यास शब्द के अर्थ के विषय में विभिन्न विद्वानों के मत–मतान्तरों का अन्वीक्षण आवश्यक है –

उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति

उपन्यास शब्द 'उप' और 'नि' द्वयोपसर्ग सहित 'असु क्षेपणे' धातु में घञ् प्रत्यय के योग से सम्पन्न हुआ है। 'उप' उपसर्ग का अर्थ होता है – 'समीप' और 'नि' उपसर्ग सहित 'असु' धातु के दो अर्थ हैं रखना तथा जोड़ना। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में न्यास शब्द का प्रयोग इन दो अर्थों के साथ – साथ अन्य अर्थों में भी हुआ है। महाकवि कालिदास ने न्यास शब्द का प्रयोग ' रखना ' अर्थ में किया है –

तस्याः सुरन्यास पवित्र पांसु

मया सुलानाम धुरि कीर्तनीया। [1]

रघुवंश महाकाव्य के इस श्लोकांश में सुरन्यास शब्द का स्पष्ट अर्थ सुरों का रखना ही है। याज्ञवल्क्य स्मृति में न्यास शब्द का प्रयोग 'रखना'[2] तथा 'छोड़ना'[3] के

1- रघुवंश महाकाव्यम् – कालिदास

2 याजवल्क्य स्मृति (व्यवहार अध्याय) सप्तम प्रकरण श्लोक सं0 105 अभिवर्ण्य न्यसेत् पिंड हस्तयोरन्मयोरपि।

3 वही (प्रायश्चित्त अध्याय) चतुर्थ प्रकरण श्लोक सं0 204 अध्वाप्यसन् वेदन्यस्त कर्मा वने बसेत्।

अतिरिक्त 'धरोहर'[1] के अर्थ में भी किया गया है। 'स्वप्नवासवदत्तम्' में भी न्यास शब्द का प्रयोग धरोहर के अर्थ में किया गया है।[2] अमर दोषकार अमर सिंह ने भी न्यास का अर्थ धरोहर माना है।[3]

प्राचीन संस्कृत काव्य परम्परा की सारणी में डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी न्यास शब्द का प्रयोग धरोहर के ही अर्थ में किया है।[4]

यद्यपि न्यास शब्द का प्रयोग संस्कृत साहित्य में धरोहर के अर्थ में यथावत् रूप से हुआ है। परन्तु 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग कहीं भी धरोहर से सम्बद्ध नहीं दिखाई देता है। प्राचीन संस्कृत काव्यों, लक्षण ग्रन्थों एवं शोध ग्रन्थों में उपन्यास शब्द का प्रयोग एकाधिक अर्थों में हुआ है परन्तु धरोहर से सम्बन्धित अर्थ की वहाँ गन्धमात्र भी प्रतीत नहीं होती।

उपन्यास शब्द के वर्तमान रूप में प्रचलन से पूर्व प्राचीन संस्कृत साहित्य में उपन्यास शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में हुआ है। परन्तु वर्तमान समय में उपन्यास शब्द जिस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है उस अर्थ से उसका दूर का भी कोई संबंध नहीं है। 'आचार्य भरत' कृत 'नाट्य शास्त्रम्' में नाटक की प्रतिमुख संधि के एक अंग अर्थ में

---

[1] याज्ञवल्क्य स्मृति (व्यवहार अध्याय) चतुर्थ प्रकरण श्लोक सं0 67
याचितान्वाहित न्यास निक्षेपादित्वयं विधिः
[2] स्वप्नवासवदत्तम् (भास) प्रथम अंक श्लोक सं010
सुखमन्यत् भवेत् सर्वम् दुःखम् न्यासस्य रक्षणम्
[3] अमर कोष द्वितीय कांड पुमानुपनिधिर्न्यासः
[4] हजारी प्रसाद द्विवेदी (अनामदास का पोथा) भूमिका पृ. 305 क्या किया जाये? न्यास का उत्तरदायित्व आ पड़ा है।

उपन्यास शब्द का व्यवहार किया गया है और उसे निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया गया है –

उपपत्ति कृतेः योर्ध उपन्यासस्तु स स्मृतः।[1]

'दशरूपकम्' में भी प्रतिमुख संधि के बारहवें अंग को उपन्यास नाम से व्यवहृत करते हुए 'प्रसादनमुपन्यासः'[2] कहकर उसकी परिभाषा दी गई हैं। आचार्य भरत ने अपने 'नाट्यशास्त्रम्' में पताका स्थानक के चतुर्थ भेद का नाम भी उपन्यास दिया है।[3]

'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' में प्रियंवदा द्वारा उच्चारित एक वाक्य में तेन ह्यात्मन उपन्यास पूर्वम्, चिन्तम् किमपि ललित पदबन्धम''[4] उपन्यास शब्द का प्रयोग सन्दर्भ के अर्थ में हुआ हैं। 'उपन्यासस्तु वाङ्.मुखम्'[5] कहने वाले अमर कोषकार ने उपन्यास शब्द का अर्थ वाङ्.मुखम् किया है। भारवि ने अपने ग्रन्थ 'किरातार्जुनीयम्' में उपन्यस्यति किया का प्रयोग किया है और उस समय के दो प्रसिद्ध विद्वान टीकाकारों ने उसके तीन अर्थ किये हैं। 'किरातार्जुनीयम्' का निम्नलिखित श्लोक उद्धृत है –

'विषमोऽपि विगाह्यते नमः कृत तीर्थः पयसामिवाशयः।

स तु तत्र विशेष दुर्लभः सदुपन्यस्यति कृत्यवत्य यः।।[6]

---

1 नाट्य शास्त्रम् – भरत मुनि अध्याय 19 श्लोक 79
2 दशमस्कम् – प्रथम प्रकाश श्लोक 35
3 नाट्यशास्त्रम् श्लोक 35 अध्याय19
4 अभिज्ञान शाकुन्तलम् – कालिदास तृतीय अंक
5 अमर कोष – शब्दादि वर्ग 3,4,5 किरातार्जुनीयम् द्वितीय सर्ग तृतीय श्लोक एवं उसकी 'घण्टापथ' तथा 'सुधा' टीका में
6 किरातार्जुनीयम् द्वितीय सर्ग तृतीय श्लोक एवं उसकी 'घण्टापथ' तथा 'सुधा' टीका में

संस्कृत ग्रन्थो के प्रसिद्ध टीकाकार 'भक्तिनाथ' ने अपनी 'घण्टापथ' नाम की टीका में 'उपन्यस्यति का अर्थ 'उदाहरनि'[1] लिखकर उपन्यास का अर्थ उदाहरण माना है। 'श्री गंगाधर मिश्र' कृत 'सुधा' नाम की टीका में 'उपन्यस्यति' के दो अर्थ लिखे गए हैं – प्रथम 'उपदिशति' द्वितीय 'निवेशयति'। इस प्रकार उन्होंने उपन्यास शब्द का अर्थ 'उपदेश तथा 'निवेशन' स्वीकार किया है।[2]

संस्कृत साहित्य के अवगाहन से स्पष्ट है कि आधुनिक समय में प्रचलित अर्थ के रूप में उपन्यास शब्द का प्रयोग किसी संस्कृत ग्रन्थ में प्राप्त नहीं होता। इस अर्थ में इसका सर्वप्रथम प्रयोग हमें बंगला भाषा में प्राप्त होता है। यद्यपि पूर्व में बंगला भाषा में भी उपन्यास शब्द का अर्थ 'उपस्थायन' एवं 'उत्लेख''[3] माना जाता रहा है। परन्तु अपेक्षा कृत नवीन समय में बंगला भाषा में यह शब्द श्रोता व पाठक 'दिनेर चित्त विलेयार्थ कल्पित वृत्तान्त'[4] के अर्थ में व्यवहार में आने लगा था। उपन्यास शब्द का अर्थ अंग्रेजी भाषा के प्रभाव के कारण ही प्रचलित हुआ था क्योंकि अंग्रेजी में इसे 'नावेल' कहा जाता था। अंग्रेजी के 'नावेल' शब्द का अर्थ भी लगभग वही था जो कि बंगला व हिन्दी में उपन्यास का।

---

[1] किरातार्जुनीयम् द्वितीय सर्ग तृतीय श्लोक एवं उसकी 'घण्टापथ' तथा 'सुधा' टीका में
[2] किरातार्जुनीयम् द्वितीय सर्ग तृतीय श्लोक एवं उसकी 'घण्टापथ' तथा 'सुधा' टीका में
[3] सरल बंगला अभिधान
[4] नूतन बंगला अभिधान

उपन्यास की परिभाषा

विभिन्न भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने उपन्यास को अपने – अपने दृष्टिकोण से परिभाषा में बांधने का प्रयत्न किया है। प्रायः सभी ने कुछ न कुछ नवीन विचारों के साथ उपन्यास की परिभाषा दी है। महान भारतीय उपन्यासकार प्रेमचन्द के अनुसार – मैं. उपन्यास को मानव जीवन का चित्र मात्र समझता हूँ।'[1] उपन्यास के मूल तत्वों पर विचार करते हुए प्रेमचन्द ने उपन्यास के मूल तत्व का दिग्दर्शन करते हुए आगे लिखा है – 'मानव – चरित्र पर प्रकाश डालना और उनके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।'[2] बाबू श्यामसुन्दर दास के अनुसार 'उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है।'[3] बृजरत्न दास द्वारा संकलित उपन्यास की परिभाषा भी एकांगी ही प्रतीत होती है। उनका विचार है कि –'उपन्यास जीवन के संघर्षमय चित्र हैं।'[4]

इन परिभाषाओं के सार स्वरूप को ग्रहण करते हुए बाबू गुलाबराय ने उपन्यास की जो परिभाषा दी है वह उपन्यास की सम्भावित परिभाषा के पर्याप्त निकट है। उनके अनुसार– उपन्यास कार्य करण श्रंखला में बँधा हुआ वह गद्य कथानक हैं जिसमें अधिक विस्तार तथा पेचीदगी के साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले

---

[1] कुछ विचार – प्रेमचन्द्र पृ. 38
[2] वही पृ. 38
[3] साहित्यालोचन – श्यामसुन्दर दास पृ. 1)0
[4] हिन्दी उपन्यास साहित्य – बाबू श्यामसुन्दर दास पृ. 32

व्यक्तियों से संबंधित वास्तविक अथवा काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सत्य का रसात्मक रूप से उद्घाटन किया जाता है।[1]

सभी विद्वानों ने अपने – अपने विचारों के अनुसार उपन्यास की परिभाषा देने का प्रयत्न किया है। प्रत्येक विचारक ने उपन्यास को मानव जीवन का वास्तविक चित्र माना है। यह सत्य है कि उपन्यास मानव जीवन का चित्र है। परन्तु क्या उपन्यास की सार्थकता मानव के यथा तथ्यपूर्ण वास्तविक जीवंन की अभिव्यक्ति में ही है? क्या यथार्थ जीवन के अतिरिक्त उपन्यास को और कुछ नहीं चाहिए? ये ऐसे प्रश्न है जो उपन्यास की परिभाषा पर प्रश्न चिन्ह लगाते है। मानव जीवन के शाश्वत उद्देश्य की ओर इंगित करना उपन्यास की परिभाषा की पूर्णता के लिए आवश्यक है।

भारतीय उपन्यास उद्भव एवं विकास

आधुनिक समय में मान्य उपन्यासों के तत्वों से परिपूर्ण उपन्यास का जन्म कब हुआ? इस प्रश्न से पूर्व यह प्रश्न पैदा होता है कि इस वटवृक्ष के समान विस्तृत आधुनिक उपन्यास के बीजांकुर का प्रथम प्रतिरोपण कब और किन परिस्थितियों मे हुआ? उपन्यास का प्रारम्भ तो उसी समय हो गया होगा जब मानव ने अपने परिवारीजनों के साथ भाषा संकेतों का आदान प्रदान किया होगा। तभी कहानी का जन्म हुआ होगा। मानव मन के प्रथम आश्चर्य का भाव ही उसकी अभिव्यक्ति का कारण बना होगा। जब से मनुष्य ने एक दूसरे के पास बैठना सीखा तभी से उपन्यास का जन्म हुआ। जब मानव के ज्ञान की सहगामिता प्रकृति के कौमार्य के पार्श्व में

---

[1] काव्य के रूप – गुलाबराय पृ. 167

डोलने लगी, तब उपन्यास की चेतना ने आँखें खोलीं थीं; जब मानव समाज ने अपनी शैशवावस्था को पार किया था तभी मानव समाज की उत्सुकता के साथ उपन्यास की सगाई हुई थी और जब मनुष्य के अवकाश ने अँगड़ाई ली तभी उपन्यासवृत्ति का गठबंधन जन रुचि के साथ हुआ था जन रुचि का सुहाग अपने में अक्षय है अतः उपन्यास की कृति भी अमर है।

उपन्यास आकस्मिक रूप से सम्पन्न नहीं हो गया इसकी भी अपनी एक परम्परा है जिसका आरम्भ एक बड़ी नदी के उद्गम के समान नन्हीं -- नन्हीं भिन्न धाराओं के रूप में प्राचीन साहित्य के बीच में छिपा है। उपन्यासकार प्रेमचन्द के अनुसार – कहानी का जन्म तो उसी समय हुआ था जब आदमी ने बोलना सीखा।[1]

प्रागैतिहासिक काल में, क्योंकि लिपि का जन्म नहीं हुआ था अतः लोग एक दूसरे के मुख से सुनकर ही कथाओं का स्मरण करते थे। यहाँ तक कि वेदों को भी गुरु शिष्य परम्परा से सुनकर ही स्मरण रखने की परिपाटी थी इसीलिए वेद का नाम श्रुति प्रसिद्ध हो गया। वेदों में 'पुरूरवा' आदि की कथाओं के बीजांकुर प्राप्त होते है। जिन्हें सुविधा के लिए कथा का आविर्भाव स्वरूप माना जा सकता है। कथात्मक साहित्य की सरणि, गद्य काव्य के नाम से ख्यात कथा एवं आख्यायिका शिलालेखों व राजाओं के प्रशस्ति पत्रों के मार्ग को पार करती हुई अंग्रेजी व बंगला भाषा के यत्किंचित प्रभाव से पगे उपन्यास के रूप में काव्य की एक महत्वपूर्ण विधा बन गई है। परन्तु वर्तमान में 'उपन्यास' तथा 'कहानी' प्राचीन कथा तथा 'आख्यायिका' से कुछ

---

[1] कुछ विचार – प्रेमचन्द पृ. 35

सीमा तक स्वतंत्र रचनायें हैं।[1] क्योंकि तत्कालीन कथा के कोष ग्रन्थों में लिखित परिभाषा से आज के उपन्यास का मेल नहीं खाता। हिन्दी विश्वकोष के अनुसार– " प्रबन्ध की बहुमिथ्या एवं अल्प सत्यपूर्ण कल्पना, किस्सा, कहानी तत्व तथा बहस, वार्ता, वाक्य, बात, जुमला, विवरण, बयान, तफ्सील, समालोचना, मजहबी बयान, उपन्यास, विशेषणों कहा जाय, "वही बात कथा है" ।[2]

बैदिक साहित्य में भी कथा कहने की प्रवृत्ति मिलती हैं। उदाहरणार्थ – यम–यमी कथा, पुरूरवा उर्वशी कथा, पाणेसरमा आदि। कथाओं को लेकर ही तो पंचतंत्र, हितोपदेश, शुकसप्तशती, वृहत्कथा, कथासरित्सागर, वृहत्कथा मंजरी आदि रचनायें लिखीं गईं। उपन्यास आज की गद्य शैली का एक अंग है पर यह छन्द के बंधन से मुक्त कथन वृत्ति का काम करता है। प्रारम्भ में उपन्यास को हेय दृष्टि से देखा जाता था किन्तु धीरे – धीरे यह सबको प्रिय लगने लगा और आज उपन्यास इतना अधिक लोकप्रिय हो गया है कि इसके पाठकों की संख्या सब विधाओं से कहीं अधिक है।

आधुनिक उपन्यास ने प्राचीन साहित्य से पाया तो बहुत कुछ है परन्तु केवल इस कुछ पाने के बल पर ही वह आधुनिक उपन्यास के पूर्वज होने का दावा नहीं कर सकता क्योंकि वर्तमान उपन्यास तत्कालीन कथा एवं आख्यायिका की शिल्प–विधि से कहीं भी मेल नहीं खाता। " पुराने ढंग की कथा कहानियों में कथा का प्रवाह अखण्ड गति से एक ओर चल सकता था जिसमें घटनायें पूर्वा पर क्रम से सीधी जुड़तीं चलीं

---

[1] हिन्दी साहित्य कोष – पृ. 140
[2] हिन्दी विश्व कोष – पृ. 677

जातीं थीं पर योरोप में नये ढंग के कथानक नावेल के नाम से चले और बंग भाषा में आथर उपन्यास कहलाये मराठी में वे कादम्बरी कहलाने लगे। वे कथा के भीतर की कोई भी परिस्थिति आरम्भ में रखकर चल सकते हैं और उनमें घटनाओं की श्रंखला लगातार सीधी न जाकर इधर – उधर श्रंखलाओं से गुम्फित होती चलती है। घटनाओं के विन्यास की यही वक्रता या वैचित्र्य उपन्यासों और आधुनिक कहानियों की वह प्रत्यक्ष विशेषता है वे उन्हें पुराने ढंग की कथा कहानियों से अलग करतीं हैं।'[1]

'कहानी और उपन्यास आधुनिक युग की उपज हैं। हमारे प्राचीन साहित्य में ही क्यों विश्व के किसी भी प्राचीन साहित्य में उपन्यास जैसी कोई भी वस्तु नहीं मिलती।'[2]

जापानी महिलाओं द्वारा लिखे गये "मुरास की लोशिकीबू" नामक उपन्यास में उपन्यास का प्रारम्भ 1000 ई0 में स्वीकार किया गया लेकिन उपन्यास के विराट रूप धारण करने का श्रेय उन्नीसवीं शताब्दी को है। इसी समय में ही उपन्यास का वास्तविक विकास योरोप के जागरण के साथ शुरू होता है। इसका स्थान है – इटली। इस युग की प्रारम्भिक रचना इटली के प्रसिद्ध लेखक वोकेशियो की व्यंग्यय प्रधान रचना 'डी कैमरान' है। इसके बाद सन् 1705 ई0 में स्पेन के सखान्ते ने 'इनक्विजोट' नामक रचना लिखी। इसके उपरान्त फ्रान्स के रेबेल ने 'गरगन्तुआ' लिखा। फिर फ्रांस में रोमानी व यथार्थवादी उपन्यास ही लिखे जाते रहे। वैसे तो अंग्रेजी उपन्यास का जन्म सोलहवीं शताब्दी तथा विकास अट्ठारहवीं शताब्दी में हुआ।

---

[1] हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल पृ. 62
[2] बंग साहित्य उपन्यासेर धारा – श्री कुमार बन्धोपाध्याय पृ. 1

इस समय इंग्लैण्ड में अनेक विद्वान हुए – सेम्युअल रिचार्डसन – पामेला (1740), स्मालेट रोडेरिकरेराडम (1748), हेनरी फील्डिंग – टाम जान्स (1749) आदि की रचनाओं से उपन्यास जगत को नयी शिक्षा मिली। इसके बाद तो इंग्लैण्ड में ओलिवर गोल्डस्मिथ, जॉन आस्टिन, सर वाल्टर स्कॉट, चार्ल्स डिकेंस, शार्लट बाराटी, थैकरे और जार्ज इलियट आदि अनेक उपन्याकार हुए। फ्रांस में वाल्टेयर, विक्टर, ह्यूगो,, बालजक, स्टेन्डाल, जार्सेराड, जोला, फ्लावेयर, अनातोले जर्मनी में गेटे, रूस में पुरिकन, गोगोल, लर्मान्तोफ, तुर्गनेव, दास्तावोस्की तथा टालस्टाय जैसी महान प्रतिभाओं ने अपनी अमर कृतियों से उपन्यास साहित्य का चरम विकास किया।[1]

भारतीय भाषाओं में रचित प्रथम मौलिक उपन्यास

भारतीय भाषाओं में बंगला भाषा को ही प्रथम उपन्यास के सृजन का श्रेय प्राप्त है। बंगला लेखकों पर अंग्रेजी के प्रभाव की अतिशयता के कारण बंगला लेखक उपन्यास लिखने की ओर प्रेरित हुए क्योंकि पाश्चात्य भाषाओं में 'नावेल' का प्रणयन बहुत पहले ही हो चुका था और उस काल तक साहित्य की इस विधा का पूर्ण विकास हो चुका था। अतः उसी की तर्ज पर बंगाली लेखकों ने भी उपन्यास का प्रणयन आरम्भ कर दिया था। बंगला भाषा के प्रथम उपन्यास 'असारेर–घरेर–दुलाल' का निर्माण टेकचन्द ठाकुर की लेखनी से सन् 1857 में हुआ। यद्यपि इससे पूर्व भी भवानीचरण बन्धोपाध्याय द्वारा लिखित 'बाबूर उपाख्यान' तथा 'नवबाहु विलास' नामक

---

[1] हिन्दी गद्य साहित्य (शिवदान सिंह चौहान) पृ. 50 उद्धृत आधुनिक हिन्दी उपन्यास (उद्भव और विकास) डा. बेचन पृ. 28

दो गद्य रचनाओं का प्रकाशन क्रमशः सन् 1821 व 1825 में हो चुका था। परन्तु ये दोनों रचनायें उपन्यास की परिभाषा में उचित प्रतीत नहीं होती। बंगला का प्रथम मौलिक उपन्यास 'असारेर – घरेर – दुलाल' को ही माना जाता है।

इसके लेखक ने भी इस उपन्यास की भूमिका में इसे प्रथम मौलिक उपन्यास का नाम दिया है। इसके लगभग आठ वर्ष के बाद बंग भाषा के प्रथम साहित्यिक उपन्यासकार श्री बंकिम चन्द्र चटर्जी के प्रसिद्ध बंगला उपन्यास 'दुर्गेश नन्दिनी' का प्रकाशन सन् 1865 में हुआ। इसके पहले एक ईसाई महिला 'हैना कैथरिन मैंलेंस' ने सन् 1852 में बंगला में एक उपन्यास लिखा जिसका नाम 'फूलमणिओ करुणा' था। सन् 1865 के बाद तो बंगला भाषा में उपन्यासों की बाढ़ सी आ गई स्वयं बंकिम चन्द्र चटर्जी ने ही सन् 1865 से 1887 तक चौदह उपन्यासों का प्रणयन किया।

हिन्दी भाषा का प्रथम मौलिक उपन्यास

लाला श्री निवास दास कृत 'परीक्षा गुरु' को ही हिन्दी भाषा का प्रथम मौलिक उपन्यास माना जाता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार – 'अंग्रेजी ढंग का मौलिक उपन्यास सबसे पहले हिन्दी में लाला श्री निवास दास का 'परीक्षा गुरु' ही मिलता था।[1] इससे पहले श्रद्धाराम फुल्लौरी की कृतियों के परिचय में आचार्य शुक्ल ने कहा है कि 'भाग्यवती नाम का सामाजिक उपन्यास सन् 1834 में उन्होंने लिखा जिसकी बड़ी प्रशंसा हुई।[2] परन्तु आगे चलकर शुक्ल जी ने अपना मत बदल दिया और परीक्षा गुरु

---

[1] हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पृ. 455
[2] वही पृ. 446

को ही हिन्दी का प्रथम मौलिक उपन्यास स्वीकार किया। हिन्दी के अनेक विद्वानों ने 'परीक्षा गुरु' को ही हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना है। डा. श्री कृष्ण दास के अनुसार– 'रणवीर और प्रेम मोहिनी' के पश्चात सन् 1882 में लाला जी का प्रथम उपन्यास 'परीक्षा गुरु' प्रकाशित हुआ जिसे हिन्दी का भी प्रथम उपन्यास कहा जा सकता है। अम्बिका द.त व्यास ने 'गद्य काव्य मीमांसा' के अंत में कुछ उपन्यासों के नाम और प्रकाशन तिथि दी है जिसके अनुसार 'परीक्षा गुरु' ही हिन्दी का प्रथम उपन्यास ठहरता है। इससे पूर्व भी दो उपन्यास ग्रन्थों की रचना का उल्लेख प्राप्त होता है – एक पंजाब के श्रद्धाराम फुल्लौरी का 'भाग्यवती' और दूसरा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र कृत 'पूर्ण प्रकाश और चन्द्र प्रभा' परन्तु पिछली कृति गुजराती से हिन्दी अनुवाद मात्र है जिसे मल्लिका देवी ने अनुवादित किया था और भारतेन्दु ने उसे पोसा था। 'भाग्यवती' यदि मौलिक रचना है तो उसे निश्चय ही हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना जा सकता है परन्तु हिन्दी का प्रथम सफल और मौलिक उपन्यास 'लाला श्री निवास दास' का 'परीक्षा गुरु' ही है जिसका भारतेन्दु हरिश्चन्द ने 'रणवीर और प्रेम मोहनी' का सहोदर कहकर स्वागत किया था।[1]

डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी के मत से भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हिन्दी के प्रथम उपन्यासकार हैं। उनका कहना है कि 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'पूर्ण प्रकाश और चन्द्र प्रभा' नाम का सर्वप्रथम सामाजिक उपन्यास लिखा था।[2] परन्तु डा. श्री कृष्ण लाल के

---

[1] श्री निवास ग्रन्थावली सम्पादक (डा. श्रीकृष्ण लाल) पृ. 11
[2] हिन्दी साहित्य (हजारी प्रसाद द्विवेदी) पृ. 415

अनुसार – यह गुजराती भाषा से[1] तथा डा. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय के अनुसार यह मराठी भाषा [2] से अनूदित हे। डा. श्री कृष्ण लाल के अनुसार – यह अनुवाद भी भारतेन्दु जी का किया हुआ नहीं अपितु मल्लिका देवी द्वारा किया हुआ है। भारतेन्दु जी ने तो उस अनुवाद का केवल संशोधन किया था परन्तु विजय शंकर मल्ल के अनुसार – उन्होंने स्वयं एक उपन्यास लिखना शुरू किया था, यह अधूरा उपन्यास 'कुछ आप बीती कुछ जग बीती' है जिसमें उन्होंने जैसे 'परीक्षा गुरु' की सांकेतिक भूमिका ही प्रस्तुत कर दी है।"[3] यद्यपि इस कृति में उपन्यास के सभी गुण विद्यमान हैं परन्तु आलोचकों ने इसे उपन्यास नहीं माना है। सम्भवतः इसका कारण इसका अधूरा होना है। अस्तु निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि हिन्दी का सर्वप्रथम मौलिक उपन्यास 'परीक्षा गुरु' ही है।

---

[1] श्री निवास ग्रन्थावली – पृ. 11
[2] आधुनिक हिन्दी साहित्य (लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय) पृ. 102
[3] आलोचना (उपन्यास विशेषांक) पृ. 65

अमृत लाल नागर का रचना संसार

अमृत लाल नागर ने जीवन की गहराइयों में उतरकर कुछ मोती निःसृत किए और इन्हीं मोतियों को नागर जी ने अपनी कृतियों में संजो दिया है। नागर जी ने जिस तरह से जीवन में घटित होने वाली एक – एक घटना को वाणी प्रदान की है। उससे ऐसा अनुभव होता है जैसे उन सारी घटनाओं को उन्होंने बहुत सामीप्य से समझा, परखा और अनुभव किया है। उनकी कृतियों की एक – एक घटना हृदय पर अमिट छाप छोड़ती चली जाती है। नागर जी की लेखनी ने 13 वर्ष की उम्र से ही लिखना प्रारम्भ कर दिया था उनकी पहली कहानी 'प्रायश्चित' मात्र 15 वर्ष की उम्र मे लिखी गई तब से निरन्तर उनकी लेखनी हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि करती हुई आगे ही बढ़ती गई। नागर जी की अपनी विलक्षण प्रतिभा के बल पर हिन्दी के साथ – साथ समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास, पुराण, पुरातत्व आदि विषयों में उनकी गहरी पैठ थी। बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी इस कुशल साहित्यकार की लेखनी ने कहानी, उपन्यास, नाटक, रेखाचित्र, संस्मरण, रिपोर्ताज, व्यंग्य रचनाओं आदि के क्षेत्र में कालजयी रचनायें हिन्दी जगत् को दीं हैं। उनके व्यक्तित्व में व्यक्ति और साक्षात्कार का मेल देखते ही बनता है।

जीवन को मुक्त हृदय और मुक्त मन से जीने वाले साहित्यकारों में उनका नाम अग्रणी रहेगा। आज नागर जी की लेखनी से जितना कुछ भी प्रकाश में आया है " वह एक आइस वर्ग के समान है जितना दृष्टिपथ में है, उससे कई गुना पथ से बाहर।"[1]

पुरातत्व के प्रति नागर जी की अपार दिलचस्पी है और उन्होंने पुरातत्व संबंधी बहुत सी अनुपलब्ध सामग्री भी एकत्र की है। एक छोटा मोटा संग्रहालय ही उन्होंने अपने घर में स्थापित किया है। पुरातत्व के विषय में अपनी रुचि के बारे में लिखते हैं–

पुरातत्व से सीधा लगाव सन् 1956 में अपने घर के पास ही लक्ष्मण टीले में मौर्य काल तथा उससे भी कुछ पहले की वस्तुएं पाकर हुआ।[2] अपनी रुचियों के बारे में लिखते हुए वे स्वतः कहते हैं – "लिखने पढ़ने के समय तो बात ही न्यारी है, यों भी चाहे बच्चों के साथ खेलूँ। नाटकों का रिहर्सल कराऊँ, चाहे पुरातत्व की झोंक में टीले या खण्डहर झाँकूँ या गली कूचों में बड़ी – बूढ़ियों से, बूढ़े तजुर्बेकारों से इण्टरव्यू लेता घूमूँ। कमोबेश हर काम में अपना प्राण स्पर्श कराने का अब अभ्यस्त हो गया हूँ। इसी की मस्ती है, बदमस्ती तनिक भी नहीं।[3]

मानव जीवन की व्यापक भूमियों को समेटने वाला नागर जी का व्यक्तितत्व सच पूछा जाये तो एक उन्मुक्त और जीवन्त कथा लेखक का व्यक्तित्व है। उनका व्यक्तित्व उन्मुक्त इस अर्थ में है कि सामान्यतः वह दकियानूसी और अभिजात्य उनमें नहीं जो उन्हीं के समानधर्मी हिन्दी के कुछ प्रसिद्धि प्राप्त लेखकों में पाया जाता है। वे जैसा जो

---

[1] नीरक्षीर – अमृतलाल नागर अंक में श्री ज्ञानचन्द जैन का लेख पृ. 47
[2] नागर जी द्वारा दिए गए हस्ताक्षर युक्त लिखित इण्टरव्यू से
[3] नीर क्षीर -- अमृत लाल नागर अंक पृ. 5

कुछ हैं अत्यन्त सहज और स्पष्ट है। अपने बारे में वे खुद कहते हैं – सब मिलाकर यों तो बहुत मैं खुशरंग हूँ पर अपने बदरंग भी नजर आते हैं। मैं पत्थर पर उकेरी गई मूर्ति हूँ जो कहीं–कहीं अनगढ़ टूट गई हो ऐसी कि बुरी न लगे .... देखते ही किसी को भी विश्वास हो जायेगा कि आदमी भला और शरीफ है। लेकिन आइने के सामने जो मुख देखा आपना मुझ सा बुरा न कोय।[1]

नागर जी का जीवन संघर्षशील रहा है। विषम परिस्थितियों सें संघर्ष और अप्रतिहत जिजीविषा नागर जी के ईमानदार और निष्ठावान लेखक व्यक्तित्व की प्रधान विशेषताएं है। उन्होंने अपने जीवन में इतना भोगा है कि अब जीवन की असफलताएं उन्हें इतना निराश नहीं करतीं इसे ही उन्होंने यों स्पष्ट किया है – 'मैं उस चींटी की तरह हूँ जो बार – बार गिरने के बावजूद चढ़ती है। हार जीत की बाजी प्राणों को उमंग देकर लड़ाती तो है पर हार अब उतना निराश नहीं करती। दर्द का हद से गुजरना है दबा हो जाना यह उक्ति सच्ची है।"[2]

नागर जी में महत्वाकाक्षायें भी हैं। मगर वे महत्वाकांक्षायें हैं क्या? –'मेरी एक तमन्ना जरूर है कि एक दिन अपनी किताबों की रायल्टी पर ही निर्वाह करने लायक बन जाऊँ, जी चाहने पर किताबें खरीद सकूँ, घूम सकूँ .... मुझे अपनी किताबों की आमदनी, पत्र–पत्रिकाओं से फुटकर रचनाओं का आया हुआ पैसा जैसा गर्व भरा संतोष देता है वैसा और कोई धन नहीं .... सच पूछो तो बस एक ही साध है – लिखते – लिखते कलम से कोई ऐसी चीज निकल जाए कि मैं सदा के लिए इन्सान

---

[1] नीर क्षीर – अमृत लाल नागर अंक पृ. 5
[2] नीर क्षीर – अमृत लाल नागर अंक – पृ. 5

के दिल में जगह पा लूँ। इस लगन का रंग गुलाबी या हल्का लाल नहीं बल्कि गहरा लाल है – खून का रंग।"[1]

डा. राम विलास शर्मा ने नागर जी की इस महत्वाकांक्षा को, यदि उसे महत्वाकांक्षा कहा जाय – " हौसलापस्त लोगों का हैासला "[2] कहा है।

समग्रतः नागर जी का व्यक्तित्व एक लेखक की दृष्टि से ईमानदार सच्चे भारतीय लेखक का व्यक्तित्व है। जिसमें कुण्ठाएं कहीं भी नहीं है। यह एक ऐसी लगन है जो उसे नई – नई ऊँचाइयों की ओर अग्रसर कर रहीं है। यह उस लेखक का व्यक्तित्व है जो जितना गरिमा के प्रति सचेष्ट है, उतना ही सामाजिक दायित्व के प्रति भी। उसके साथ एक सजीव जनता भी है, उसकी परम्पराएं हैं, उसकी आशायें, उसकी शक्ति, उसके संकल्प, उसके विश्वास और उसकी असंगतियां भी हैं। उसके पास वह आस्था है जिसके प्रकाश में वह अंधकार के बीच भी अपनी सही पहचान बना लेता है। यही आस्था उसे जीवन के सारे विष को बरदाश्त करके भी उसके अमृत तत्व के प्रति समर्पित किए हुए है।

मौलिक प्रतिभा तथा सूक्ष्म पर्यवेक्षण – शक्ति सम्पन्न गहन जीवन दृष्टा नागर जी की साहित्य और कला की विविध विधाओं में रुचि आरम्भ से ही रही है। उनके बहुमुखी व्यक्तित्व की तरह उनका कृतित्व भी वैविध्यमय होकर सामने आया है। लेखक के रूप में नागर जी सम्पादक, पत्रकार सिनेरियो, लेखक, पटकथा व संवाद लेखक, रेडियो नाटककार, उपन्यासकार, कहानीकार, बाल साहित्य प्रणेता तथा असंख्य

---

[1] नीर क्षीर – अमृत लाल नागर अंक – पृ. 6
[2] नीर क्षीर – अमृत लाल नागर अंक – पृ. 33

लेखो–निबन्धों, संस्मरणों के लेखक, व्यंग्य वार्त्ताकार तथा अनुवादकर्त्ता के रूप में सामने आते हैं। नागर जी के इन विविध साहित्यिक रूपों ने उनके कथाकार व्यक्तित्व को निखारा और संवारा है। यद्यपि नागर जी का साहित्यिक व्यक्तित्व बहुमुखी है पर आज का पाठक नागर जी को उपन्यासकार के रूप में ही अधिक पहचानता है। नागर जी की साहित्य सर्जना का कीर्ति– स्तम्भ उनका उपन्यास साहित्य है। नागर जी ने साहित्य – सृजन की दृष्टि से मुख्यतः उपन्यास का क्षेत्र ही क्यों चुना? उसे उन्होंने एक भेंटवार्ता में स्वयं स्पष्ट किया है। वे कहते हैं – यदि मैं कवि अथवा आलोचक बनता तो बात समझ में आती क्योंकि मेरे बचपन का परिवेश बहुत कुछ अंशों में इसके अनुकूल था, पर बना कथाकार। यों तो इस सन्दर्भ में कुछ सोचता नहीं पर जब सोचता हूँ तो स्पष्ट कारण भी नहीं सूझता। सम्भव है कथा साहित्य की विशेषताओं ने ही मुझे कथाकार बना दिया हो। जीवन को जितनी गहराई से कथा–साहित्य में उभारा जा सकता है उतना किसी अन्य विधा में नहीं।"[1] नागर जी ने प्रथम उपन्यास 'महाकाल' सन् 1943 में लिखा था, से लेकर जीवन पर्यन्त वे उपन्यास सृजन में सक्रिय रहे है और कुछ–कुछ वर्षो के अन्तराल से वे एक के बाद एक उपन्यास प्रकाशित करते रहे हैं। बूँद और समुद्र, सुहाग के नूपुर, अमृत और विष, मानस का हंस और नाच्यौ बहुत गोपाल तो उनकी प्रसिद्धि के स्थायी स्तम्भ है।

नागर जी के प्रकाशित उपन्यास इस प्रकार हैं -- महाकाल (1947), सेठ बाँकेमल (1955), बूँद और समुद्र (1956), शतरंज के मोहरे (1958), सुहाग के नूपुर (1960), अमृत और विष (1966), सात घूँघट वाला मुखड़ा (1968), एकदा नैमिषारण्ये

---

[1] आज रविवासरीय विशेषांक , 19 अगस्त 1979

(1971), मानस का हंस (1972), नाच्यौ बहुत गोपाल (1978), खंजन–नयन(1981), बिखरे तिनके (1982), अग्निगर्भा (1983), करवट (1985), पीढ़ियाँ (1990) हैं। इन औपन्यासिक कृतियों के अतिरिक्त नागर जी ने बजरंगी नौरंगी (1972), बजरंगी पहलवान (1969), बजरंगी स्मगलरों के फन्दे में (1972), शीर्षक से तीन बाल उपन्यासों की रचना की है।

रिपोर्ताज, जीवनी एवं संस्मरण

गदर के फूल (1957), ये कोठेवालियाँ (1960), जिनके साथ जिया (1973), चैतन्य महाप्रभु (1978), टुकड़े – टुकड़े दास्तान (1986), साहित्य और संस्कृति (1986)

कहानी-संग्रह

वाटिका (1935), अवशेष (1938), तुलाराम शास्त्री (1941), आदमी नहीं ! नहीं! (1947), पांचवा दस्ता (1948), एक दिल हजार दास्ताँ (1955), एटमबम (1955), पीपल की परी (1963), कालदंड की चोरी (1967), मेरी प्रिय कहॉनियाँ (1970), पाँचवा दस्ता और सात अन्य कहॉनियाँ (1970), भारत पुत्र नौरंगी लाल (1970), सिकन्दर हार गया (1984), एक दिल हजार अफसाने (1986)

हास्य और व्यंग्य

नबाबी मसनद (1939), सेठ बांकेमल (1955), कृपया दाएं चलिए (1972), हम फिदा–ए–लखनऊ (1973), मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं (1985), चकल्लस (1986)

इसके अतिरिक्त नागर जी ने रेडियो नाटकों, और बाल साहित्य की रचना भी पर्याप्त मात्रा में की हैं। बहुत से लेखों और निबन्धों के साथ कुछ विदेशी भाषा की रचनाओं के भी अनुवाद किए हैं, जिनमे फ्लोवेयर की प्रसिद्ध कृति ' मादाम बाबेरी ' का हिन्दी भावानुवाद महत्त्वपूर्ण है। नागर जी ने चेखव, मोपासां, फ्लावेयर आदि लेखकों की कुछ कहानियों के अनुवाद किये हैं।

वस्तुतः नागर जी के सृजन के ये विविध आयाम हैं उनका समस्त विविधतापूर्ण कृतित्व उनकी बहुमुखी प्रतिभा, बहुरंगी व्यक्तित्व और व्यापक जीवन अनुभवों का ही प्रतिफलन है। उनकी इतनी विशाल, विविधतापूर्ण एवं भव्य प्रेरणाओं से युक्त साहित्यक रचनाएं उनके मौलिक चिंतन और शैली – शिल्प की प्रौढ़ता का परिचय देतीं हैं। अपनी अप्रतिहत श्रम शक्ति और सामर्थ्य से नागर जी ने जीवन के अन्तिम क्षणों तक साहित्य सृजन का कार्य किया।

नागर जी के उपन्यासों की संक्षिप्त कथावस्तु निम्न है –

महाकाल

महाकाल सन् 1947 में प्रकाशित श्री अमृत लाल नागर जी का प्रथम उपन्यास है। यह बंगाल के अकाल की हृदयद्रावक पृष्ठभूमि में लिखा गया है। इसका शीर्षक परिवर्तन कर देने के कारण अब यह 'भूख' नाम से जाना जाता है। सन् 1943 में बंगाल में जो भयानक दुर्भिक्ष पड़ा वह एक साधारण घटना न थी। इतिहास इस बात का साक्षी है कि यह दुर्भिक्ष प्रकृति देन न होकर मनुष्यकृत था। भारतवर्ष के तत्कालीन

अंग्रेज शासकों ने देशी सामन्तवाद तथा पूँजीवाद से साँठ – गाँठ करके किस प्रकार चालीस लाख प्राणों का यह नरमेध रचाया? इस तथ्य को स्व. पं० जवाहर लाल नेहरू ने भी अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इण्डिया' नामक पुस्तक में लिखा है।

'महाकाल' उपन्यास की कथावस्तु के माध्यम से लेखक ने बंगाल के अकाल को और तत्सम्बन्धी सारी आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक एकता को विविधता के साथ प्रस्तुत किया है। अकाल सम्बन्धी उनका चिंतन कृति में पूरी तरह मुखर है। प्रस्तुत उपन्यास अकाल की वस्तु स्थिति के साथ – साथ व्यापक परिप्रेक्ष्य में उसकी सारी विनाश मूलक परिस्थितियों का विवेचन करता है। व्यक्ति और समाज का पार्थक्य, व्यक्ति की खुदगर्जी, दास मनोवृत्ति, अहंकार, वर्ग विषमता आदि वे कारण हैं जिन्हें नागर जी ने आज के युग की विभीषिका का उत्तरदायी माना है। उन्होंने एक कलाकार की सम्पूर्ण निष्ठा के साथ कला के आवरण में इन कारणों को प्रस्तुत करते हुए एक सजीव कथानक तथा सफल चरित्र सृष्टि के माध्यम से अपने उद्देश्य को प्राप्त किया है। 'महाकाल' उपन्यास नागर जी की लेखकीय क्षमता का एक उत्कृष्ट प्रमाण है। पहली रचना होने पर भी नागर जी के कृतित्व मे इसका महत्वपूर्ण स्थान है।

सेठ बाँकेमल

' सेठ बाँकेमल ' 'महाकाल' के पश्चात नागर जी का दूसरा उपन्यास है। हिन्दी के कतिपय समीक्षकों ने नागर जी के इस उपन्यास को प्रयोगात्मक उपन्यास कहा है क्योंकि नागर जी ने इस उपन्यास में उपन्यास लेखन की परम्परागत पद्धति से हटकर

अभिव्यक्ति का नया रूप उपस्थित किया है। यह उपन्यास बातचीत की शैली में लिखा गया है। उसका अधिकांश सेठ बाँकेमल नामक पात्र से सम्बन्धित है जो उपन्यास का मुख्य पात्र है। हास्य और व्यंग्य के साथ सामाजिक सोद्‌देश्यता का गहरा समन्वय नागर जी की इन कृतियों की वह उल्लेखनीय विशेषता है जो इन्हें सस्ते प्रकार की हास्य – व्यंग्य रचनाओं से सहज ही अलग कर देती है। 'सेठ बांकेमल' उपन्यास के हास्य – व्यंग्य का महत्वपूर्ण सामाजिक सन्दर्भ ही है, जो उसे विशिष्टता देता है।

उपन्यास के क्षेत्र में 'सेठ बांकेमल' उनके हास्य–व्यंग्य शैली का नूतन शिल्प प्रयोग है। उपन्यास – लेखन की परम्परा के अनुसार धारावाहिक कथा और सुनियोजित चरित्र के स्थान पर इसमें छोटे – छोटे रोचक प्रसंगों और किस्से कहानियों के माध्यम से उपन्यास का ताना बाना बुना गया है। इन प्रसंगों का संबंध 'सेठ बाँकेमल और उनके स्वर्गीय मित्र 'पारस नाथ चौबे' से है। सेठ बाँकेमल अपनी दुकान पर बैठकर स्वर्गीय मित्र पारसनाथ चौबे और अपने अतीत जीवन के संस्मरण छोटे – छोटे किस्सों के रूप में चौबे जी के पुत्र को सुनाते रहते हैं। नागर जी ने आत्मकथात्मक शैली में इन संस्मरणों को शब्दबद्ध किया है।

इस उपन्यास के किस्सों की सजीवता और इन किस्सों में से झाँकता हुआ मिटते सामंतवादी जीवन का यथार्थ कथावस्तु का सबसे आकर्षक पक्ष है। किस्से भले ही कपोल कल्पित हों कोरी गप्पों पर आधारित हों, परन्तु इस कपोल कल्पना तथा गप्पों के मूल में निहित बीते हुए सामाजिक जीवन के यथार्थ को भुलाया नहीं जा सकता। मीठी चुटकियाँ लेने में भी नागर जी उस्ताद हैं और वस्तुतः यथार्थ का एक बड़ा अंश

वे इस माध्यम से भी उभारते हैं। नागर जी की यह कला भी इस उपन्यास में पूरी विविधता के साथ प्रत्यक्ष हुई है। नागर जी की 'नबाबी मसनद' कृति की भूमिक में डा0 राम विलास शर्मा ने लिखा था – "............... गप्प लिखना भी एक आर्ट है और कल्पना की तगड़ी कसरत पर निर्भर है। लेकिन ये गप्पें सब कल्पना पर निर्भर नहीं, यथार्थ की इनमें ऐसी तगड़ी बैकग्रउण्ड है कि गप्प मारने वालों पर आप कभी शक नहीं कर सकते। सभी पात्र अपनी विशेषताएं लिए सचित्र और विचित्र पाठक के सामने उपस्थित होते हैं।[1] राजेन्द्र यादव ने नागर जी की हास्य व्यंग्य क्षमता की तुलना प्रख्यात रूसी कथाकार चेखव से की है। "सामन्तवाद की सिमटती–समाप्त होती हुई, संस्कृति, भाषा, बोली और समग्रतः वह जीवन, नागर जी के कथाकार का प्रिय विषय रहा है। उसका अध्ययन उन्होंने बड़ी लगन और फुरसत से किया है, बड़े स्नेह और चाव से उसकी बातें सुनीं हैं। नागर जी को मैं इसीलिए भारत का अद्वितीय हास्य लेखक मानता हूँ कि वे कभी हास्यास्पद परिस्थितियाँ नहीं गढ़ते। उनका हास्य एक विशेष संस्कृति और समाज में पली मानसिकता और मनोविज्ञान की वह मजबूरी है, जिस पर हम हँसते हैं। लेखक को हँसने पर कोई आपत्ति नहीं हैं, लेकिन वह मजबूरी से सहानुभूति रखता है इसलिए खुद नहीं हँसता। चेखव से जहाँ नागर जी की बहुत सी बातें मिलतीं हैं, वहाँ हास्य का यह तरीका भी मिलता है।[2]

---

[1] नबाबी मसनद – राम विलास शर्मा भूमिका पृ. 2

[2] डा0 देवीशंकर अवस्थी, विवेक के रंग – दो आस्थाएँ शीर्षक लेख राजेन्द्र यादव पृ. 258

बूँद और समुद्र

प्रस्तुत उपन्यास 'महाकाल' और सेठ बाँकेमल के पश्चात नागर जी का यह तीसरा महत्वपूर्ण उपन्यास है। यह उत्तर भारतीय जनजीवन से संबंधित एक बृहद उपन्यास है, जिसमें उपन्यासकार ने समुद्र रूपी समाज में बूँद रूपी व्यक्ति के अस्तित्व का महत्त्व आँकने का प्रयत्न किया है हर बूँद का महत्त्व है क्योंकि वही तो अनन्त सागर है, एक बूँद भी व्यर्थ क्यों जाए? उसका सदुपयोग करो।[1] प्रस्तुत उपन्यास में नागर जी ने जिस व्यापक सामाजिक जीवन का चित्रण किया है वैसा व्यापक चित्रण उनके पूर्व के उपन्यासों में नहीं मिलता। सामाजिक जीवन के साथ – साथ व्यक्ति जीवन और युग जीवन को नागर जी ने अत्यन्त गहराई में जाकर प्रस्तुत किया है। अपने इस विशाल सामाजिक जीवन के चित्रण के कारण तथा व्यक्ति व युग जीवन के यथार्थ को उसकी अधिकांश सम्पन्नता में प्रस्तुत करने के कारण इस उपन्यास को हिन्दी के लगभग प्रत्येक मान्य समीक्षक ने नागर जी के उपन्यासकार की बहुत बड़ी उपलब्धि के रूप में स्वीकार किया है। कतिपय समीक्षकों ने इसे क्लैसिकल परम्परा का उपन्यास माना है और कुछ ने इसे महाकाव्यात्मक भूमिका का उपन्यास कहा है।[2] हिन्दी समीक्षकों का बहुमत इसे आंचलिक कोटि में रखने का आग्रही है।

डा0 राम विलास शर्मा ने इसके व्यापक सामाजिक चित्रण की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि – " बूँद और समुद्र पुरानी समाज व्यवस्था के बनते – बिगड़ते और

---

[1] बूँद और समुद्र पृ. 388

[2] (क) आस्था और सौन्दर्य – डा0 राम विलास शर्मा पृ. 134

(ख) विवेक के रंग – दो आस्थाएँ – राजेन्द्र यादव पृ. 251

बदलते हुए भारतीय परिवार का महाकाव्य है।"[1] तथा जितना सामाजिक अनुभव संचित है वह इसे अपने ढंग का विश्वकोष बना देता है।[2] विश्वम्भर 'मानव ने इसमें 'समाज व्यक्ति के अटूट संबंध की कहानी' स्वीकार किया है।[3]

लेखक ने इस उपन्यास के संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि उपन्यास के क्षेत्र के रूप में मैंने लखनऊ और उसमें भी खासतौर पर चौक को ही उठाया है। यह इसलिए कि नागरिक सभ्यता की परम्परा देखने में, बोली बानी का रंग घोलने में मुझे सबसे अधिक सुभीता यहीं हो सकता है। जिन गलियों में मेरे उपन्यास की घटनाएँ घटी हैं वे गलियाँ हू–बहू लगने पर भी लखनऊ के वास्तविक चौक में ढूँढे नहीं मिलेंगी। एक तरफ जहाँ शहर का असलीपन दर्शाने के लिए मैने यहाँ के अनेक नए–पुराने नागरिकों, अखबारों, संस्थाओं और स्थलों के वर्णन किए हैं, यही नहीं, बल्कि कथा – क्षेत्र के काल में नगर में होने वाली बहुत सी घटनाओं का जिक्र किया है, वहाँ ही सारा चित्रण कहानी से गुंथ कर बेलौस भी है।[4]

श्री राजेन्द्र यादव इसे महाकाव्यात्मक रूप में स्वीकार करते हुए लिखते हैं – 'गोदान' के बाद 'बूँद और समुद्र' को उत्तर भारतीय जीवन का दूसरा महाकाव्य कहा जा सकता है।[5] इस उपन्यास के महत्त्व का आकलन करते हुए श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी कहते हैं – 'नागरिक जीवन के केन्द्र मुहल्ले को लेकर इतना सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक

---

1 आलोचना पृ. 82 ले. डा. राम विलास शर्मा
2 आलोचना पत्रिका सं0 20 पृ. 93
3 उपन्यासकारों के बीच प्रेमचन्द पृ. 23 – विश्वम्भर मानव
4 बूँद और समुद्र ('पाठकों से') उद्धत ले. अमृत लाल नागर
5 देवीशंकर अवस्थी, 'विवेक के रंग' दो आस्थाएँ – राजेन्द्र यादव पृ. 251

अध्ययन अभी तक नहीं हुआ। सच तो यह है कि एक विशेष क्षेत्रीय जीवन को उभारने की दृष्टि से हिन्दी में जो उपन्यास लिखे गये हैं उनमें नागर जी की कृति शीर्षस्थ है।[1]

प्रस्तुत उपन्यास अपने आकार प्रकार में अत्यन्त वृहत् हैं और आकार – प्रकार में ही नहीं अपनी वस्तु में भी पर्याप्त सम्पन्न है। बूँद तथा सरिताओं के समान छोटी बड़ी कथाओं, रेखाचित्रों तथा संबद्ध प्रसंगों की तमाम धारायें मिलकर उपन्यास के उद्देश्य रूपी महासागर को सम्पन्न करतीं हैं। प्रमुख तथा गौण सभी कथाओं का उपन्यास के प्रयोजन से कहीं न कहीं संबंध हैं और सब प्रायः किसी न किसी रूप में प्रायः एक दूसरे से सम्बन्धित हैं।

प्रस्तुत उपन्यास का शीर्षक प्रतीकात्मक है। बूँद व्यष्टि का प्रतीक है और समुद्र समष्टि का, इन दोनों के समन्वय की समस्या ही इस उपन्यास का दृष्टिकोण है। नागर जी लिखते हैं – व्यक्ति अवश्य रहे, पर उसके व्यक्तिवादी चिंतन में भी सामाजिक दृष्टिकोण का रहना अनिवार्य हैं । मैं अकेला भी हूँ पर बहुजन के साथ भी हूँ दुःख, सुख, शान्ति, अशान्ति आदि व्यक्तिगत अनुभव हैं, पर ये समाज में प्रत्येक व्यक्ति के हैं। अतएव हमें मानना चाहिए कि समाज एक है – व्यक्ति तो अनेक हैं।[2] किन्तु जहाँ व्यक्ति और समाज दोनों दोषपूर्ण हैं[3] वहाँ एक समस्या है जिसका समाधान बाबा रामदास ने करते हुए वनकन्या से कहा है – 'हर बूँद का महत्व है

[1] डॉ. राम स्वरूप चतुर्वेदी – हिन्दी नव लेखन, पृ. 118
[2] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर पृ. 603
[3] वही पृ. 452

क्योंकि वही तो अनन्त सागर है एक बूँद भी व्यर्थ क्यों जाय।'[1] वे आगे कहते हैं – कैसे हो यह सदुपयोग? कैसे यह बूँद अपने आपको महासागर अनुभव करे। उसके चारों ओर सागर सीमा बांधकर लहरा रहा है और वह एक बूँद सागर से अलग रेत में घुलती चली जा रही है .... हर व्यक्ति आमतौर पर इसी तरह अपनी बहुत छोटी–छोटी सीमाओं में रहता हुआ एक दूसरे से अलग है। बूँद अगर बूँद से शिकायत करती है, तो उनसे कहीं अलगाव भी अवश्य रखती है। तब यह सागर कैसे है? जिससे हर बूँद अलग है। व्यक्ति यदि इतना अलग है, तो समाज बँधता क्यों कर है? यह विरोधाभास लेकर मानव का सामूहिक जीवन चल ही कैसे सकता है? बूँद का उपयोग हो कैसे?[2]

लेखक ने इस समस्या का समाधान सज्जन से अंत में कराने का प्रयास किया हैं –

''मनुष्य का आत्म विश्वास जगना चाहिए, उसके जीवन में आस्था जगनी चाहिए। मनुष्य को दूसरे के सुख–दुःख में अपना सुख–दुःख मानना चाहिए विचारों में भेद हो सकता है, विचारों के भेद स्वरूप स्वस्थ्यद्वन्द्व होता है और उससे उत्तरोत्तर उसका समन्वयात्मक विकास भी। पर शर्त यह है कि सुख–दुःख में व्यक्ति का व्यक्ति से अटूट संबंध बना रहे – जैसे बूँद से बँद जुड़ी रहती है, लहरों से लहरें। लहरों से समुद्र बनता है – इस तरह बूँद से समुद्र समाया है।[3]

---

[1] वही पृ. 388 – 89

[2] वही

[3] बूँद और समुद्र पृ. 606 – अमृत लाल नागर

नागर जी की भाषिक संरचना पर टिप्पणी करते हुए डा. राम विलास शर्मा ने लिखा हैं – लिग्विस्टिक सर्वे भाषा विज्ञान की सामग्री का अद्‌भुत पिटारा है अभी तक किसी भी देशी – विदेशी भाषा में एक नगर की बोलियों का निर्देशन करने वाला ऐसा उपन्यास मेरे देखने में नहीं आया। इन शैलियों में भाषा और समाज का इतिहास बोलता हे।[1]

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि बूँद और समुद्र 'नागर जी' की एक विशिष्ट रचना है यह उपन्यास न केवल नागर जी की कीर्ति का महत्वपूर्ण आधार है बल्कि इससे हिन्दी उपन्यास और भी सम्पन्न हो गया है। औपन्यासिक अनुभवों में यह उपन्यास बहुत कुछ नया और विलक्षण जोड़ जाता है जिसकी मानवीय सार्थकता असंदिग्ध है।

शतरंज के मोहरे

'शतरंज के मोहरे' (1958) नागर जी का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें नागर जी ने अवध राज्य के सामाजिक तथा राजनैतिक घटना चक्र के माध्यम से 19 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। 1968 में इसके तीसरे संस्करण की भूमिका में उन्होंने यह बताया – इस उपन्यास की रचना वस्तुतः मैने अपने एक प्रस्तावित गदर कालीन उपन्यास की पूर्व पीठिका के रूप में की थी।[2] उस उपन्यास में नागर जी के द्वारा राजे – नबाबों की हृासशील जिंदगी और उनके द्वारा पोषित,

---

[1] आस्था की समस्या, आलोचना अंक 20, पृ. 83 डा. राम विलास शर्मा
[2] आज रविवासरीय विशेषांक 19 अगस्त 1979

पल्लवित संस्कृति का जो चित्र इस उपन्यास में अवध की नबाबी को केन्द्र में रखकर प्रस्तुत किया गया है, उसका संबंध खास अवध प्रदेश से नहीं, समूचे भारत के राजा – नबाबों की पतनशील जिंदगी तथा उनके द्वारा पैदा की जाने वाली विकृति से है। यह वह समय था जब कि सामन्तों, राजा – नबाबों के निकम्मे शासन के नीचे जन सामान्य का जीवन दुःखों से भरा हुआ बड़ा ही कष्टकारी था। लेखक ने इन सारी परिस्थितियों को बड़ी ही कुशलता के साथ उपन्यास में दर्शाया है। इसमें नागर जी ने अवध के नबाबी शासन की 1820 ई. से लेकर 1837 ई. तक (गाजीउद्दीन हैदर और नसीरुद्दीन हैदर का शासन काल) की जिन घटनाओं एवं परिस्थितियों का चित्रण किया है वे शायद ही किसी अन्य ग्रन्थ में उपलब्ध हो सके। इस कृति में साहित्य और समाज का अद्भुत सम्मिलन हुआ है।

नागर जी ने 1857 की क्रान्ति को सैनिक क्रान्ति न मानकर भारतीय जनता का आन्दोलन माना है। "कारण गदर अंग्रेजों की सेना में हुआ, क्रान्ति अवध, बुन्देलखण्ड और बिहार के किसानों और स्त्रियों में। गदर में सामन्तों को नेताशाही का अंत हुआ, उसे पूरे रंग में देखना मैने आवश्यक समझा इसलिए कथा का सूत्रकाल उस काल में उठाया है जब शाह अवध के बेटे नसीरुद्दीन के बेटा पैदा हुआ।[1]

इस उपन्यास में नागर जी ने ह्रासशील अवध का नबाबी शासन तंत्र, ढहती हुई सामंतीय व्यवस्था, जमींदारी प्रथा और अंग्रेजों की सक्रियता के मध्य पिसती हुई अवध की जनता की पीड़ा, विवशता एवं आक्रोश के दबे स्वर को बड़े साहस के साथ उभारा

---

[1] डा. राम विलास शर्मा – धर्मयुग 2 अगस्त 1964 पृ. 16

है। "नागर जी" ने नबाबों के परिवारों के भीतर चलने वाले ऐय्याशी तथा दाँवपेंच का वड़ा ही विश्वसनीय चित्र उरेहा है। नबाबों के वैभवपूर्ण जीवन तथा 'नाचगानों और वेश्याओं के प्रति उनकी अनन्य भक्ति का चित्रण कर ढलते हुए अवध के नबाबी एश्वर्य का जो चित्र इस उपन्यास में खींचा गया है वह इतिहास संगत है।[1] डा. शशिभूषण सिंहल का मत है कि "शतरंज के मोहरे" उपन्यास में लोक जीवन का सफल अंकन हुआ है और लखनऊ की अनुभूतियाँ नागर जी की अपनी है। उनका स्पष्ट मत है कि नागर जी के सामाजिक चित्रण में वातावरण से आत्मीयता, किस्सागो की सी मस्ती और तटस्थ विवेचन जैसी व्यंग्यात्मकता है। वे परिस्थिति का सूक्ष्म निरीक्षण कर सामाजिक शक्तियों के तत्व सचित्र करते हैं और उन तत्वों का जीवन के रचनात्मक संयोजन में भली प्रकार उपयोग करते हैं।[2] नागर जी ने तत्कालीन समाज व्यवस्था में उत्पीड़ित अवध की प्रजा की स्थिति का चित्रण करते हुए लिखा है – "सर्वत्र ठगी और लूटपाट का बोलवाला था। शाही आमिल, अमले, शहर के रईस, छोटे अमले, जनसाधारण आमतौर पर अपने सुख – बिलास के लिए कुछ भी कर डालते थे। हिन्दुओं में कुलीन ठाकुर और ब्राह्मण बहुपत्नी वादी थे। निर्धन, प्राकृतिक, अप्राकृतिक बलात्कार की ताक में रहते थे विलास में सामाजिक जीवन डूबकर सड़ रहा था।"[3] 'शतरंज के मोहरे' को ठाकुर प्रसाद सिंह एक सशक्त उपन्यास मानते हैं। परन्तु उन्होंने नागर जी से स्वयं

---

[1] डा. त्रिभुवन सिंह – हिन्दी उपन्यास का यथार्थवाद पृ. 532
[2] डा. शशि भूषण सिंहल, हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ पृ. 380
[3] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर -- पृ. 117

कहा था – " आपने अवध का विशाल कैन्वास बीच में ही ईजेल पर से हटाकर और तरह की पेंटिंग्स बनानी क्यों शुरु कर दी।"[1]

अन्त में हम कह सकते हैं कि ऐतिहासिक उपन्यासों में नागर जी के 'शतरंज के मोहरे' उपन्यास का विशेष स्थान है।

सुहाग के नूपुर

नागर जी ने अनेक प्रकार की गद्य रचनाएँ की परन्तु जनमानस में वह एक श्रेष्ठ उपन्यासकार के रूप में लोकप्रिय हैं। नागर जी ने 'बूँद और समुद्र' जैसे बड़े तथा 'सुहाग के नूपुर' (1960) जैसे छोटे उपन्यास लिखे।

नागर जी ने अधिकतर समकालीन समाज के बारे में ही लिखा है परन्तु इस उपन्यास में पुराने युग के सामन्ती समाज के बारे में लिखा है। उनकी कला अधिकांशतः पुराने लखनऊ में ही निखरती रही है परन्तु इस उपन्यास का संबंध तमिलनाडु की भूमि से है। 'सुहाग के नूपुर' पहले नाटक के रूप में लिखा गया, बाद में इसे उपन्यास का रूप दे दिया गया।

प्रस्तुत उपन्यास के विषय में नागर जी ने स्वयं लिखा है कि – महाकवि इलंगोवन द्वारा रचित तमिल महाकाव्य 'शिलप्पदिकारम्' की कथावस्तु पर आधारित है। नागर जी के अनुसार – इस महाकाव्य की मूल कथावस्तु अति प्राचीनकाल से इस देश के साहित्य में प्रायः सर्वत्र प्रचलित है। 'घिसी पिटी थीम' होने पर भी पापुलर उपन्यास

---

[1] साप्ताहिक हिन्दुस्तान – 15 अप्रैल 1990 पृ. 21

के लिए मुझे वह अच्छी लगी। मैं अपने दृष्टिकोण से उसमें नवीनता देख रहा था। इस उपन्यास में कुलवधू के सुहाग के नूपुर और नगर वधू के नृत्य घुँघरुओं का संघर्ष ही उपन्यास की मूल संवेदना है किन्तु यह संघर्ष एक पक्षीय और व्यक्तिगत बन गया है। नागर जी ने इसमें पुरुष प्रधान समाज पर आक्षेप किया है जो स्त्री को विभिन्न कष्ट देकर अपने को श्रेष्ठ समझने की भूल करता है। स्त्री चाहे पत्नी हो या वेश्या शक्तिशाली पुरुष के हाथ की कठपुतली है। सामन्ती समाज ने वेश्यावृत्ति को बढ़ावा देकर समाज में स्त्रियों के स्थान का हनन किया। इसका शीर्षक 'सुहाग के नूपुर' एक स्त्री के सुहाग के प्रतीक बनकर प्रारम्भ से अन्त तक एक नायक की भाँति कार्य करते हैं। नायक कोवलन पर उसकी पत्नी कन्नगी और एक देवदासी माधवी के अधिकार को लेकर रची गई रचना में नायिका कन्नगी की ही जय तथा खलनायिका माधवी की पराजय है परन्तु दोनो ही रूप में अपमानित स्त्री ही होती है। कोवलन रूपी नायक एक पुरुष प्रधान समाज का नायक बनकर दोनों पर अत्याचार करता है। वेश्या माधवी समाज के विरुद्ध संघर्ष करती हुई एक गृहिणी की भाँति पति – स्नेह, सन्तान, घर, धन – दौलत सब कुछ प्राप्त कर लेती है, किन्तु सुहाग के नूपुर पहनकर कुलवधू बनने की उसकी मनोकामना बालू के ढूह की भांति बिखर जाती है। अन्त में उसके समक्ष यह सत्य उद्घटित हो जाता है कि "पुरुष जाति के स्वार्थ और दम्भ के कारण सारे पापों का उदय होता है उसकी स्वार्थ वृत्ति के नाते ही नारी जाति पीड़ित है। एकांगी दृष्टिकोण से सोचने के कारण ही पुरुष न तो स्त्री को सती बनाकर सुख दे सका और न ही वेश्या बनाकर। इसलिए वह स्वयं झकोले खाता है और खाता रहेगा।

नारी के रूप में न्याय रो रहा है। महाकवि! उसके आँसुओं में अग्नि– प्रलय भी समाई है और जल प्रलय भी।"[1]

प्रस्तुत उपन्यास में नगरवधू माधवी सदैव कुलवधू कन्नगी के सारे अधिकार प्राप्त करने के पश्चात भी अपने पैरों में सुहाग के नूपुर पहनने में सफल नहीं होती है। इसके लिए वह कोवलन के माध्यम से कन्नगी को तरह तरह की शारीरिक व मानसिक पीड़ा पहुँचाती है। वह अपने लिए प्रयोग किये जाने वाले वेश्या शब्द से घृणा करती है। वह अपने हृदय की सारी आन्तरिक घृणा उस समाज व्यवस्था और उसके पोषक पुरुष वर्ग पर उड़ेलती है– मैं वेश्या हूँ। मानव मात्र से द्वेष करती हूँ। हि .... कुछ लोग कहते हैं कि मुझे अपनी ही जाति से द्वेष है। मैं गृहणियों से, सतियों से, देवियां से ईर्ष्यावश मोर्चा लेती हूँ और उन्हें घुला–घुला कर मारने के उपायों में लगी रहती हूँ। कोई कहता है कि मुझे मानव मात्र से घृणा है मैं समाज का नाश करती हूँ कोई यह नहीं देखता कि वेश्या स्वयं अपने ही से घृणा करने पर बाध्य है क्योंकि परम्परा से घृणा के संस्कारों में पाली जाती है। जो स्त्री किसी भी अन्य गृहिणी की तरह काम–काजी और जग–संचालन का भार वहन करने योग्य थी, उसे पुरुषों की विलास वासना का साधन मात्र बनाकर समाज में निकम्मा छोड़ दिया जाता है – फिर क्यों न वह समाज से घृणा करे, क्यों न पूरी लगन और सच्चाई के साथ समाज का सर्वनाश करे, उसे पूरा अधिकार है।[2]

---

[1] सुहाग के नूपुर – पृ. 267
[2] सुहाग के नूपुर – पृ. 234

'सुहाग के नूपुर' पर टिप्पणी करते हुए डा. रणवीर रांग्रा ने लिखा– नागर जी का एक और उल्लेखनीय उपन्यास है 'सुहाग के नूपुर' जो कथ्य और कला दोनों की दृष्टि से एक उत्कृष्ट रचना है। इसके कथानक की प्रेरणा लेखक को पहली शताब्दी ईसवी के तमिल कवि इलांगोवन के अमर काव्य 'शिलप्पदिकारम्' से मिली है। पर अपनी सृजन प्रतिभा से इसे मौलिक और स्पृहणीय रचना बना दिया है।[1]

अमृत और विष

बूँद और समुद्र (1954) के बाद अमृत और विष (1966) श्री अमृत लाल नागर का दूसरा ख्याति प्राप्त उपन्यास है। यह उपन्यास शिल्प की दृष्टि से 'नागर जी' का अभिनव प्रयोग है क्योंकि इसमें उपन्यास के भीतर उपन्यास है। इसमें एक उपन्यास तो आत्मकथात्मक है, जिसमें उपन्यासकार ने अरविन्द शंकर के रूप में स्वयं अपने उपन्यासकार की कल्पना की है। इसमें उन्नीस अध्याय है और अन्त में उपसंहार के रूप में अरविन्द शंकर का चिन्तन है। इस अंश में नागर जी की औपन्यासिक शिल्प, भाषा–विधान, धर्म, राजनीति, प्रेम आदि से संबंधित मान्यताओं का अच्छा परिचय मिलता है। इस उपन्यास की कथावस्तु दोहरे कथानक को लेकर चली है दोनों कथानकों का तालमेल नागर जी ने इस तरह बैठाया है कि दोनों कथानक एक दूसरे से अलग नहीं होने पाये है। पहले उपन्यास के कथानक का संबंध उपन्यास के केन्द्रीय पात्र लेखक अरविन्द शंकर से है जिसमें उनके पूर्वजों का इतिहास, उनके वर्तमान जीवन, परिवार तथा उनके अपने मानसिक उद्वेलन की कथा है दूसरे कथानक में लेखक अरविन्द

---

[1] गगनांचल – फक्कड़ इंसान और बावला किस्सागो (लेख) पृ. 11

शंकर ने अपनी बहुरंगी पात्र सृष्टि के माध्यम से वर्तमान सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों के मध्य डूबते उतराते समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है।

'जिस कथानक का संबंध अरविन्द शंकर के अपने जीवन से है उसमें नागर जी ने आज की समाज – व्यवस्था में लेखन को ही जीविका बनाकर चलने वाले एक लेखक के आन्तरिक तथा बाह्य संघर्ष को प्रत्यक्ष किया है। अरविन्द शंकर का यह समूचा संघर्ष अमरीकी उपन्यासकार अर्नेस्ट हेमिंग्वे के उपन्यास 'ओल्ड मैन एण्ड द सी' के केन्द्रीय पात्र बूढ़े मछेरे के सन्दर्भ में प्रस्तुत हुआ है। उपन्यास के अन्त में अरविन्द शंकर अपने जीवन की सारी कटुता के ऊपर उसी प्रकार आस्थावान् दिखाई देते हैं जिस प्रकार हेमिग्वे का बूढ़ा मछेरा'।[1]

अरविन्द शंकर के जीवन का सत्य प्रत्येक भारतीय साहित्यकार का जीवनानुभव है। उसकी वाणी मानो निराला की वाणी है। प्रेमचन्द की व्यथा कथा है। ''तन के ठेले पर लदा हुआ यह जीवन का भारी बोझ खींचते – खीचते मेरे प्राणों का भूखा अशक्त भैंसा अब बेदम होकर जेठ की चिलचिलाती धूप में तपती सड़क पर गिर पड़ा'।[2]

जीवन का यह कटु यथार्थ उन सभी साहित्यकारों का है, जिनकी जीवन शक्ति कतिपय मूल्यों को लेकर साधना करते चुक गयी है। 'अमृत और विष' उपन्यास में नागर जी वर्तमान जीवन में अनेक विसंगतियों को देखते हुए, पुरानी बातें याद करते

---

[1] प्रकाश चन्द्र मिश्र – अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य पृ. 110
[2] अमृत और विष – पृ. 44

हुए अरविन्द शंकर के शब्दों में कहते है। – " आज के जीवन में मुझे एक प्रकार का खोखलापन जान पड़ता है। एक ओर जहाँ मुझे अपना आज का भारत पहले से कहीं अधिक उन्नत और वैभवशाली लगता है वहीं मुझे अपने बचपन और जवानी के दिनों में यह देश कहीं अधिक खोया हुआ निष्प्राण और निकम्मा लगता है। मेरे बचपन में सदियों से सोता हुआ राष्ट्र फिर से करवटें बदलने लगा था"।[1]

"अमृत और विष" की मूल चेतना पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी की विचार धाराओं, आदर्शों, मान्यताओं की टकराहट ही है। बस उपन्यास में समाजगत अनेक समस्याओं का यथार्थमूलक चित्र प्रस्तुत किया गया है। जैसे – अन्तर्जातीय प्रेम – विवाह, छात्र आन्दोलन, साम्प्रदायिकता, राजनीतिक जीवन की अनैतिकता और चुनाव– विधान, भ्रष्टाचार, नारी समस्या, अनैतिक यौन संबंध आदि।

डा. रणवीर रांग्रा ने 'अमृत और विष' के विषय में यह टिप्पणी की है –

'अमृत और विष' एक सर्जनात्मक साहित्यिक कृति के रूप में लेखक की रचना – प्रकिया की परत–दर–परत खोलने का प्रयास करता है, मानों उसके नायक अरविन्द शंकर के रूप में नागर जी अपने ही भीतर गहरे उतरकर आत्मविश्लेषण और आत्मालोचन में प्रवृत्त हुए हैं।[2]

---

[1] अमृत और विष – पृ. 175
[2] गगनांचल (पत्रिका) फक्कड़ इंसान और वावला किस्सागो (लेख)

सात घूँघट वाला मुखड़ा

'सात घूँघट वाला मुखड़ा' (1968) अमृत लाल नागर का ऐतिहासिक उपन्यास है। नागर जी ने इस उपन्यास में इतिहास और कल्पना का समन्वय बड़ी ही खूबसूरती से किया है। स्वयं नागर जी का विश्वास है कि 'यह इतिहास नहीं : ऐतिहासिक चरित्र प्रधान उपन्यास है। तिथियों और घटनाओं के क्रम में परिवर्तन कर दिये गये हैं क्योंकि बेगम समरू का इतिहास प्रमाणिक होते हुए भी उसकी बहुचर्चा के कारण किंवदंतियों से भरा हुआ है।[1] " प्रेम विलास और राजनैतिक महत्वाकांक्षा से पीड़ित बेगम समरू हिन्दुस्तान की मलिका बनने के लिए नबाब समरू के विरुद्ध षड्यन्त्र करती है वह उनकी प्रिया मुश्तरी की आँखे फुड़वाकर उसे दीवाल में चुनवा देती है प्रिया के गम में उसी रात नबाब ने आत्महत्या कर ली। नबाब की मौत के बाद वह पश्चात्ताप, आत्मग्लानि एवं प्रेम की अग्नि में जलने लगती है। इस उपन्यास में नागर जी ने सत्तालोलुप महत्त्वाकांक्षा के सम्मुख नारी– प्रेम की पराजय का वर्णन किया है। यह उपन्यास भारत पर अंग्रेजी शासन के वक्त नबाबों का स्त्रियों पर अत्याचार और जिस्म फरोशी को उजागर करता हैं। ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का उपन्यास होते हुए भी यह एक सामाजिक उपन्यास है।

'सात घूँघट वाला मुखड़ा' की कथा नबाब समरू के व्यक्तिगत और राजनीतिक दाँव पेंचों को अद्भुत रूप से प्रभावित करने वाली 'बेगम समरू' को केन्द्र में रखकर रची गई है। बेगम समरू के दायित्व काल में घटित होने वाली कतिपय घटनाओं के

---

[1] विज्ञप्ति – सात घूँघट वाला मुखड़ा

माध्यम से कथा को गति प्रदान की गई है। मराठों को पराजित कर आगरा की सूबेदारी प्राप्त करना और सहारनपुर के रुहेला नबाब गुलाम कादिर खाँ के आक्रमण से दिल्ली के बादशाह का बचाना आदि घटनाएँ उपन्यास के राजनैतिक उद्देश्य के माध्यम से बेगम समरू की प्रशासकीय क्षमता एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व आगरा और दिल्ली में घटित हुए हैं। 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' उपन्यास के जहाँ और आकर्षण है। वहाँ उसका शीर्षक भी अहमियत रखता है। उसमें एक स्निग्ध गरमाहट है। वस्तुतः उपन्यास का शीर्षक श्रंगारिक और रोचक कवित्तमय होने के साथ ही 'राजनीति' को प्रतीक रूप में प्रस्तुत करता है – "सियासत का खेल पर्दा दर पर्दा सात फाटकों में बंद होकर खेलना चाहिए ताकि इस हाथ की खबर उस हाथ न लगे।[1]

उपन्यास की रोचकता के विषय में फ्लेप पृष्ठ पर कहा गया है – 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' नागर जी का एक दम नया और अत्यन्त रोचक उपन्यास है। भारतीय इतिहास के एक अति रहस्यमय चरित्र बेगम समरू के रोमांचक और घटनापूर्ण जीवन पर आधारित इस उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि प्रथम पृष्ठ से ही यह पाठक के मन को इस तरह बाँध लेता है कि इसे पूरा पढ़े बिना उसे चैन ही नहीं मिल सकता।"[2]

बेगम समरू का चरित्र विवादग्रस्त है। वह नबाब समरू की विवाहिता थी। कुछ सूत्रों के अनुसार वह दिल्ली की बेगम कही जाती है। उसके कई पुरुषों से अनैतिक संबंध थे। समरू की मृत्यु के पश्चात उसने लीवायस नामक फ्रांसीसी युवक से विवाह

---

[1] सात घूँघट वाला मुखड़ा पृ. 85

[2] वही फ्लेप पृष्ठ

कर लिया सेनापति अंग्रेज अफसर सर टॉमस से भी उसके संबंध है। लीवायस से विवाह करने पर उसकी प्रजा ने विद्रोह खड़ा कर दिया फलतः ली वायस ने आत्महत्या कर ली। लीवायस की मृत्यु के बाद बेगम समरू विद्रोहियों के द्वारा गिरफ्तार कर लीं जाती हैं। ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार बेगम का दूसरा विवाह सन् 1793 में हुआ और सन् 1795 में वह कैद कर ली गयीं थी। उतार चढ़ाव से भरी बेगम की जीवन लीला लम्बी बीमारी के बाद 27 जनवरी 1836 को 86 वर्ष की उम्र में समाप्त हो गई।"[1]

औपचारिक शिल्प के अनुसार यह मनोरंजन प्रधान, घटना प्रवाहपूर्ण उपन्यास है। डा. चुघ के अनुसार यह नागर जी के उपन्यासों की गिनती बढ़ा सकता है गौरव नहीं।"[2] इस संबंध में नागर जी का यह कथन भी दृष्टव्य है – यह साहित्यकार के जीवन की विशेषताओं से उपजी रचना है।

एकदा नैमिषारण्ये

'एकदा नैमिषारण्ये' (1972) पौराणिक पृष्ठभूमि पर आधारित एक धार्मिक उपन्यास है। नागर जी ने इस उपन्यास में तत्कालीन इतिहास और संस्कृति का बड़ा ही सजीव वर्णन किया है। ' इतिहास अतीत से जुड़ा है, किन्तु ऐतिहासिक चेतना अतीत के रंगों का वर्तमानीकरण भी है और सापेक्षिक प्रत्यंकन भी। ऐसी स्थिति में ऐतिहासिक चेतना मात्र इतिहास न होकर एक दृष्टि भी होती है। यही कारण है कि इतिहास संस्कृति का सहोदर होकर आता है। उसमें सांस्कृतिक संस्पर्श इतना गहरा

---

[1] कादम्बिनी – दिसम्बर 1973 पृ. 100

[2] डा. सत्यपाल चुघ – आस्था के प्रहरी पृ. 133

होकर आता है कि रचना इतिहास, संस्कृति, पुराण, धर्म, दर्शन की प्रतिच्छवि बनकर पाठकीय संवेदनाओं को अभिभूत कर लेती है।[1]

इस उपन्यास के लिखने के संबंध में नागर जी ने इस बात का उल्लेख किया है कि– "अपनी मद्रास यात्रा में कपालेश्वर के मन्दिर में एक तमिल कथावाचक के मुँह से नैमिषारण्य का नाम सुनकर इस उपन्यास को लिखे जाने का विचार उनके मन में आया था। नैमिष आन्दोलन की भूमिका संबंधी खोजबीन ने इस दिशा में उन्हे कार्य करने को प्रोत्साहित किया। लेकिन संभवतः यही वह अकेली रचना है जिससे वे सन्तुष्ट नहीं थे अपने एक साक्षात्कार में उन्होंने स्वीकार किया है कि 'बूँद और समुद्र' तथा 'अमृत और विष' को दोबारा लिखने का विचार उनके मन में कभी नहीं आया जबकि 'एकदा नैमिषारण्ये' को वे हमेशा दोबारा लिखने की सोचते थे। भले ही ऐसा कभी नहीं हुआ[2]। इस संबंध में नागर जी ने स्वयं टिप्पणी की है – जिस स्प्रिट से मैने इसे लिखा था वह सन्दर्भ अपटूडेट हो जाने के कारण पाठक की आधुनिक चेतना में काम आई। जो बातें 'नैमिष को लेकर मेरे मन में जागीं थीं उनमें नये ढंग से नए पाठक के लिए एनालाइज करके लिखना चाहता हूँ। नैमिष जैसा 'कंसेप्शन ऑव यूनिटी' मुझे कहीं नहीं मिला'[3]....

इस उपन्यास को लिखने के पूर्व नागर जी ने विचार किया प्रयाग, काशी जैसे प्रसिद्ध तीर्थों को छोड़कर सूत – शौनकादि ऋषियों ने पुराण नैभिषार में क्यों सुनाये?

---

[1] सुदेश बत्रा – अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त पृ. 145
[2] मधुरेश अमृत लाल नागरः – व्यक्तित्व और रचना संसार पृ. 84
[3] सं0 डा. शरद नागर – अमृत मंथन पृ. 100

चौरासी हजार सन्तों का मेला यहाँ क्यों और कैसे लगा? किसने लगाया? उत्तर खोजते – खोजते इस उपन्यास का खाका बना।

इस विशाल और ज्ञानवर्द्धक उपन्यास में नागर जी ने चन्द्रगुप्त प्रथम तथा उनके पुत्र समुद्रगुप्त (समय लगभग 320 –380 ई0 कालीन) इतिहास को आधार बनाकर पौराणिक कथाओं और प्रसंगों को अपने प्रौढ़ चिंतन के आधार पर आधुनिक सन्दर्भ प्रदान किया है। ऐतिहासिक घटनाक्रम में उपन्यासकार ने गुप्त वंश के अतिरिक्त नाग, भारशिव, वाकाटक, लिच्छवी तथा अन्य राज्यों की राजनैतिक गतिविधियों और उनकी शक्ति का उल्लेख कर तत्कालीन ऐतिहासिक सामग्री को अत्यन्त कुशल रीति से वृहद कथानक में संजोया है। पौराणिक काल्पनिक प्रसंगों को ऐतिहासिक धरातल पर सही ऐतिहासिक चेतना से सम्पृक्त करते हुए उपन्यासकार ने उनकी तर्क संगत वैज्ञानिक व्याख्या की है। इस प्रकार प्रतिपाद्य की दृष्टि से हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में यह एक अभिनव प्रयोग है।

'नागर जी' ने चौरासी हजार सन्तों के उस पौराणिक सम्मेलन का राष्ट्रीय महत्व आँका है। स्वयं नागर जी के शब्दों में – 'नैमिष आन्दोलन को ही मैने वर्तमान भारतीय या हिन्दू संस्कृति का निर्माण करने वाला माना है। वेद पुनर्जन्म, कर्मकाण्डवाद, उपासनावाद और ज्ञान मार्ग आदि का अन्तिम रूप से समन्वय नैमिषारण्य में ही हुआ। अवतारवाद रूपी जादू की लकड़ी घुमाकर परस्पर विरोधी संस्कृतियों को घुलामिला कर

अनेकता में एकता स्थापित करने वाली संस्कृति का उदय नैमिषारण्य में हुआ और यह काम मुख्यतः एक राष्ट्रीय दृष्टि से ही किया गया था।"[1]

नागर जी ने आर्यावर्त की सारी परिस्थितियों को दृष्टि में रखते हुए इस उपन्यास के वृहद कलेवर में अनेकताओं और विचित्रताओं से युक्त विशाल भारत राष्ट्र को एक संगठित भारत के रूप में देखने का भव्य स्वप्न संजोया है। डा. रणवीर रांग्रा ने इस उपन्यास के संबंध में लिखा है – "एकदा नैमिषारण्ये" नागर जी का बहुत ज्ञान वर्द्धक उपन्यास है। इसमें भारतीय संस्कृति के विविध उत्सवों का जो विराट वर्णन है उससे आर्य संस्कृति के गौरव ज्ञान के एकाधिकार को ठेस लगती है और हमारा मोह भंग होता पर साथ ही आज तक यवन जातियों के साथ जुड़कर इस विराट संस्कृति के पुनरुत्थान के लिए नये परिप्रेक्ष्य में सम्मिलित प्रयास की प्रेरणा भी मिलती है।[2]

'एकदा नैमिषारण्ये' लेखक के परिपक्व प्रबुद्ध मानस मंथन का अमूल्य रत्न है। इसकी कथा कांति में जो भास्वरता है, वह जीवन के सांस्कृतिक पहलू को उजागर करती है। उपन्यास में संस्कृति के मनके पिरोना आसान हो सकता है; किन्तु संस्कृति के मनकों से रोचक, किन्तु आधुनिक संदर्भ संकेतों की औपन्यासिक माला कोई प्रबुद्ध चेता और संस्कृति कलाकार ही गूँथ सकता है। कहना अनावश्यक है कि नागर जी ने यह काम कर दिखाया है। 'एकदा नैमिषारण्ये' इसका पहला प्रमाण है और 'मानस का हंस' दूसरा।"[3]

---

[1] एकदा नैमिषारण्ये – अपनी बात पृ. 13
[2] साप्ताहिक हिन्दुस्तान (15 अप्रैल 1990) पृ. 54
[3] सुदेश बत्रा – अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त पृ. 156

मानस का हंस

'मानस का हंस' उपन्यास हिन्दी के प्रसिद्ध महाकवि गोस्वामी तुलसीदास के जीवन पर आधारित एक ऐतिहासिक उपन्यास है। नागर जी ने इस उपन्यास की रचना 4 जून 1971 ई. को तुलसी स्मारक भवन अयोध्या में प्रारम्भ की। लगभग एक वर्ष का समय 3 मार्च 1972 रामनवमी को यह उपन्यास लखनऊ में समाप्त करने में लगा। नागर जी ने मानस चतुश्शती के अवसर पर तुलसीदास के जीवन वृत्त को ऐतिहासिक परिवेश देकर भी आधुनिक भावभूमि दी है। ''गोस्वामी तुलसीदास बिखरती हुई संस्कृति और आस्था को समेटने वाले महान मानव के रूप में अमर हैं अतः उनके मध्यकालीन स्वरूप का वर्तमान में सामंजस्य बिठाने के लिए नागर जी ने तुलसीदास के समाज सुधारक रूप के साथ – साथ 'ड्रामा प्रोड्यूसर' और कथावाचक का रूप दर्शाया है।[1]

प्रस्तुत उपन्यास में तुलसी के जीवन – वृत्त और उनकी परम भावुकता जो उत्तम काव्य रचना के लिए परमावश्यक है – के समन्वय का सुन्दर प्रयास है। न तो इसमें केवल इतिहास की शुष्कता है और न तुलसी की काव्य की आलोचक की भाँति विवेचना ही है। उपन्यासकार ने बड़ी ही चतुराई से इन दोनों की नीरसता और वैज्ञानिकता से उपन्यास को बचाया है। यही कुशलता का द्योतक है। 'मानस का हंस' नागर जी की ऐसी कथा कृति है ''जो टालस्टाय, जेम्स ज्वायस, बर्जीनिया बुल्फ,

---

[1] सुदेश बत्रा – अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त पृ. 156

मैक्सिम गोर्की, प्रूत्स, प्रमथनाथ विशी, विमल मित्र और प्रेमचन्द सबकी भाषिक और संवेदनात्मक विशेषताओं को समाहित किये हुए है।[1]

'मानस का हंस' के संबंध में डा० विवेकी राय का कथन भी बड़ा ही तर्क संगत है। "तुलसी के बीहड़ संघर्षरत जीवन और लोकप्रिय धार्मिक नेतृत्व को इतिहास, साहित्य और श्रद्धासिक्त अनुश्रुतियों के बीच से निर्विवाद और अविरोधी स्तर पर निकाल ले जाना वास्तव में एक कठिन काम था जो आलोच्य कृति में सम्भव हुआ है। वैष्णवता, वैष्णवी भक्ति, और रामभक्ति "रामचरित मानस' के बाद इस 'मानस का हंस' में ही दीख रही है और ऐसा लगता है कि सृजन मूल में ऐसा कोई असाधारण अन्तः रसावेश अवश्य है जो सामान्य उपन्यास की रचना – वृत्ति से भिन्न है।"[2]

नागर जी ने तुलसीदास के बाल्यकाल का बहुत ही मनोवैज्ञानिक और सटीक चित्रण किया है क्योंकि तुलसीदास बचपन में माता – पिता के द्वारा त्यागे जाने पर अनेक कष्टों को सहते हुए जीवन पथ पर आगे बढ़े थे। नागर जी की कल्पना ने उस जीवन की रेखाओं में गहरे रंग भरकर उसे जीवन्त बना दिया हैं बच्चे की ऐसी जीवंत प्रकिया के चित्रण के विषय में नागर जी को डा. राम विलास शर्मा ने पत्र लिखते हुए कहा था –"तुमने तुलसीदास के बालक – जीवन का ऐसा जानदार वर्णन किया है कि

---

[1] डा. शम्भूनाथ चतुर्वेदी – आजकल, – जून 1983 पृ. 8

[2] डा. विवेकी राय "काम और राम की महान संघर्ष – गाथा शीर्षक लेख समीक्षा अंक 6 वर्ष 1976

इच्छा होती है, तुमसे कहूँ एक उपन्यास ऐसा लिखो जिसमें सारे प्रमुख पात्र चौदह साल के कम उम्र वाले बच्चे ही हों।"[1]

मानस के हंस के विषय में प्रो. शास्त्री के शब्दों में कहा जा सकता है – "कुल मिलाकर कथा विन्यास घिसी पिटी शैली पर है न इतना प्रयोगात्मक है कि पाठक उसकी भूल भुलैया में भटक जाए। मानस चतुःशती की सामयिक प्रेरणा ने तुलसी के प्रति नागर जी की गहरी श्रद्धा को सर्जनात्मकता के स्तर पर 'मानस का हंस' में जिस रूप में अभिव्यंजित किया हैं, उसकी वर्णच्छटाओं के प्रति कहीं गम्भीर कहीं सामान्य असहमति हो सकती है, किन्तु इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि नागर जी ने इसके द्वारा तुलसी की मानवीयता को कलात्मक रूप से उद्घाटित कर हिन्दी के जीवन चरितात्मक उपन्यासों में नया कीर्तिमान स्थापित किया है।[2]

समग्रतः 'रामचरित मानस' के प्रतिष्ठापक गोस्वामी तुलसीदास के गौरवपूर्ण व्यक्तित्व को आधुनिक चेतना से संपृक्त कर देश, काल, संस्कृति को नवीन आयाम देने में नागर जी का उपन्यास 'मानस का हंस' हिन्दी साहित्य का एक अनुपम एवं सशक्त सोपान है।

नाच्यौ बहुत गोपाल

'नाच्यौ बहुत गोपाल' (1978) नागर जी का मौलिक तथा नवीन शैली शिल्प में रचित सामाजिक उपन्यास है। नागर जी ने मेहतर कहे जाने वाले लोगों की

---

[1] धर्मयुग 8 अप्रैल 1973 पृ. 13

[2] प्रो. विष्णुकांत शास्त्री – समीक्षा वर्ष – 7 अंक 9–10 पृ. 88 जनवरी – फरवरी 1973

मानसिकता, जीवन, समस्याओं आदि की करुणामयी और रोमांचक झांकी हृदयग्राही कथा के ताने बाने से बुनकर उपन्यास के रूप में एक गम्भीर कृति प्रस्तुत की है। इस उपन्यास की तैयारी के तौर पर दो वर्षों तक डेढ़ – पौने दो सौ मेहतरानियों से नागर जी की मुलाकातों और बातचीत के माध्यम से निम्नवर्गीय जिन्दगी के सूक्ष्मातिसूक्ष्म पहलुओं को यथार्थ रूप में अनावृत्त किया है। उन्होंने समाज में दलित, उपेक्षित तथा अछूतों से भी अछूत समझे जाने वाले मेहतर वर्ग की जिन्दगी के ऐसे अन्तरंग और अछूते दृश्य अंकित किये हैं, जो नित्य देखे जाने के बावजूद अभी तक अनदेखे और उपेक्षित हैं। नागर जी ने उपेक्षित, अपमानित, शोषित और बिलबिलाती हुई जिन्दगी को निकट से देखा और उसे पूरी सत्यता के साथ प्रस्तुत किया है। मेहतर जाति के संबंध में वे स्वीकार करते हैं – 'मेहतर कोई जाति नहीं। विजेता ने विजितों को दास बनाकर उनसे जबरदस्ती मल–मूत्र उठवाना आरम्भ किया .... भंगी समाज में बहुत से छोटे–छोटे पराजित राजकुलों के वंशधर भी मौजूद है। विजेता ने विजितों के दम्भ को कुचलकर किस मानसिक गति में नाली के कीड़े की तरह बहा दिया।[1]

इस उपन्यास में नागर जी पत्रकार अंशुधर शर्मा नामक पात्र के माध्यम से इस उपन्यास की नायिका श्रीमती निर्गुनियाँ से , जो कि जन्म से ब्राहमण होने के बावजूद परिवेशगत उच्छ्रंखलता के कारण मेहतर बनने पर मजबूर हुई, उसके वर्तमान व अतीत के जीवन को जानने का प्रस्ताव रखते हैं। श्रीमती निर्गुनियाँ के इण्टरव्यू के द्वारा नागर जी मेहतर समाज के अन्तरंग जीवन, इतिहास, उनकी धार्मिक, सांस्कृतिक मान्यताओं,

---

[1] नाच्यौ बहुत गोपाल – पृ. 343 – 44

रीति–रिवाज, रहन–सहन, वेश–भूषा, सुख–दुःख, सामाजिक–राजनैतिक जीवन आदि को प्रस्तुत करने के साथ ही साथ, सवर्णों के अत्याचार उनकी गिरती मानसिकता तथा वर्गगत भावना और घृणा–द्वेष को भी पूरी ईमानदारी से प्रस्तुत करते हैं। निर्गुनियाँ के द्वारा अपने बूढ़े पति से यौन तृप्ति न प्राप्त कर पाने के कारण मोहना मेहतर के साथ घर से भागना, इच्छित जीवन न जी पान तथा मार–मार कर उसको भंगिन बनाना आदि ऐसी कई घटनायें हैं जिनके द्वारा नागर जी ने निर्गुनियाँ के चरित्र की स्पष्ट व्याख्या की है। निर्गुनियाँ जब अंशुधर शर्मा को जो–अमृत लाल नागर के स्थानापन्न हैं– मोहना को माई का मल उठाने वाला प्रसंग सुनाती है तो अंशुधर शर्मा की प्रतिक्रिया होती है– मैं अपने जी की बात कहूँ कि मुझे, उस समय श्रीमती निर्गुनियां के सामने बैठना भी भारी लग रहा था।................. "सारी प्रगतिशीलता के बावजूद मेरे अभिजात सामन्ती संस्कार अब तक कायम हैं[1]। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पढ़ने लिखने के पश्चात भी हमारे वर्गगत संस्कार हम पर हावी रहते हैं। इस उपन्यास में नागर जी आपात काल में जनता पर किये गये अत्याचारों और बढ़ती हुई तानाशाही प्रवृत्ति पर भी चोट करते हैं। नागर जी ने स्वयं लिखा है–"इस उपन्यास का अधिकांश भाग इमरजेन्सी के काल में ही रचा गया। सन् 1975 के अन्त में इसे लिखना आरम्भ किया। इमरजेन्सी के दौरान सुनी हुई बातें मेरे मन को प्रभावित करतीं थीं। उनका असर तो कहीं न कहीं उजागर होना ही था"।[2]

---

[1] नाच्यौ बहुत गोपाल–पृ0 100
[2] दस्तावेज अंकर 1979 पृ012

इस प्रकार नागर जी ने मेहतर वर्ग के अध्ययन और सर्वेक्षण पर आधारित इस उपन्यास को इस जिन्दगी का एक आत्मीय, प्रामाणिक दस्तावेज बना दिया है।

'नाच्यौ बहुत गोपाल' उपन्यास पर टिपण्णी करते हुए डा० रणवीर रांग्रा ने उचित ही लिखा है– ''नागर जी के उपन्यास नाच्यौ बहुत गोपाल' में मेहतरों के जीवन को आधार बनाकर दमन और दासता की समस्या को उठाया गया है और साथ ही उसमें सेक्स के आकर्षण का पुट भी दे दिया गया है। सेक्स के आकर्षण के कारण ही एक ब्राह्मण युवती मेहतरों के एक छोकरे के साथ भाग जाती है और उससे विवाह कर उन्हीं में मिल जाती है, पर लाख चाहने पर भी पहले के संस्कारों से उसे मुक्ति नहीं मिलती।''[1]

---

[1] गगनांचल (पत्रिका) फक्कड इसान और बावला किस्मागो–लेख पृ० 15

खंजन - नयन

हिन्दी साहित्य के गरिमामय, चरित्र महाकवि, ब्रज भाषा के अमर नायक जन्मान्ध कवि सूरदास को 'खंजन नयन' उपन्यास का नायक बनाकर उनकी प्रज्ञा चक्षुता को नागर जी ने प्रामाणिकता दे दी है। यह एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इस ऐतिहासिक उपन्यास में मध्यकालीन वैष्णव भक्ति साधना के साधक भक्त शिरोमणि सूरदास के व्यक्तित्व का मानस साक्षात्कार कराया गया है। इस उपन्यास का आरम्भ नागर जी ने 30 नवम्बर 1979 को मथुरा में किया और इसका अन्तिम परिच्छेद परासौली की सूर कुटी में 23 अक्टूबर 1980 को शरद पूर्णिमा के दिन समापन किया।

सूरदास का जीवन वृत्त विवादों से घिरा है। सूरदास जन्मान्ध थे अथवा नहीं तथा सूरदास का जन्म स्थान कहाँ था? इस विषय में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद होते हुए भी नागर जी ने सूरदास का जन्म स्थान परासौली मानते हुए उस काल की प्रमुख घटनाओं, नैतिक, राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक संस्कारों को समाहित किया है। सूरदास जी जीवन भर राधाकृष्ण की प्रेम श्रंगार मयी लीलाओं का गान कर भव बन्धन से मुक्ति पाने का प्रयास करते रहे। उपन्यास के अन्त में नागर जी के सूरदास माधुर्य भाव से प्रभावित होकर कृष्णमय हो गये हैं--

<u>'खंजन नयन रूप रस माते'</u>

तन की आँखें न होते हुए भी अपनी दिव्य दृष्टि सम्पन्न मन की आँखों (खंजन नयन) से रूप रस में मस्त होकर सूर अतिशय चारु चपल नयन वाले अपने इष्ट देव

का दर्शन करते हैं। डा0 विजयेन्द्र स्नातक ने 'खंजन नयन' की सार्थकता को स्पष्ट करते हुए लिखा है– 'जिन नयनों में प्रकृति का बाह्य रूपाकार देखने का सामर्थ्य न था उन्हीं में परम सत्ता के अपार ऐश्वर्य को हस्तामलकवत् देखने की दिव्य ज्योति का आलोक भरा हुआ था। इसी अलौकिक आलोक को पाकर सूरदास खंजन नयन बने थे। नागर जी ने सूरदास के चरित्र–चित्रण में इसी दिव्यालोक को विविध सन्दर्भों में उभारने का प्रयास किया है''।[1]

किंवदन्ती के अनुसार सूरदास किसी मल्लाहिन से प्रेम करते हैं और उसके प्रेम में पडकर एक बार मारे भी गये थे परन्तु 'खंजन नयन' में नागर जी ने जिस कुरूप कंतो मल्लाहिन और सूर के प्रति उसके प्रेम की जो कल्पना की है वह युवा कवि सूर की सार्थक प्रेमिका प्रतीत होती है। कन्तो के साथ रहना सूर को रूचिकर प्रतीत नहीं होता वरन् उन्हें अनेक चुनौतियों का सामना करना पडता है। 'कुछ भी हो अग्नि को साथ लेकर तपना ही सच्ची तपस्या है।' नागर जी के कथा नायक अधिकतर आधुनिक युग के होते हैं परन्तु सूरदास जैसे कवि साहित्य के भिन्न स्तर का प्रतिनिधित्व करते हैं। डा0 राम विलास शर्मा ने नागर जी की इस कृति के बारे में अपना दृष्टिकोण इस प्रकार प्रकट किया है – ''नागर जी के उपन्यासों में कवि, पत्रकार, कथाकार, अक्सर अवतरित होते हैं। ये सब आधुनिक युग के हैं। इनसे अलग, साहित्य के भिन्न स्तर पर काम करने वाले, सूरदास और तुलसीदास जैसे कवि हैं, किसी गद्य लेखक के लिए इनका सारा काव्य पढ़ना, उनके मानस की थाह लेने का प्रयास करना, फिर उनके

---

[1] समीक्षा – अप्रैल – जून 1982 पृ09

परिवेश के साथ उन्हें उपन्यास में चित्रित करना दु:साध्य कार्य है। .... 'खंजन नयन' के सूरदास अत्यन्त सजीव पात्र से है, इस बात से काफी लोग सहमत होंगे। इस तरह के कोई और उपन्यास हिन्दी में नहीं हैं।"[1]

नागर जी के उपन्यास 'खंजन नयन' की ऐतिहासिकता पर विचार करते हुए डॉ. रामचन्द तिवारी कहते हैं – " श्रीमद्भागवत के नवम् स्कन्ध की कथा की रचना के लिए सूर का अयोध्या जाना आवश्यक नहीं था। काशी में मल्ल मार्तण्ड छिदम्मी शर्मा के प्रबल विरोध का वैचारिक आधार भले बनता हो, इतिहास इसकी पुष्टि नहीं करता। उपन्यास इतिहास नहीं है, किन्तु उसे इतिहास विरुद्ध भी नहीं होना चाहिए, वह सम्भाव्य इतिहास है।'

अन्त में हम कह सकते हैं कि सारे विवादों के बावजूद नागर जी ने इतिहास जनश्रुति, कल्पना वार्ताओं को मिलाकर सूरदास के चरित्र की नई परिकल्पना प्रस्तुत की है। जिसे नागर जी के दृष्टिकोण से देखना उचित है।

बिखरे तिनके

बिखरे तिनके नागर जी का बारहवाँ उपन्यास है जिसे नागर जी ने 16 अप्रैल सन् 1982 को पूरा किया। इस उपन्यास में नागर जी ने भारतीय राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा उसके प्रभाव और आज के पढे लिखे बेरोजगार नवयुवकों की ज्वलन्त और गम्भीर समस्या का वर्णन किया है। यदि कुछ समझदार नवयुवक संगठित होकर

---

[1] अमृत लाल नागर रचनावली खण्ड 1 में डा. रामविलास शर्मा की भूमिका से

समाज के अन्याय से लड़ना चाहें तो समाज का एक वर्ग उन्हें अलग-अलग तिनकों में बिखेर देता है। 'हर सुख भी चला गया। बिल्लू सोचने लगा, पापा ने मुझे अकेला करने के लिए मेरे मित्रों को भी फोड़ लिया लेकिन वे मुझे ड़िगा न पायेंगे।'[1] इस उपन्यास में आरम्भ से अन्त तक एक कथा नहीं चलती बल्कि आज की राजनीतिक स्थिति तथा भ्रष्ट नेताओं के भ्रष्ट चरित्र का उद्‌घाटन करने के साथ आज के पत्रकार तथा पत्रकारिता की गिरती हुई स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है। यह आज की छात्र शक्ति और नेताओं द्वारा उनके उपयोग की कहानी है।

उपन्यास का आरम्भ नगर पालिका के स्वास्थ्य विभाग के हेल्थ अफसर के पी०ए० गुरसरन बाबू की कथा से होता है जो कि भ्रष्टाचार की साकार प्रतिमूर्ति है। ये सरकारी मुलाजिमों की पोल खोलते हुए उनका प्रतिनिधित्व करते हैं।

'बिखरे तिनके' बिना किसी बड़े विजन और फलक के युवा पीढी के विचलन और भटकाव को अंकित करता है। समस्याओं के प्रति उसका रवैया औपचारिकता और सरलीकरण का शिकार है। बेहिसाब घटनाओं के बीच पात्रों को अधिक विकसित होने का अधिक अवसर नहीं मिलता। छिद्‌दा डाकू का प्रसंग, स्वतन्त्र कुमार और सरसुतिया के विवाह में बिल्लू दल की भूमिका, बबलू राठौर की जादुई सहायता, सरसुतिया के स्मारक के लिए बबलू राठौर की पत्नी श्रीमती म०जुला उत्तम सिंह की आर्थिक सहायता आदि के प्रसंग इसी प्रकार के सरलीकरण के उदाहरण हैं जिनके कारण उपन्यास एक संग्रथित रचनारूप के तौर पर कोई स्थाई प्रभाव नहीं छोड़ पाया है।

---

[1] बिखरे तिनके – पृ0 105

अन्त में हम निष्कर्ष रूप मे कह सकते हैं कि हमें समाज की गलत मान्यताओं को दूर कर संगठित समाज की रचना करनी चाहिए। यह एक सीमित संदर्भ पर आधारित साधारण कोटि का उपन्यास है जिसे एक महान् लेखक की रचना यात्रा में विश्राम स्थल मात्र कहा जा सकता है।

अग्निगर्भा

'अग्निगर्भा ' नागर जी का तेरहवाँ उपन्यास है। किन्तु नागर जी इसे बारहवाँ उपन्यास मानते हैं 'छोटे बडे उपन्यासों की कडी में 'अग्निगर्भा' बारहवीं रचना है। यों तो अनेक विद्वानों और शोध कर्ताओं ने 'सेठ बाँकेमल' और 'ये कोठेवालियाँ' को भी उपन्यासों की संज्ञा दी है, परन्तु यह पंडितों की मान्यता है, मेरी नहीं। पहले इस उपन्यास का नाम मैंने रखा था 'मैं मरूँगी नहीं' लेकिन बाद में मुझे और मेरे प्रकाशक को भी 'अग्निगर्भा' नाम ही उचित लगा।"[1] इस उपन्यास में नागर जी ने छूत की बीमारी की तरह दिन प्रतिदिन बढने वाली दहेज जैसी भयानक समस्या को उसके यथार्थ रूप में प्रस्तुत कर नारी के प्रति मानवीय संवेदना व्यक्त की है। आजकल यह समस्या शहर गाँव सभी में समान रूप से पाई जाती है जिसके कारण न जाने कितनी नववधुओं को मौत के घाट उतार दिया जाता है या जला दिया जाता है या तो कभी कभी उन्हें इतना परेशान और शारीरिक व मानसिक यंत्रणा दी जाती है जिसके भय के कारण वे आत्महत्या करने पर मजबूर हो जातीं हैं। इन्हीं सारी समस्याओं को नागर जी ने एक शिक्षित समाज के माध्यम से व्यक्त किया है। सीता जैसी पढी लिखी स्त्री

---

[1] अग्निगर्भा – आवरण सामग्री से

पुरूषों के पौरूष और अहं के कारण उनका अत्याचार सहती हैं। 'दहेज की इस लड़ाई में सीता पति और पिता के बीच तब तक पिसती है जब तक बाढ के इस पानी में साँस ले पाना उसके लिए एकदम असंभव नहीं बना दिया जाता है।"[1]

भारतीय नारी ने सदैव ही पुरूषों की यातना को सहा है तथा इस कार्य में पुरूषों का सहयोग सास ननद के रूप में स्त्रियाँ भी करतीं हैं। जब कि एक स्त्री के रूप में मीनाक्षी उसकी एक अच्छी दोस्त व आदर्श जेठानी साबित होती है। नारी को "आदमी की कामुक, स्वार्थी और घिनौनी इच्छाएँ 'अग्निगर्भा' बना डालती हैं। जो जीवन पर्यन्त धैर्यशील वसुन्धरा की तरह अपने भीतर विखंडित होने वाली ज्वालाओं को निरन्तर समेटती रहती हैं। वह जीवन भर अपनी अक्षय सम्पदा लुटाकर भी, आदमी की तृषा को नहीं बुझा पाती और रक्त की अन्तिम बूँद चूसकर भी वह प्यासा बना रहता है।"[2]

समाजशास्त्र विभाग की अध्यक्ष और प्रोफेसर डॉ0 सीता शुक्ला विवाह के बाद एक भी पैसा न तो अपने पास रख सकती है और न ही अपने मन से खर्च कर सकती है। पैसे पर पूरा अधिकार उसके पति का है। पैसे के लिए वह उसे अपमानित ही नहीं बल्कि घर तथा बच्चे से भी अलग करके उसे अग्निगर्भा बनने पर मजबूर कर देता है। संगठन, साहस और शक्ति से अन्याय के खिलाफ लड़ते हुए अन्त में वह अपने प्राणों की भी बलि दे देती है। 'एक बार मैंने पढ़ा कि अज्ञेय जी एक साहित्यिक टोली लेकर जनकपुर सीतामढी गये थे। वहाँ उन्हें मालूम हुआ कि वहाँ वाले अपनी बेटी को

---

[1] मधुरेश – अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व और रचना संसार पृ0 105
[2] अग्निगर्भा – आवरण सामग्री से

ससुराल में दुःख पाने के कारण अब तक अपनी लड़कियों को अगहन में नहीं ब्याहते क्योंकि राम सीता का विवाह अगहन में ही हुआ था ....द्रोपदी ने भी कुछ कम नहीं सहा। आप भी सह रहीं हैं मैं भी दुःख भोग रहीं हूँ, हजारों लाखों स्त्रियाँ भोग रहीं हैं। यह है उस देश की कथा जिसकी सभ्यता और संस्कृति की महानता के ढोल पीटते हम नहीं थकते है"[1]।

नागर जी के इस समस्या प्रधान उपन्यास की विशिष्टता यह है कि इसमें स्त्री विद्रोह की परिणिति सीता की दुर्भाग्यपूर्ण हत्या में दिखाते हैं इसलिए विद्रोह का बिम्ब अंत तक जाते – जाते बिखर जाता है।

फिर भी नागर जी का यह छोटा सा उपन्यास अंधेरी राह में टिमटिमाता वह दीपक है जो भटकों को राह दिखायेगा –

"रवीन्द्र नाथ ठाकुर की एक छोटी सी कविता याद आयी। .... अस्ताचल गामी सूर्य ने दुनिया से पूछा कि अब तुम्हें उजाला कौन देगा? जगत् चित्रवत निरुत्तर हो गया किन्तु एक छोटे से मिट्टी के दिए ने कहा कि घबराइये मत मैं आपका काम करूँगा।"[2]

करवट

'करवट' उपन्यास को नागर जी ने 14 मार्च, 1985 को पूरा किया था। इस उपन्यास में नागर जी ने अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव से हिन्दू समाज में होने वाले सुधारों

---

[1] अग्निगर्भा – वृ0 131

[2] अग्निगर्भा अमृत लाल नागर – पृ. 133

का वर्णन किया है। भारतीय समाज के घटना बहुल इतिहास को रोचक कथा में रचनान्तरित करने का प्रयास है जिसमें इतिहास ही कल्पना का आधार है। 'निवेदनम्' शीर्षक से लिखित वक्तव्य में नागर जी लिखते हैं – समय का परिवर्तन इतिहास की पूँजी है। गदर के बाद अंग्रेजी शासन और शिक्षा के प्रभाव से हमारे समाज में एक नई मानसिकता का उदय हुआ था। संघर्ष की प्रक्रियायों में पुरानी जातीय पंचायतों को नए "जातीय" एसोसिएशनों ने करारे धक्के ही नहीं दिए वरन् कालान्तर में उन्हें ध्वस्त ही कर डाला इन जातीय संघर्षों से ही नई राष्ट्रीयता ने जन्म पाया था।" अमृत लाल नागर का उपन्यास 'करवट' वस्तुतः उत्तर भारत में मध्य वर्ग के उदय की कहानी है जो सरकारी नौकरियों और व्यवसाय में अंग्रेजों को सहयोग देकर बदले में अपनी सुख सुविधायें ग्रहण कर रहा था। इस उपन्यास में उन्नीसवीं सदी के अन्तिम छः दशकों को अंकित किया गया है। इस काल खंड में लखनऊ में वाजिद अली शाह के अन्तिम दिन, उनके इर्द – गिर्द पनपने वाले षड्यन्त्र, इस सारी वस्तु स्थिति का अंग्रेजों के द्वारा अपने हित में इस्तेमाल करके अवध के अन्तिम नबाब के रूप में वाजिद अली शाह की गिरफ्तारी और अन्त में कलकत्ता के मटियाबुर्ज में उनकी मृत्यु आदि प्रमुख घटनायें हैं। नागर जी ने इस उपन्यास में कथानायक तनकुन के बहाने अनेक जाति वर्गो के जीवन यथार्थ को चौक क्षेत्र जैसे परिचित परिवेश में घटित होते हुए इस प्रकार दिखाया है कि गदर के बाद भारतीय जीवन, स्वाधीनता संघर्ष, सांस्कृतिक नवजागरण और सामाजिक संक्रमण को अधिक वस्तु परक ढंग से देखा जा सके। तीन पीढ़ियों की जीवन गाथा के बहाने यह उपन्यास बड़े कालफलक पर भारतीय समाज के मुख्य परिवर्तन को मूर्त करता है। वंशीधर टंडन अंग्रेजी पढे लिखे हैं, अंग्रजों के

खैरख्वाह हैं, उन्हें रायसाहब का खिताब मिला है। उनके पिता चाहते हैं कि बचपन में हुई शादी को ठुकराकर वह पैसेदार माँ की इकलौती बेटी से दूसरा विवाह करके उनका घर जमाई बन जाए। उन्होने उसका विरोध करके, विद्रोह की पराकाष्ठा की। " उसके बाद उनकी बुद्धि सुविधानुकूल विद्रोह करने लगी।"

गदर प्रगतिशील अंग्रेजों के विरूद्ध प्रतिक्रिया वादी सामंतों का संघर्ष नहीं था वह जन विद्रोह था "उत्तर भारत में अंग्रेजों के खिलाफ एक जबर्दस्त जनविद्रोह का विस्फोट हो चुका था।"[1]

19 वीं शताब्दी को नागर जी परिवर्तन के रूप में देखते हैं। उपन्यास का एक पात्र देश दीपक पिता की तुलना में अधिक प्रगतिशील है जो धर्म के ऊपरी आडम्बर को चुनौती देता है। वह उस धर्म को अस्वीकार करता है जो समाज को वर्गों और वर्णों में बाँटने वाला है।

'करवट के विषय में पं0 राम विलास शर्मा ने 'अमृत लाल नागर रचनावली' की भूमिका में लिखा है– "मेरी समझ में 'करवट' उनका अत्यन्त सुगठित उपन्यास है। पैंसठ पार करने के बाद कला के प्रति उनकी सतर्कता कम नहीं हुई थी, बस बढती गयी थी।"[2]

---

[1] करवट –पृ0 118

[2] अमृत लाल नागर रचनावली – राम विलास शर्मा द्वारा प्रदत्त भूमिका से

पीढ़ियाँ

'पीढ़ियाँ' नागर जी का अन्तिम उपन्यास है। यह उपन्यास 'करवट' के आगे की कथा है। 'करवट' में नागर जी ने 1854 से 1902 तक का काल अंकित किया था। 'पीढ़ियाँ' में स्वयं लेखक के अनुसार – 'सन् 1905 के स्वदेशी आन्दोलन और क्रांतिकारी आतंकवाद से लेकर सन् 1986 के विघटनकारी आतंकवाद तक का काल अंकित है।'' करवट में नागर जी ने सामाजिक, सांस्कृतिक परिवर्तन और नवजागरण का संकेत दिया है पीढ़ियाँ उसके बाद की कहानी है। नागर जी उसी परिवार की अगली पीढियों के पात्रों को लेकर वहीं से अपना कथा सूत्र उठाते हैं जहाँ से उन्होंने 'करवट' में छोड़ा था। देशदीपक के पुत्र जयंत टण्डन, जयन्त टण्डन के पुत्र सुमंत टंडन और सुमंत टण्डन के पुत्र युधिष्ठिर टंडन पीढ़ियाँ की कथा में आते है। वैरिस्टर जयंत टंडन इंग्लैण्ड से वैरिस्टरी की डिग्री लेकर आते हैं, प्रतिष्ठित वकील हैं और अंग्रेज भी उनका आदर करते हैं। युधिष्ठिर टंडन अपने दादा जयन्त टण्डन के जीवन की सारी जानकारी एकत्रित करते हुए उनके विलासी चरित्र का भी परिचय देता चलता है।

हिन्दू मुस्लिम संबंधों को इतिहास के दायरे में जाँचना पीढ़ियाँ के लेखक का उद्देश्य जान पड़ता है। जयन्त ने अपने अध्ययन से यह महसूस किया है कि इस देश में आरम्भ से ही अनेक जातियाँ आयीं। और यहाँ की सामाजिक संरचना में घुल मिल गयीं।

अपने चरितनायक के प्रति युधिष्ठिर का दृष्टिकोण यह है कि – "अपने पितामह जयन्त के संबंध में उसका यह मत पुष्ट हुआ कि वह मूल रूप से व्यभिचारी नहीं थे। परिस्थितियों ने उनका वैसा रूप बना दिया। मन्नो दद्दा से उसने एक बार यह भी जाना कि उन से संबंध प्रगाढ़ होने के बावजूद फिर अधिकतर परस्त्री लोभी नहीं रहे। नौजवानी में उनका अनबूझा मदनाग्रह उद्दाम और उन्मत्त हो उठा था। उन्होंने अपनी बुद्धि को स्वयं छला। अनारो घटना उनके जीवन की सबसे भयानक लापरवाही वाली घटना मानी जा सकती है। विलायत में जो कुछ स्त्री प्रसंग हुए वह मात्र उनके भारतीय संयम की विरोधी प्रतिक्रिया से हुए थे। हर शेर आदमखोर नहीं होता लेकिन संयोगवश चाट लग जाने पर वह हो ही जाता है।"[1]

28 मई 1985 को जीवन – संगिनी प्रतिभा नागर की मृत्यु के पश्चात् नागर जी की नेत्र ज्योति क्षीण हो गयी थी। जिससे उन्हें पढने में कठिनाई अनुभव होने लगी थी। इस उपन्यास को पूरा करने में श्री रामचन्द्र जैन ने नागर जी की पूर्ण सहायता की। यह उपन्यास करवट के क्रम में उसी का दूसरा भाग है।

'करवट' उपन्यास पर डा0 रणवीर रांग्रा की यह टिप्पणी अत्यन्त महत्वपूर्ण है– "नागर जी का विशालकाय महाकाव्यात्मक उपन्यास है 'करवट'। विराट ऐतिहासिक चित्र पर असंख्य पात्र। कुछ पूर्व ज्ञात और कुछ कल्पित। विविध इन्द्रधनुषी रंग, अनेक विचार विन्दु और अनगिनत दिशाएँ इस रचना की कुछ विशिष्टताएँ हैं। x x x x x लेखक का कैमरा लखनऊ को केन्द्र बनाकर कलकत्ता से लाहौर तक घूमता है और

[1] पीढियाँ – पृ0 257

आकर्षक शैली में देशवासियों के सजीव चित्र प्रस्तुत करता जाता है। अपने विराट फलक, विविधतापूर्ण पात्र सृष्टि और विपुल सामग्री के कारण यह उपन्यास टॉलस्टाय के 'वार एंड पीस' तथा विमल मित्र के 'खरीदी कौड़ियों के मोल' की याद दिलाता है।"[1]

[1] गगनांचल (पत्रिका) फक्कड इंसान और बावला किस्सागो (लेख) पृ॰ 15–16

उपन्यास - रचना - प्रविधि

किसी भी कृति के अवयवों और ब्योरों को गुम्फित करने की कुशल पद्धति प्रविधि कहलाती है।[1] 'साहित्य में वस्तु तत्व सदृश प्रविधि का विशिष्ट महत्त्व होता है। नागर जी के वस्तु और प्रविधि का समुचित संतुलन ही श्रेष्ठ कृतित्व का आधार होता है। नागर जी की कृतियों में हमें वस्तु की सापेक्षता और कला शिल्प का समुचित संतुलन देखने को मिलता है। उपन्यासकार के ललाट में समाज की सच्चाइयाँ, मानव की दशा और परिवेश के यथार्थ एकत्र होते रहते हैं। इसके वर्णन हेतु उसके मन में भावों का उद्वेलन होता है। वह इन एकत्र भावों को चित्रपट पर उतारना चाहता है। जिस ढंग से, जिस प्रकिया से उसे उतारा गया है, वही प्रविधि है। उपन्यासकार जो कुछ कहना चाहता है अथवा जो उसने कहा, वह उपन्यास की भाववस्तु है और जिस ढंग से, जिस ढांचे में उसे प्रस्तुत किया वह उसका प्रविधि है। भाववस्तु उपन्यास का बाह्य पक्ष है जबकि प्रविधि आभ्यन्तरिक।

उपन्यास प्रविधि अपने – आपमें किसी कृति को अभिव्यक्ति देने का अधिक और उपयुक्ततम माध्यम है। वह उपन्यासकार की पड़ताल करता है, कि वह कितना अर्थ समर्थ कथाकार है।[2]

---

[1] डा0 नगेन्द्र(सम्पादक) मानविकी पारिभाषिक कोश प0 247

[2] .... *That structure is the key to the novelist's success or failure* " – O' Conner william van / forms of Modern Fiction'

रचनाकार अपने उचित शिल्प के माध्यम से अपनी बात को अधिक सार्थक ढंग से कह सकता है। उपन्यास एक मकान है, जिसमें अनेक खिडकियाँ हैं[1] और हम कह सकती हैं कि उस मकान के सौन्दर्य बोध के लिए सभी गवाक्षों को परखना होगा। बिना गवाक्षों के परखे कला का आकलन सम्भव नहीं है। गवाक्ष ही उस मकान की प्रविधि हैं।

प्रविधि एक मौलिक वस्तु है। प्रविधि अपने आपमें मौलिक होते हुए भी परम्परागत सूत्रों द्वारा निर्मित होती है।

उपन्यास रचना प्रविधि का सम्बन्ध उसकी आन्तरिक सर्जना से है। नाना प्रकार की विधियों, रीतियों और प्रक्रियाओं के समुच्चय को भी प्रविधि माना गया है।[2] नियम, रीतियाँ या प्रविधियाँ उसे प्रदत्त हों तो वह कृति का निर्माण नहीं कर सकता इसीलिए कृतिकार किसी ढाँचे से नहीं बंधा होता[3] प्रविधि कथाकार के अनुभवों को प्रक्षेपित करने का उपयुक्ततम आधार है। प्रविधि ही केवल साधन है जिसके द्वारा वह अपने विषय एवं अपने अभिप्रेत को प्रस्तुत करने का माध्यम बनता है, और उसी के द्वारा उसका अनुसंधान, गवेषणा तथा विकास करता है, अभिप्रेत को उचित रूप से सम्प्रेषित करता

---

[1] Shapario, Charles (edited by) / *Twelve Original essays on great English novels.*

[2] जिस प्रकार साहित्यकार अपनी रचना के सृजन की प्रारम्भिक अवस्था से लेकर इसे कलात्मक रूप प्रदान करने की अन्तिम अवस्था तक जिन नाना प्रकार की रीतियों, विधियों एवं प्रक्रियाओं को काम में लाता है वह सभी प्रविधियाँ और रीतियाँ प्रविधि के नाम से पुकारी जातीं हैं।
डा० (श्रीमती) ओमशुक्ल : हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास पृ० 26

[3] *A novelist can not be taught the technique ....* O' Connar, William Van / Forms of modern Fiction / P.1

है और अन्तर में इसका मूल्यांकन करता है।[1] प्रबल से प्रबल भाव वस्तु भी सुगठित प्रविधि की अनुपस्थिति में अर्थहीन हो जाती है।

उपन्यास के प्रारम्भिक इतिहास में शिल्प को एक अतिरिक्त वस्तु के रूप में परखा जाता रहा है।[2]

कलाकार का उद्देश्य अपनी अतिशय संवेदनशीलता प्रदर्शन के द्वारा मात्र शिल्प (अथवा भावों) का खिलवाड़ करना नहीं होता बल्कि उसका उद्देश्य हमेशा एक रचनात्मक संसार तैयार करना होता है।[3] सही और बुनियादी कला के लिए भाव और शिल्प की सम्पृक्ति होनी चाहिए यह भी जरूरी है कि भाव और प्रविधि की सम्पृक्ति संघटित हो, उसमें बिखराव न आने पाये। सशक्त रचना के लिए दोनों की संघटित एकता बनाये रखना एक अनिवार्य शर्त है। उपन्यास का शिल्प केवल युक्तियों के पराक्रम या कौशल दिखाने में नहीं है बल्कि असीमित तत्वों के सम्भव संबंधों का सक्रियतापूर्ण अध्ययन है, जो कि एक उपन्यास कृति का निर्माण करती है।[4]

कथाकार अपनी कृति में अपने जीवन अनुभव को ही रूपायित करता है। उसमें चित्रित पात्र, कथानक चयन एवं चेतना सब लेखक के अनुभव के अंग है। रचनाकार के लिए अनुभव अतीत की वस्तु है, किन्तु सृजन के क्षणों में वह वर्तमान बनकर

---

[1] *Technique is the type only means he has of discovering, exploring, developing his subject, of conveying its meaning and finally of evaluating it.* O' Connar / William Van / Forms of modern fiction / P.9.10

[2] " *............. And though technique were not a primary but a supplementary element capable perhapos of not unattractive embellishments upon the surface of the subject.*" O' Connar, William Van / Forms of modern fiction / P.10

[3] Liddell, Robert / **A Treatise on the Novel** / P.28

[4] Brooks and irren / **Understanding Fiction** / P.570

उजागर होता है बीती हुई घटनाएँ इस प्रकार चित्रित होतीं हैं मानों ये अभी – अभी घटी हों। क्रिस्टोफर ईशरवुड के अनुसार – "कथाकार एक कैमरे की भाँति होता है जिसकी खिडकियाँ मुक्त हैं, उसमें दृश्यों, एवं घटनाओं का संग्रह या रिकार्ड होता है लेकिन कथाकार एक संग्रहकर्ता नहीं है, यह काम तो एक संग्रहालय या अजायबघर कर सकता है बल्कि वह अपने संगृहीत अनुभव को चिन्तन शक्ति के द्वारा युग की चेतना के अनुरूप मूल्यवान बनाता है।[1]

उपन्यासकार मनुष्य जीवन की उन्हीं सच्चाइयों का निरूपण करता है जिसका उसे निजी अनुभव है या उन सच्चाइयों को उसने गहरी दृष्टि से परखा है। वह रचनाकार ऐसे जीवन को अभिव्यक्ति देने में कठिनाई महसूस करता है जिसका उसे प्रत्यक्ष अनुभव नहीं है उपन्यास में चित्रित जीवन का प्रत्यक्ष अनुभव या व्यक्तिगत अनुभव उसें अधिक आकर्षक एवं जीवन्त बना सकता है इसीलिए अपनी प्रसिद्ध रचना 'मादाम बाबेरी' के एक पृष्ठ के लिए फ्लार्ल्ट पूरा दिन अंचलों में भटकता रहा है।[2]

रचनाकार के समस्त जीवनानुभव उपन्यास में चित्रित नहीं हो पाते बल्कि वही घटनाएँ और दृश्य अपना स्थान बना पाते हैं जिसने लेखक के हृदय को संवेदित किया है। साधारण से साधारण घटनाएँ भी लेखक के हृदय को व्यथित व प्रभावित कर सकतीं हैं।

कविता हो या कहानी, नाटक हो या उपन्यास लेखक की रचना प्रक्रिया से सम्पृक्त सृजन के एक – एक क्षण मूल्यवान होते हैं।

---

[1] Liddell, Robert / **A Treatise on the Novel** / P.33
[2] Liddell Robert / **A Traeatise on the Novel** / P. 33

कथाकार उपन्यास के कथानक चयन में अपनी – अपनी युक्तियों से काम लेता है। उपन्यास की रचना प्रकिया में कल्पना का किन्हीं न किन्हीं अंशों में उपयोग होता है। कल्पना को रचनाकार दो रूपों में व्यक्त करता है – एक तो रचनाकार जहाँ जीवन की सच्चाइयों को चित्रित करते – करते थक जाता है, उसकी कलम रूकने लगती है, वहाँ वह कल्पना से काम लेता है ऐसी प्रकिया कविता में अधिक देखने को मिलती है। दूसरे, जीवन के यथार्थ को अधिक वजनदार एवं सशक्त बनाने के लिए भी कल्पना का सहारा लिया जाता है।

रचनाकार के लिए प्रत्येक गुजरते हुए चेहरों पर, पत्थरों और चट्टानों पर, खिड़कियों और दरवाजों पर कहानी लिखी होती है कथा लेखक बिखरी हुई कहानियों की तलाश करता है। और यदि वह ऐसा नहीं कर पाता तो यह उसकी कमजोरी है।[1]

उपन्यास शिल्प के उपकरणों को दो रूपों में बाँटा जा सकता है–

उपन्यास – शिल्प के दो प्रकार के उपकरण है–

अनिवार्य एवं संभावित

अनिवार्य उपकरण के अन्तर्गत कथा, पात्र, चरित्र–चित्रण, संवाद, भाषाशैली, देशकाल, उद्देश्य एवं समाख्यानक उपकरण सम्मिलित किए जा सकते हैं जिनके बिना उपन्यास रचना संभव नहीं होती। संभावित उपकरणों में नाटकीय एवं महाकाव्यीय

---

[1] do P.30

उपकरण रखे जा सकते हैं जिसका प्रयोग लेखक की इच्छा पर निर्भर करता है महाकाव्यीय उपकरणों का उपयोग तो किसी – किसी उपन्यास में ही संभव होता है।

सृजन प्रकिया एक संश्लिष्ट प्रकिया है जिसमें कलाकार की अनुभूति, कल्पना, भाव–विचार, युग–बोध आदि विभिन्न तत्व, विभिन्न अनुपात एवं योग से एक ही समय में उसके मानस में गुम्फित रहते हैं इसके साथ ही, इस संश्लिष्ट मानसिक – प्रकिया में अभिव्यक्ति के तत्वों का भी मिश्रण रहता है। सृजन कैसे होता है? इसे जानना या बतलाना विश्लेषणात्मक प्रक्रिया है और यह सर्वमान्य तथ्य है कि सृजन के क्षणों में विश्लेषण और विश्लेषण के क्षणों में सृजन नहीं हो सकता।[1] सृजन प्रक्रिया का रहस्य अभी तक नहीं खुल पाया है लेकिन इस रचना में किसी बड़ी रचना का सौन्दर्य निहित है।[2] राबर्ट लिडील ने इस संबंध में लिखा है कि आलोचक तथा साधारण पाठक कुछ उपन्यासों की निर्माण--प्रक्रिया को देखकर उपन्यास के संबंध में कुछ सीखने की आशा कर सकते हैं। अच्छे लेखकों की सृजन प्रक्रिया का अध्ययन करके एक लेखक कम दोषपूर्ण होने की आशा कर सकता है। उसके विचार में उपन्यास की सृजन प्रक्रिया का अध्ययन उपन्यास--आलोचना में एक अन्य योगदान बनाया जा सकता है।[3]

साहित्य की किसी भी विधा के सृजन के मूलतः दो पक्ष होते हैं – मानसिक और भौतिक। मानसिक सृजन वास्तविक सृजन से पूर्व की स्थिति है। इसके अंतर्गत बीजीकरण, सृजन – प्रेरणा, सृजन की तैयारी आदि तत्व आते हैं। भौतिक – पक्ष में

---

[1] डा0 हरिवंश राय बच्चन (नये पुराने झरोखे) पृ0 147--48
[2] वही पृ0 148
[3] **A Treatise on the Novel** P.29.&.31

सर्जक अपनी मानसिक दृष्टि को मूर्त आकार देता है। उपन्यास के संबंध में इसे लेखन प्रक्रिया के अन्तर्गत रखा गया है।

उपन्यासकार के मन में बीज – भाव के उत्पन्न हो जाने के साथ ही मानसिक प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। उपन्यासकार अन्य कलाकारों की भाँति एक संवेदनशील प्राणी है। वह मानव मन और संसार की घटनाओं, पात्रों, स्थितियों, परिस्थितियों, कल्पनाओं, समस्याओं आदि से प्रभावित होता है। इस संवेदनशीलता एवं प्रभाव में ही सृजन का मूल बीज छिपा है। जब कोई वस्तु उसके मन को आन्दोलित करती है, अथवा उसे प्रभावित करती है तो उसका सर्जक मन उसे प्रेरणा देता है अर्थात् सृष्टा के मन में बीजीकरण पहले होता है और सृजन प्रेरणा उसके उपरान्त उत्पन्न होती है कुछ ऐसे भी उपन्यासकार मिल जायेंगे जो लिखने के लिए प्रेरित होने के बाद बीज – भाव की पकड़ करते हों। ये बीज भाव कहाँ से किस प्रकार आते है? इसका रहस्य कथाकार भी नहीं बता सके हैं।[1]

एक (कृति) के मास्टर पीस होने का रहस्य लेखक की अभिरूचि से विषय़ की अनुरूपता में निहित है।[2]

---

[1] **(a)** *"When I am in particularly good condition perhaps riding in a carriage or in a ¡lk aftr a good meal and in a sleepless hight, than the thoughts come to me in rush, and best of all. Whence and how that I do not know and can not learn.* Mozart, Letter quoted in go Gardner Murphy's book 'An Introduction to Psychologh. P.314-15

(b) *The truth is that the most original ideas come in a flashes and often when least expacted.* J.W. Marriot 'Theart and the craft of writting' P.50

[2] **(a)** Letter to Ro Madame Roger Des Genettes, quoted in **'Novelists on the Novel'** Edited by Miriam Alott P.232

(b) *"............ The art chooses you rather than your cloosing it."* – James L. Jarrett. 'The quest for beauty P.42

उपन्यास की लेखन–प्रकिया बहुत उलझी एवं रहस्यमय प्रकिया है। सामान्यतः लेखकों को प्रारम्भ में यह अज्ञात होता है कि उपन्यास में कौन कौन सी घटनाएँ दृश्य आदि होंगे? तथा उपन्यास के परिच्छेदों का विभाजन किस रूप में होगा? जो उपन्यासकार लिखने के पूर्व इन बातों का निश्चय कर भी लेते हैं उनके लिए यह आवश्यक नहीं होता कि वे प्रारूप की सभी घटनाओं, दृश्यों, पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ, दृश्य आदि लेखक के द्वारा अन्वेषित किये जाते हैं। इसके साथ ही लेखन–प्रकिया में प्रायः पात्र लेखक की नियन्त्रण शक्ति के बाहर निकल जाते हैं। ई०एम० फौर्स्टर के अनुसार–पात्रों का नियन्त्रण से निकल भागना प्रायः प्रत्येक उपन्यासकार के साथ होता है। यह मेरे साथ भी होता है जिससे मैं भयभीत हूँ[1]। थैकरे ने भी इस बात का अनुभव किया है कि वह पात्रों के हाथों में रहता है और उसे जहाँ ले जाना चाहते हैं ले जाते हैं।[2]

उपन्यास की लेखन–प्रकिया गीत आदि के समान एक–दो दिन तक सीमित होने वाली प्रकिया नहीं है। उपन्यास की रचना सायास होती है और लेखक को उसमें मानसिक श्रम करना पडता है। लेखन–प्रकिया के समय लेखक बाह्य संसार से असंपृक्त होकर आत्मलीन हो जाता है'

---

[1] *" ... ... a character running ajy with you which happens to everybody – that's happened to me. I'am afraid."*
- Writers at work; Edited by Cowley Malcolm. P.27

[2] *"I do not Control my characters. he (Thackeray) once protested, "I am intheir hand's and they take me where they please.*
Quoted in '**An Introduction to the study of literature**. William Henry Hudson P. 145

उपन्यास रचना के आन्तरिक अवयव

- वस्तु जगत् की अनुभूति
- आन्तरिक संवेदन
- घटना का आकलन
- संवेदन का सम्प्रेषण
- अमृत लाल नागर का अनुभूति जगत्

उपन्यास रचना के आन्तरिक अवयव

वस्तु जगत् की अनुभूति

उपन्यासकार अपने युग में जो रूढ़िवादिता और अन्धविश्वास तथा राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक और सास्कृतिक परिस्थितियों में रहकर वस्तु जगत् की जिन अनुभूतियों को करता है वह उसके मानस को अपनी लेखनी चलाने के लिए विवश करती है। सम्पूर्ण परिस्थितियों का चित्रण वह अपनी कृतियों में किस प्रकार करता है? यह उसकी दृष्टि और उराके वस्तु जगत् के अनुभव पर निर्भर करता है। यथार्थ–बोध, प्रखर – सामाजिकता, व्यापक मानवतावाद तथा सामाजिक हास्य और व्यंग्य की गहरी क्षमताओं से युक्त वातावरण का अनुभव अमृत लाल नागर ने भी किया। नागर जी ने वस्तु जगत् का अनुभव कर व्यक्ति और समाज के चिरंतन समन्वय की समस्या और दोनों के अन्योन्याश्रित संबंध को विस्तृत भूमिका के रूप में प्रस्तुत किया है। समाज और युग जीवन का यथार्थ चित्र हमें नागर जी के उपन्यासों में देखने को मिलता है। 'महाकाल' जैसा उपन्यास हमारे समक्ष एक मानवतावादी दृष्टिकोण लेकर उपस्थित हुआ है।

अनवरत वृद्धि को प्राप्त होने वाली जनसंख्या ने आज आर्थिक समस्या को विकराल बना दिया है जिसके फलस्वरूप हमारे सामने निरक्षरों, बीमारों, बेकारों और अपनी समस्याओं से छुटकारा न पाने से कुंठित लोगों की लम्बी पंक्ति है। जिनकी समस्याओं का कोई निदान नहीं है। हमारे जैसे बहुभाषावादी, बहुजातिवादी,

बहुधर्मावलम्बी देश की इन समस्याओं की ओर रचनाकारों का ध्यान आकर्षित हुआ। आन्तरिक अनुभूति से प्रेरित उपन्यासकारों ने उपन्यास के माध्यम से इन समस्याओं को प्रकट कर उनसे मुक्ति प्राप्ति हेतु अनेक उपाय सुझाये।

नागर जी ने अपने उपन्यासों में इन समस्याओं को ईमानदारी से चित्रित किया है। ' बूँद और समुद्र' तथा 'अमृत और विष' उपन्यास में नागर जी ने जनता के दुःख–दर्द, उनकी लाचारगी और सपनों को चित्रित किया है। देश में हो रहे भ्रष्टाचार, नैतिक पतन, राजनीतिक आपा धापी, नेताओं की चरित्र – हीनता, परिवार में आये व्यक्तिवाद और स्त्री–पुरुष संबंधों में आये स्वार्थ को यथार्थ स्तर पर चित्रित किया है।

सामाजिक जीवन की विसंगतियों तथा नष्ट होती हुई सामंतीय सभ्यता का जो चित्र नागर जी ने अपने उपन्यासों में वर्णित किया है वह अविस्मरणीय है। उन्होंने उखड़ती हुई सामंतीय सभ्यता के खडहरों के बीच से उगती हुई नवीन जीवन की रश्मियों को सम्पूर्ण भास्वरता में चमका दिया है।

भारतीय राजाओं की विलासित, आलस्य, आपस की फूट तथा एकता का अभाव इन सब कमजोरियों का लाभ अंग्रेजों ने किस प्रकार कूटनीति का जाल फैलाकर उठाया? इन सबका नागर जी ने यथार्थ चित्रण किया है। हमारे जीवन का गहरा यथार्थ उपन्यास रचना द्वारा प्रकट होता है। हमारे जीवन में बहुत से ऐसे क्षण भी आते है। जिन्हें हम जानते हुए भी अनुभव नहीं कर पाते किन्तु उपन्यासकार उन अनजाने और अज्ञात क्षणों को उपन्यास रचना के माध्यम से आकर्षक ढंग से प्रस्तुत कर देता है। नागर जी ने 'अमृत और विष' उपन्यास में मानव जीवन के विविध पक्षों और स्तरों

को प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास में अनुभवों की समृद्धता और सम्पन्नता, अध्ययन की व्यापकता और गहनता तथा चिंतन की प्रौढ़ता तीनों का बहुत ही आकर्षक संगम देखने को मिलता है।

'पीढ़ियाँ' उपन्यास में युधिष्ठिर के द्वारा अपने दादा जयंत टंडन के बारे में जानकारियाँ एकत्रित करने के प्रसंग में उसकी रचना–प्रकिया पर टिप्पणी लेखक के अपने वस्तु जगत् के अनुभवों को समझने के लिए पर्याप्त उपयोगी है –

"अपनी कल्पना को लेखबद्ध करने के लिए युधिष्ठिर अब तक न जाने कितने पुराने पहनावे, मूछों के ढब ढंग देख चुका था। अपनी चौक की खानदानी हवेली में खूब चक्कर लगाए थे। गलियों में आते जाते बहुत सी पुरानी चाल के जीवन की बची–खुची झलकियाँ देखीं थीं। पुराने लोगों से अनेक पुराने चरित्रों के किस्से सुने थे। वे सब संचित अनुभूतियाँ ममाखियों का झुंड बनकर शहद का छत्ता बनाने लगीं।"[1]

आन्तरिक संवेदन

विश्व में प्रतिपल नाना प्रकार की घटनाएँ घटित होतीं रहतीं हैं कुछ घटनायें हास्यास्पद प्रतीत होतीं हैं कुछ करुणा से ओत प्रोत, कुछ घटनाएँ मानव के अन्तर्मन को झकझोर देतीं हैं फलतः उसे अपार वेदना का अनुभव होता है। रचनाकार घटित घटनाओं से आन्तरिक संवेदना का अनुभव कर अपनी कल्पनाओं से उन घटनाओं को एक नया रूप प्रदान करता है। दृश्य जितने अधिक हृदय में कसक पैदा करते हैं

---

[1] पीढ़ियाँ – अमृत लाल नागर – पृ. 135

उतनी ही संवेदना वाणी से प्रस्फुटित होती है। दृश्य या घटना जब हृदय में अधिक दर्द उत्पन्न कर देता है तो उपन्यासकार का अन्तर आकुल व्याकुल हो जाता है तब वह उस दृश्य या घटना को, उससे उत्पन्न आन्तरिक संवेदना को उपन्यास विधा के माध्यम से प्रस्तुत कर देता है।

" कलाकार की संवेदनशीलता पात्रों के अन्तर्मन की गहराइयों को नापती है तथा अनुभूति और कल्पना के सामंजस्य से वैविध्यपूर्ण व्यक्तित्व का अंकन करती है मनुष्य को अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व विकास के लिए संघर्ष करना पड़ता है और वैयक्तिक, अस्तित्व और सामाजिक अस्तित्व दोनों ही अपना महत्व रखते हैं।"[1]

नागर जी के उपन्यासों में जितने ही विविध तथा बहुरंगी मानव जीवन के चित्र उपलब्ध होते हैं उतना ही विविध तथा बहुपक्षीय चिन्तन भी है। व्यक्ति और समाज से सम्बद्ध विविध प्रश्नों और समस्याओं को उन्होंने अपने उपन्यासों में उभारा है।

मानव जीवन में घटित होने वाली सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं को नागर जी ने अपनी लेखनी से संवेदना प्रदान की है तथा पाठक के हृदय तक उस संवेदना को पहुँचाने में सफल रहे हैं। संवेदना शब्द मूलतः मनोविज्ञान का शब्द है। किन्तु आधुनिक साहित्य में इसका व्यापक अर्थ है। संवेदना का अर्थ है ज्ञान की सच्चे अर्थों में अनुभूति यह दो शब्दों से मिल कर बना है – सम + विद् सम का अर्थ होता है समान रूप से या प्रत्यक्ष रूप से और विद् का अर्थ होता है ज्ञान। इस प्रकार संवेदना का अर्थ हुआ ज्ञान को उसके प्रत्यक्ष रूप में जानना, जिस रूप में वह है।

---

[1] डा. सुरेन्द्र नाथ तिवारी -- प्रेमचन्द और शरतचन्द्र के उपन्यास : हिन्दी का बिम्ब – पृ. 130

संवेदनाओं से ही हमें ज्ञान की प्राप्ति होती है तथा इन्हीं संवेदनाओं से मनुष्य में संस्कार उपजते हैं। संस्कारिक मनुष्य की संवदेनाएँ अधिक प्रस्फुटित होतीं हैं। राजकमल वोरा ने संवेदना तथा मानव जीवन के व्यवहार के परस्पर संबंध को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि – मनुष्य संवेदनशील प्राणी है। हमारी संवेदनायें हमारे अपने प्रत्यय बाध पर निर्भर हैं। जगत के संबंध में हमारा ज्ञान जिस कोटि का होगा, उसी आधार पर हममें संवेदन क्षमता आयेगी। संवेदना ज्ञान प्राप्ति का प्रत्यक्ष स्रोत नहीं है अपितु ज्ञान प्राप्ति की यांत्रिक प्रकिया भी है। जब हम संवेदन की प्रकिया से गुजरते हैं, उस समय हमारे संस्कार जागते हैं और संवेदन की उस प्रक्रिया के प्रति हमें सजग करते है। संस्कार वस्तुतः पूर्वानुभूति संवेदनाओं के आधार पर ज्ञान की अभ्यासगत धारणा है। XXXXX हमारी इच्छाशक्ति भी हमारे संस्कारों से बल ग्रहण करती है। ये संस्कार संवंदनाओं के आधार पर बनते हैं।[1]

घटना का आकलन

मानव जीवन में घटित होने वाली घटनाएँ मानव को एक नई शिक्षा प्रदान करतीं है। जो व्यक्ति घटित घटना से बेखबर हो जाता है वह अपने जीवन में उन्नति के मार्ग को अवरुद्ध कर लेता है। फलतः घटना का आकलन करना अपरिहार्य है। घटनायें जीवन में नई स्फूर्ति पैदा करतीं है। उनसे प्रेरित होकर व्यक्ति कार्य को नया रूप प्रदान करता है। उपन्यास विधा भी घटनाओं का आकलन करते हुए ही चलती है। उपन्यासकार जीवन में घटित होने वाली घटनाओं को समन्वित कर उपन्यास विधा में

---

[1] संवेदना के स्तर – राजकमल बोरा – पृ. 104

प्रस्तुत कर देता है। बिना घटना का आकलन किए उपन्यास में रोचकता नहीं आ सकती उपन्यासकार घटना का अवलोकन करता है और घटनाओं में कल्पना का पुट देकर उसे नया रूप प्रदान कर देता है। आधुनिक मशीनी सभ्यता के युग में उपन्यास ही एक ऐसी विधा है जो समाज में घटित होने वाली एक – एक घटना व सामाजिक जीवन को अभिव्यक्ति देने में सक्षम सिद्ध हुई है। इसीलिए सुप्रसिद्ध कथा – आलोचक रैल्फ फाक्स ने उपन्यास को आधुनिक महाकाव्य की संज्ञा दी है 'उपन्यास का वास्तविक सम्बन्ध जीवन से है। वह महान् घटनाओं की खोज नहीं करता, उसका रचना क्षेत्र तो दैनिक जीवन की घटनाओं से है।'[1] उपन्यास महान घटनाओं की खोज न करके समाज की उन छोटी – छोटी घटनाओं के उन सूत्रों की तलाश करता है जो हमारे दैनन्दिन जीवन को नरक बनाये हुये है, लेकिन वे सिर्फ हमारी ही नहीं हैं, बल्कि हम जैसे समाज की है। उपन्यासकार छोटी – छोटी घटनाओं का आकलन करके जीवन की बडी वास्तविकता की तलाश करता है।

'महाकाल' नामक उपन्यास नागर जी का एक प्रमुख घटना प्रधान उपन्यास है जो बंगाल के अकाल की हृदय द्रावक पृष्ठभूमि में लिखा गया है। सन् 1943 में बंगाल में जो भयानक दुर्भिक्ष पड़ा वह एक साधारण घटना न थी। इतिहास इस बात का साक्षी है कि यह दुर्भिक्ष प्रकृति की देन न होकर मनुष्यकृत था। इस कृति में नागर जी ने न केवल अकाल की रोमांचकारी घटनाओं का वर्णन किया है वरन् अकाल के

---

[1] रैल्फ फाक्स – उपन्यास और लोक जीवन पृ. 38

कारणों पर भी गहराई से प्रकाश डालते हुए उस साम्राज्यवादी, सामन्तवादी षड्यन्त्र का पर्दाफाश भी किया है जो इस अकाल का जन्मदाता था।

महाकाल की कथावस्तु घटना बहुल नहीं है, जो भी घटनाएँ है, सब एक ही केन्द्रीय प्रभाव को जन्म देती है और यही अकाल जैसे विषय को लेकर लिखे इस उपन्यास की सफलता है।[1]

नागर जी ने नित्य प्रति की जिन्दगी में घटित होने वाली घटनाओं को लेकर ही अपने लेखन का ताना बाना बुना हुआ है। नागर जी का स्वयं यह दृष्टिकोण है – मान्यताएँ बदल चुकीं है हमारे दैनिक जीवन में अनेक छोटी – बड़ी घटनाएँ होती हैं और काल प्रवाह के साथ हम उन्हें यथास्थान छोड़कर आगे बढ़ जाते हैं फिर भी वे अपनी प्रभावात्मकता को अक्षुण्ण बनाये रखती है। अंतर्मन में छिपकर उचित परिवेश का इन्तजार करतीं हैं और ठीक समय पर प्रकट होकर अपनी प्रभावात्मक शक्ति का विज्ञापन करतीं हैं। ऐसी ही घटनाओं से मेरे उपन्यासों का जन्म हुआ है।[2]

संवेदन का संप्रेषण

साहित्य सृजन का आधार व्यक्तिगत होता है, परन्तु उसकी चेतना उस वर्ग में समाहित है जिसके भीतर रचनाकार ने अनुभव प्राप्त किये है।

केवल विचारधारा ही श्रेष्ठ साहित्य का आधार नहीं हो सकती जब तक कलाकार में गहरी संवेदना न हो। साहित्य सृजन की प्रकिया केवल विचार तक

---

[1] प्रकाश चन्द्र मिश्र – अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य पृ. 64
[2] आज – दैनिक 19 अगस्त 1979

सीमित नहीं बल्कि वह उससे ज्यादा गहरी, व्यापक और मानसिक है। जब तक लेखक अपने स्वयं के जीवनानुभव से उस दृष्टि का सामंजस्य स्थाापित नहीं करता तक तक श्रेष्ठ साहित्य रचना संभव नहीं है लेखक जीवन से गहरा संबंध स्थापित करते हुए संवेदना का संम्प्रेषण करते हुए संवेदनात्मक जीवन ज्ञान प्राप्त करके उसी भाव दृष्टि तक पहुँचता है जो भाव दृष्टि उसके मन में उत्पन्न होने वाली संवेदना को पाठक तक संप्रेषित करा सके जब तक कोई भी उपन्यासकार अपने उपन्यास में मानव समाज में दिखाई पड़ने वाली विभिन्न समस्याओं व अनुभवों से प्राप्त संवेदनाओं को एक आम आदमी तक संप्रेषित कर उसकी गहन सहानुभूति को नहीं जाग्रत करा लेता तब तक इस उपन्यासकार को सफल नहीं कहा जा सकता। मानव जीवन व समाज में जो विभिन्न वेदनात्मक अनुभव होते हैं उनमें से प्राप्त संवेदनाओं को लेखक उस प्रकार अपने उपन्यास में व्यक्त करता है कि पाठक उसको पढ़कर पुनः अपने जीवन में उन घटनाओं को न होने का मन बना ले उपन्यासकार जितना अधिक अनुभवी होगा वह अपनी संवेदनाओं को उतनी ही कुशलता से संप्रेषित कर सकेगा इसीलिए संवेदन का संप्रेषण उपन्यास रचना का आन्तरिक अवयव माना गया है।

'महाकाल' उपन्यास में बंगाल के अकाल की रोमांचकारी घटनाओं के सन्दर्भ में बड़ी ही गहन मानवीय संवेदनाएँ लिए हुए नागर जी ने उपन्यास के क्षेत्र में प्रवेश किया था। जितनी हृदयद्रावक उपन्यास की कथावस्तु थी, उतनी ही गहरी उसकी प्रभाव

क्षमता थी। इस उपन्यास में एक बिल्कुल विपरीत भूमिका के साथ नागर जी ने अपने कथाकार का परिचय दिया है।[1]

यथार्थ का जो चित्रण इस कृति में है। वह संवेदनशील पाठक को सिर से पैर तक झकझोर देने के लिए पर्याप्त है। चावल के दाने – दाने पर झपटती हुई कुत्तों और गिद्धों के मुँह से अन्न के दाने तथा माँस छीनती हुई, नंगे और भूखे स्त्री – पुरुषों की लम्बी भीड़, मुट्ठी भर चावल के लिए नारियों के शरीर के आखिरी वस्त्र को भी झपट कर छीनता हुआ पुरुष वर्ग परिवार के सदस्यों – माँ, पत्नी तथा छोटे बच्चों की हत्या करता हुआ मनुष्य, जीवित शिशु को आग में भूनकर भूख मिटाने वाला पागलपन, पत्नी के शरीर का माँस काटकर खाता हुआ पति, मुट्ठी भर चावल के लिए बेची जातीं नारियाँ, वेश्यालय आदि एक से एक रोमांचकारी चित्र उपन्यास में अकाल के यथार्थ का अंग बनाकर सम्पूर्ण मानवीय–संवेदना तथा लेखकीय तटस्थता के साथ चित्रित किये गये हैं।[2]

नागर जी अकाल के यथार्थ चित्रण के साथ – साथ मानव जीवन में घटित होने वाले अनेक कारुणिक दृश्यों को उपस्थित करके पाठक की संवेदना को उभारने में सफल हुए हैं।

---

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास – साहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र पृ. 74

[2] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र पृ. 62

अमृत लाल नागर का अनुभूति जगत्

कोई भी रचनाकार अपनी प्रारंभिक साहित्यिक यात्रा में कहीं न कहीं से प्रभाव व अनुभव ग्रहण करता है लेकिन वे प्रभाव व अनुभव किन छवियों के साथ उनके मानस को विलोड़ित करते हैं। यह उनकी अपनी दृष्टि व जीवन– अनुभवों पर निर्भर करता है।

नागर जी ने जो भी लिखा उसे सदैव अपनी अनुभूतियों के आधार पर ही लिखा है। उन्होंने जिया है उसे भोगा है। कल्पना को उन्होंने साधन के रूप में अवश्य अपनाया है पर उसे साध्य नहीं बनाया। नागर जी ने अपने अनुभवों के आधार पर जो लिखा है वह यथार्थ की कसौटी पर सदा खरा उतरता हे। नागर जी सदैव तथ्यों की प्रामाणिकता को परखते हैं। तभी उसे अपनी रचनाओं का आधार बनाते हे।

वास्तव में उपन्यास में यथार्थ के साथ ही कल्पना का मिश्रण किया जा सकता है मात्र कोरी कल्पनाओं से उपन्यास की रचना नहीं हो सकती उसमें यथार्थ का होना आवश्यक है। नागर जी ने यथार्थ और कल्पना के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध को स्वीकार करते हुए लिखा है –"उपन्यास का पात्र मेरी कल्पना की सृष्टि भले ही हो पर मेरे बाप का गुलाम तो नहीं। सृष्टि अपने ही नियम से चलती है। रद्धू सिंह के मानस में प्रवेश करने के लिए जब तक उसके बाह्य जगत के अन्तरंग यथार्थ को न देखूँगा तब तक उसके मन का यथार्थ मुझे क्यों कर मिल सकेगा।"[1] अपनी अनुभूतियों को यथार्थ रूप देने के विषय में नागर जी स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हुए कहते हैं – "सूर के

---

[1] अमृत और विष – पृ. 63–64 (अृमत लाल नागर)

जीवन में, उनकी रचनाओं में वात्सल्य और श्रंगार ही प्रधान है। इसी से चाहता हूँ तेरी बा आये और बस सामने ही बनी रहें। "मानस का हंस" की रत्ना के विरह की ईमानदार छवि उतारने के लिए मैंने उन दिनों तेरी बा से झगड़ा किया और अलग रहकर उपन्यास लिखा।[1]

'जिनके साथ जिया' में नागर जी ने सबसे पहले जयशंकर प्रसाद पर लिखा है। प्रसाद निश्चित रूप से व्यवस्थित जीवन दर्शन को रचना में ढाल रहे थे। इसलिए उनकी रचनाओं में कोई ओढ़ी हुई दृष्टि नहीं बल्कि अपने जीवन अनुभव और साहित्य मनन से निष्णात होकर जो दृष्टि निर्मित की है, वह ही उनके साहित्य का आधार बनी है। प्रसाद जी से भेंट और उनसे प्राप्त अनुभवों को नागर जी ने इन शब्दों में व्यक्त किया है –

"प्रसाद जी से केवल मेरा बौद्धिक संबंध ही नहीं, हृदय का नाता भी जुड़ा हुआ है। महाकवि के चरणों में बैठकर मैने साहित्य के संस्कार भी पाये हैं और दुनियादारी का व्यावहारिक ज्ञान भी। पिता की मृत्यु के बाद बनारस में उनसे मिला था तब उन्होंने कहा था " भाइयो के सुख में ही अपना सुख देखना, हिसाब किताब साफ रखना तभी घर के बड़े कहलाओगे।' इसी बात को लेकर प्रसाद जी आज भी मेरे जीवन के निकटतम हैं। यों वर्षों उनके साथ रहकर अपनापन पाने का सौभाग्य मुझे प्राप्त नहीं

---

[1] धर्मयुग – 9 नवम्बर 1980 पृ. 62

हुआ। सब मिलाकर बीस पच्चीस बार भेंट हुई होगी। आदरणीय भाई विनोद शंकर जी व्यास के कारण ही उनके निकट पहुँच सका।''[1]

सन् 1929 – 30 में नागर जी ने लेखक बनने का पूरी तरह निश्चय कर लिया। अपने लेखन को उच्च विचारों तक ले जाने हेतु वह विभिन्न लेखकों से मिल कर लेखन के अनुभव एकत्रित किया करते थे। बहुत छोटी सी उम्र में वे बंगला के प्रसिद्ध कथाशिल्पी शरतचन्द्र से मिलने कलकत्ता गये। शरत ने उनके जीवन को एकदम बदल दिया, वहाँ से वे अदम्य इच्छाशक्ति और रचनात्मक ऊर्जा लेकर लौटे। शरत जी से अपनी भेंट के बारे में वे लिखते हैं – ' किसी बड़े साहित्यकार के दर्शन पाकर मैं स्फूर्ति से भर जाता था। शरतबाबू हिंदी मजे की बोल लेते थे मुझसे कहने लगे "स्कूल कालेज में पढते समय बहुत से लड़के कविताएँ, कहानियाँ लिखने लगते हैं लेकिन बाद में यह अभ्यास छूट जाता है इससे कोई लाभ नहीं। पहले यह निश्चय करो कि तुम आजन्म लेखक ही बने रहोगे।" मैंने सोत्साह हामी भरी। शरतबाबू ने अपना एक किस्सा सुनाया। 18,19 वर्ष की आयु में ही उन्होंने लेखक के रूप में ख्याति अर्जित कर ली थी। कमशः उनकी दो तीन पुस्तकें छपीं और वे चमत्कारिक रूप से प्रसिद्ध हो गए। .... तब तक एक दिन शरतबाबू को उनके कालेज जीवन के एक अध्यापक मिल गये। उनका नाम पाँच कोड़ी (दत्त, डे या बनर्जी) था। वे बंगला साहित्य के प्रतिष्ठित आलोचक भी थे। अपने पुराने शिष्य को देखकर उन्होंने कहा – ''शरत् मैने सुना है कि तुम बहुत अच्छे लेखक हो गये हो, लेकिन तुमने अपनी किताबें पढ़ने को

---

[1] अमृत लाल नागर – जिनके साथ जिया पृ. 10

नहीं दी' शरतबाबू संकुचित हो गये और विनयपूर्वक बोले 'वे पुस्तकें इस योग्य नहीं कि आप जैसे पंड़ित उन्हें पढ़ें।' पाँच कोड़ी बाबू बोले –'चूँकि अब तुम लेखक बन गये हो इसलिए मेरी तीन बातें ध्यान में रखना, एक तो जो लिखना अपने अनुभव से लिखना, दूसरे अपनी रचना को लिखने के बाद तुरंत ही किसी को दिखाने, सुनाने या सलाह लेनी की आदत मत ड़ालना। पाँच कोड़ी बाबू का तीसरा आदेश यह था कि अपनी कलम से किसी की निंदा मत करो।' अपने गुरु की ये तीन बातें मुझे देते हुए शरतबाबू ने चौथा उपदेश यह दिया कि यदि तुम्हारे पास चार पैसे हैं तो तीन पैसे जमा करो और एक खर्च, यदि ज्यादा खर्चीले हो तो दो जमा करो और दो खर्च। यदि बेहद खर्चीले हो तो तीन जमा करो एक खर्च। फिर भी इसके बाद यदि तुम्हारा मन न माने तो चारों खर्च कर डालो। मगर पाँचवां पैसा किसी से उधार मत माँगो। उधार की वृत्ति लेखक की आत्मा को हीन और मलीन कर देती है ....प्रायः नब्बे फीसदी मेरे आचरण पर इन उपदेशों का प्रभाव पड़ा है।''[1]

सन् 1929 में महाप्राण निराला जी से परिचय हुआ। 'सुधा' कार्यालय में दुलारे लाल भार्गव के अतिरिक्त अनेक रचनाकारों से निकट का परिचय हुआ। उन्ही दिनों मिश्र बंधुओं से परिचय हुआ। उनकी याद सदैव बनी रही। x x x x राव राजा पंड़ित श्याम बिहारी मिश्र का यह उपदेश भी उन दिनों मेरे मन में घर कर गया था। उन्होंने कहा था ''साहित्य को टके कमाने का साधन कभी नहीं बनाना चाहिए।''[2]

---

[1] अमृत लाल नागर – टुकड़े – टुकड़े दास्तान पृ. 66
[2] नीर क्षीर – अमृत लाल नागर अंक पृ. 10

प्रेमचंद, निराला, प्रसाद, मिश्र बंधु, और शरत बाबू से भेंट के बाद नागर जी पूरी तरह साहित्य सृजन में रत हो गये। शरद जी ने नागर जी को दो बातें बतलाई और वे दोनों बातों को अपने जीवन में स्थान देकर आजीवन निर्वाह करते रहे शायद ही ऐसा कोई अवसर आया हो जब उन्होंने किसी की व्यक्तिगत आलोचना की हो। दूसरे जहाँ तक अपने अनुभवों के आधार पर लिखने की बात है तो स्पष्ट ही है कि उन्होंने जब भी लिखा अपने अनुभवों के आधार पर ही लिखा। उन्हें भटकने का शौक था। न जाने कहाँ–कहाँ खंडहरों, शहर–दर–शहर में भटकते फिरते थे। इसी भटकाव ने उनके अनुभवों को समृद्ध किया था। 'नाच्यौ बहुत गोपाल' लिखने के लिए वे अपनी समस्त पंडिताऊ बुद्धि को घर रखकर अपने पड़ोस के हरिजन मुहल्ले में गये, वहाँ खाया–पिया और निर्गुनियाँ जैसे पात्र की तलाश की। 'ये कोठेवालियाँ' में भी उनके अपने अनुभव ही हैं। दरअसल नागर जी को भटकने, पढ़ने और चिन्तन मनन करने का इतना शौक था कि उनके उपन्यासों में जितने वर्णन आते हैं वे नकली तो लगते ही नहीं। लगता है कि नागर जी एक – एक पात्र, एक – एक घटना और एक – एक जगह का इतना विस्तार से चित्रण करते जा रहे हैं कि पाठक को उससे अधिक जानने की इच्छा ही नहीं होती। यह किस्सागोई जिसके आधार पर वे अपने जीवन अनुभवों को कलात्मक रूप दे सके, उनकी अपनी निज की कमाई है। अपनी इस अनुभव की पूँजी से ही इन्होंने बड़े – बड़े उपन्यास दिए। नागर जी अपनी इस रुचि के बारे में लिखते हैं 'विभिन्न वातावरणों को देखना, घूमना, भटकना, बहुश्रुत एवं बहुपठित होना भी मेरे बहुत काम आता है। यह मेरा अनुभव जन्य मत है कि मैदान में लड़ने वाले सिपाही को चुस्त दुरुस्त रखने के लिए जिस प्रकार नित्य की कवायद

नितांत आवश्यक है। उसी प्रकार केवल साहित्यिक वातावरण में ही रहने वाला कथा लेखक मेरे विचार से घाटे में रहता है। उसे विविध वातावरणों से अपना सीधा सम्पर्क निःसंकोच स्थापित करना चाहिए।"[1]

नागर जी की पहली कहानी सन् 1933 में छपी और 1935 में 'वाटिका' नाम से कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ। इस संग्रह को पढने के बाद प्रेमचन्द ने उनसे कहा 'यह तो गद्य काव्य की सी चीजें हैं। मैं रियलिस्टिक कहानियाँ चाहता हूँ, जिसका आधार जीवन पर हो, जिनसे जीवन पर कुछ प्रकाश पड़ सके। मैने वाटिका के दो चार फूल सूँघे। अच्छी खुशबू है।"[2]

प्रेमचंद ने जो नसीहत दी, अमृत लाल नागर के मन में वे इस प्रकार बैठीं कि उनकी दृष्टि ही बदल गई। 'महाकाल' उपन्यास का कथा क्षेत्र और संवेदना 'वाटिका' की कड़ी में नहीं हैं, वे उस रियलिस्टिक परम्परा की कड़ी है जिसे प्रेमचन्द ने उनसे चाहा था। अपने समाज की ऐसी मानवीय भूख को गद्य काव्य में लिखा ही नहीं जा सकता। भावुकता से ऊपर उठकर यथार्थ की दुनियाँ से साक्षात्कार करते नागर जी 'महाकाल' से अपनी नई साहित्यिक दुनियाँ का आरम्भ करते हैं। यह सहज काम नहीं है। जीवन अनुभवों की जितनी जीवंतता यथार्थ साहित्य को चाहिए यद्यपि उसकी कमी नागर जी के पास नहीं है फिर भी उसकी आँच तो चाहिए ही। प्रेमचंद का यह अनुभव और प्रभाव नागर जी पर आजीवन रहा।

---

[1] नया जीवन, मई – जून 1962

[2] नीर क्षीर – अमृत लाल नागर अंक, 15 अगस्त 1966 सम्मतियाँ एवं सन्देश

जीवन को मुक्त हृदय और मुक्त मन से जीने वाले साहित्यकारों में उनका नाम सदा अग्रणी रहेगा। उनकी लेखनी की सदा यह विशेषता रही है कि वह जिस विषय से जुड़ी उससे एकाकार हो गई। कोरी कल्पना का सहारा न लेकर जैसा देखा, सुना, अनुभव किया, भोगा उसी को वाणी दी और अभिव्यक्ति सामर्थ्य की विलक्षण प्रतिभा ने उन्हें पात्रों, घटनाओं, स्थितियों, चरित्रों और अवस्थाओं के साथ समरस कर दिया। बोली, भाषा, उक्तियाँ, लहजा सब कुछ यथार्थ के साँचे में ढ़ला हुआ। सब कुछ जीवन के निकट हृदय की गहराइयों को छूने वाला, समाज के विभिन्न रूप और रंग। जीवन के विभिन्न स्वरूप और चित्र। सब कुछ साकार होकर बोलता सा जान पड़ता है।

नागर जी की लेखकीय व अनुभवी दृष्टि से समाज का कोई हिस्सा या समस्या बची नहीं है। हर समस्या पर उन्होंने विस्तार से विचार प्रकट किए हैं इसीलिए उन्होंने अपने उपन्यासों का फलक बहुत विस्तृत चुना है हालांकि उस विस्तार के खतरे भी हो सकते थे लेकिन उनकी अपनी दृष्टि और अनुभव इस कार्य में सहायक हुए हैं। अकाल से लेकर बौद्धिक अकाल तक पर उन्होंने अपनी कलम चलाई है। उनकी अनुभवी दृष्टि नर–नारी के पारस्परिक संबंध, राजनीतिज्ञों की भूमिका, सामाजिक सरोकार, घर्म की संकुचित व्याख्या, अछूत, समस्या, दहेज कुप्रथा, अनमेल विवाह आदि की समस्या ऐसे मसले हैं जिन पर नागर जी ने खुल कर लिखा है। उनकी दृष्टि व्यापक है और उनके अनुभव विशद।

नागर जी की अनुभूति इतनी गहरी है कि प्रत्येक उपन्यास में कथा का विस्तार स्वतः ही होता चला जाता है। अनगिनत पात्रों को लेकर रचा गया संसार अत्यधिक विशद है। नागर जी के गहरे अनुभवों को देखकर आश्चर्य होता है। पाठक जिन विषयों को जानना चाहता है, नागर जी उससे आगे बताते चलते हैं के किसी पात्र, घटना या परिस्थिति की तह

में जाये बिना नहीं छोड़ते। इतने सघन अनुभव कम से कम हिंदी साहित्य में तो प्रेमचन्द्र के बाद अन्य किसी लेखक में नहीं है। यही कारण है कि अधिकांश लेखक एक दो उपन्यास लिखकर स्वयं को दुहराने तिहराने लगते हैं। असल में अनुभवों की समृद्धि और जनसामान्य से हार्दिक जुड़ाव ही रचना को यथार्थ और कालजयी बनाता है। यह कला नागर जी में बड़ी मात्रा में है। नागर जी ने मानव जीवन में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं व अपनी अनुभवी दृष्टि से जो गहन अनुभव प्राप्त किये उन्हें अपने उपन्यासों में शब्द रूपी मोती का आकार देकर एक सुन्दर माला के रूप में गूँथ दिया है।

अमृत लाल नागर उन उपन्यासकारों में से एक है जिन्होंने नित नवीन विषयों व गहन अनुभवी जीवन दृष्टि को लेकर रचनाओं का सृजन किया है। विषय की दृष्टि से उनकी प्रत्येक रचना अछूते और नवीन विषय को लेकर चली। उनकी गहन अनुभूति उनकी समस्त रचनाओं में दिखाई देती है। रचना कहानी, उपन्यास या सर्वेक्षण हो उसमें गहन अनुभवी दृष्टि का बोध सर्वत्र होता है। एक चिंतनशील व अनुभवी रचनाकार के रूप में नागर जी अपनी रचनाओं में सर्वत्र दिखाई देते हैं। उनके चिंतन का स्वरूप समाज के बाह्य और आन्तरिक रूप से संघर्ष करता चलता है। जन मानस में उठाने वाले प्रश्नों को सदा उन्होंने बड़ी सतर्कता के साथ प्रस्तुत किया है। 'महाकाल' से लेकर 'पीढ़ियाँ' तक के उपन्यासों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि उनका हर उपन्यास विषयगत आधुनिकता व नितान्त नवीन अनुभवों की दृष्टि से बेजोड़ हैं। देश में जब किसी विशिष्ट परिस्थिति के कारण कोई प्रश्न उठा और जिसने समस्त भारत को हिलाकर रख दिया, उसका प्रभावी चित्रण नागर जी ने अपने उपन्यासों में किया है। उनका प्रथम उपन्यास 'महाकाल' बंगाल के अकाल को और उसकी भीषणता को प्रभावी रूप में चित्रित करता है। इस उपन्यास में व्यक्ति तथा समाज संबंधी मूल्यों की सच्ची अनुभूति आधुनिक दृष्टि से अभिव्यक्ति हुई है। मनुष्य भूख से किस

प्रकार से पीड़ित होता है। नागर जी ने इसे स्वयं की खुली आँखों से देखा, उसी दृश्य और अनुभूति का यथार्थवादी चित्रण 'महाकाल' में हुआ है। विषय के प्रतिपादन की उनकी अपनी निजी मौलिक शैली है। व्यक्ति के संकीर्ण स्वार्थ कितनी निर्ममता से समाज का गला घोंटते हैं, इसे महाकाल में सहज रूप से देखा जा सकता है। 'महाकाल' की भूख ने पूरे वातावरण को व्याप्त कर लिया था। समकालीन कविता के प्रमुख कवि 'लीलाधर जगूड़ी' ने भूख के संदर्भ में कहा है–

> "चोंच चाहे छोटी हो या बड़ी
>
> भूख का जलजला एक है।"

'भूख' की यह भीषणता 'महाकाल' में साकार हुई है। भूखा व्यक्ति भूख मिटाने के लिए किसी भी प्रकार का अमानवीय व अनैतिक कार्य करने के लिए विवश हो जाता है। यदि हम कहें कि भूख ही मनुष्य को कई बार अनैतिक और अमानवीय बनाती है तो अनुचित नहीं होगा। अकाल जैसे विषय को लेकर अनेक रचनाकारों ने कुछ न कुछ लिखा है किन्तु 'महाकाल' को परिवेश की पूरी भीषणता के साथ व भूख की जिस गहन अनुभूति के साथ नागर जी ने लिखा है वह अन्यत्र दुर्लभ है।

'महाकाल' की कथावस्तु के माध्यम से नागर जी ने व्यक्ति के अपने स्वार्थ पर कठोर प्रहार किया है और इस संबंध में श्री नरेन्द्र शर्मा की निम्नलिखित पंक्तियों को शत प्रतिशत प्रमाणित किया है जो उपन्यास के आमुख के रूप में उन्होंने उद्धृत की है–

> "स्वार्थ की छैनी लिए लेकर हथौड़ा लोभ का
>
> मनुज ने निज पूर्ण पावन, मूर्ति को खंडित किया।"

उपन्यास के प्रारम्भ में ही नागर जी ने प्रश्न उठाया है– 'व्यक्तिगत सत्ता का मोह सामूहिक रूप से मानव की इस समस्या से व्यक्ति क्या किसी भी रूप में अछूता बच सकता है? यह अशांति व्यक्ति के गलत स्वार्थ की कहानी कहती है .... जीवनी शक्ति से जीवन नाश करने का हठ – यह कैसा मोह है। बुद्धि का यह विरोधाभास क्यों? एटम के युग में व्यक्ति के स्वार्थ और समाज की आर्थिक गुलामी के युग में यह भयंकर खून खराबी, यह अमानविकता भूख का यह ताण्ड़व, महामारी, दुश्चितायें, यह घृणा, यह निराशा, यह प्रलय ही सर्वथा शोभन और संभव है। यदि कुछ अशोभन है, तो विवेक, सद्बुद्धि, सज्ञान, सदाचार, ऐक्य और प्रेम।

यह 'अशोभन – असंभव' ही महाकाल के रूप में आपके कर कमलों में साग्रह समर्पित है।"[1]

हिन्दी के अनेक लेखकों ने इस मानवीय विभीषिका का प्रत्यक्ष साक्षात्कार करके अपने अनुभव जगत् का विस्तार अभूतपूर्व किया। रांगेय राघव की तरह ही अमृतलाल नागर ने भी इस मानवीय विभीषिका को निकट से बंगाल जाकर देखा था। अपनी भूमिका में इस ओर संकेत करते हुये नागर जी ने लिखा है – " सन् 43 के बंग दुर्भिक्ष में मनुष्य की चरम दयनीयता और परमदानवता के दृश्य मैने कलकत्ता में अपनी आँखों से देखे थे। सियालदह स्टेशन के प्लेटफार्म कलकत्ता की सड़कों के फुटपाथ ऐसे वीभत्स करुणा से भरे थे कि देख – देख कर आठों पहर जी उमड़ता था। कलकत्ता वालों को उन

[1] समर्पण महाकाल – (अमृत लाल नागर)

दृश्यों से फिर जाने के कारण अपना शहर काटता था। इतनी बड़ी भूख के वातावरण में लोगों के मुँह में कौर लेते नहीं बनता था।"[1]

सेठ बाँकेमल

प्रयोगात्मक उपन्यास 'सेठ बाँकेमल' में नागर जी ने वर्तमान जीवन के प्रति अपने असन्तोषपूर्ण मन को व्यतीत हुये जीवन को श्रेष्ठ सिद्ध कर प्रस्तुत किया है। आज का जीवन जिस तरह से यूरोपीय सभ्यता से युक्त है, जिस जीवन में नीरसता ही सर्वोपरि है नागर जी ने बाँकेमल के मुखारबिन्दु से हास्य और व्यंग्य के तानों – बानों से अतीत का सफल चित्रण कर अतीत को श्रेष्ठ सिद्ध किया है। 'सेठ बाँकेमल' हिन्दी उपन्यास का एक अद्भुद चित्र है। जो बहुत ही सहज भाव से अपने युग की जिसमें उसकी जिन्दगी का अधिकांश बीता हुआ है। प्रगतिशील और प्रतिक्रियावादी दोनों भूमिकाओं को स्पष्ट करता है। एक मिटते हुये वर्ग और एक मिटती हुयी संस्कृति को हास्य और व्यंग्य की धार से गुजारते हुये यथार्थ की सजीव छवियों के साथ नागर जी ने इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है। ' सेठ बाँकेमल ' के विषय में एक साक्षात्कार में उन्होंने स्वीकार किया है। ' मेरी अनेक श्रेष्ठ मानी जाने वाली हास्य तथा व्यंग्य की रचनायें अधिकतर मेरे हारे दुःख भरे क्षणों में उपजी हैं। इसका एक कारण है मैं बहुत देर तक अपने आप को कुंठित अवस्था में नहीं रख पाता।' इस उपन्यास को नागर जी ने नवीन बातचीत की शैली में लिखा है।

---

[1] भूख संस्करण 70, भूमिका पृ. 5

बूँद और समुद्र

प्रस्तुत उपन्यास में नागर जी ने लखनऊ के एक उस चौक मुहल्ले के जीवन का चित्रण किया है जिसका उन्होंने लखनऊ में रहकर विभिन्न रूप से अनुभव प्राप्त करके उपन्यास का रूप प्रदान किया है। उन अनुभवों व अपने जीवन में प्राप्त होने वाले विभिन्न अनुभवों को जिस वृहद् रूप में नागर जी ने अपने उपन्यास में व्यक्त किया है। वह अत्यन्त दुर्लभ है। नागर जी ने उस मुहल्ले की बोली, भाषा सामाजिक जीवन को अपनी लेखनी द्वारा चित्रित किया है। इस रचना में उन्होंने व्यक्ति और समाज को एक दूसरे का अभिन्न अंग माना है। प्रस्तुत उपन्यास में सामाजिक जीवन के साथ व्यक्ति–जीवन और युग–जीवन को भी नागर जी ने अत्यन्त गहराई में जाकर उपन्यास में प्रस्तुत किया है। कतिपय समीक्षकों ने इसे क्लैसिकल परम्परा का उपन्यास माना है।[1] और कुछ ने इसे महाकाव्यात्मक भूमिका का उपन्यास कहा है।[2]

'बूँद और समुद्र' में आँचलिकता का समबन्ध नागरिक जीवन से है। इस उपन्यास में नागर जी ने लखनऊ के प्रमुख तथा पुराने मुहल्ले चौक में केन्द्रित रहकर उस मुहल्ले की अपनी खास रेखाओं को समूचे वातावरण व सामाजिक जीवन को वहीं की बोली–बानी में एक सजीव व्यक्तित्व देने की चेष्टा की है।[3]

---

[1] माध्यम मई 1965 ' व्यक्ति और समाज के बीच एक निष्क्रिय प्रतिक्रिया – डा. रघुवंश – पृ. 100
[2] आस्था और सौन्दर्य – डा. रामविलास शर्मा पृ. 134
[3] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 85

इस उपन्यास में खास मुहल्ले के माध्यम से सम्पूर्ण – भारतीय जीवन को लेखक ने बड़ी ही कुशलता से प्रस्तुत किया है। चौक मुहल्ले का सामाजिक जीवन बूँद का स्थानापन्न है तो वृहत् भारतीय समाज को समुद्र की संज्ञा दी जा सकती है। इस उपन्यास में नागर जी ने व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों की समस्या को उठाया है और दोनों के अपने विशिष्ट महत्व को प्रतिपादित किया है।[1]

प्रस्तुत उपन्यास में नागर जी ने ताई नामक जिस चरित्र को प्रमुखता दी है। वह वास्तव में नागर जी के अनुभूति जगत् का पात्र है। अपने बचपन में उन्होंने इस तरह की बुढ़िया को देखा था जिसे बच्चे, बड़े, बूढ़े सभी चिढ़ाते थे वह चिढ़कर उन्हें गालियाँ सुनाती थी जिसे सुनकर बच्चे, बड़े, बूढ़े सभी हँसते थे।

प्रस्तुत उपन्यास में अमृत लाल नागर ने वर्णनात्मक शिल्प – विधान के अन्तर्गत लिखा है। नागर जी का यह उपन्यास उद्‌देश्य, महत्त्व और विषय की दृष्टि से नितान्त नवीन है। इस उपन्यास में नागर जी ने एक विशाल कैनवास पर अनेक सामाजिक विषयों का चित्रण करते हुए अपनी गहन अनुभूतियों को उड़ेल सा दिया है इस उपन्यास के प्रमुख विषय में अपने अनुभवों को प्रस्तुत करते हुए पुरानी समाज व्यवस्था के बनते बिगड़ते स्वरूप को प्रस्तुत किया है। श्री राजेन्द्र यादव ने इसे 'गोदान' के बाद का उत्तर भारतीय जीवन का दूसरा महाकाव्य कहा है।[2]

---

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 85
[2] विवेक के रंग (सं0 देवी शंकर अवस्थी) 'दो आस्थायें' राजेन्द्र यादव पृ. 251

'बूँद और समुद्र' उपन्यास को अनेक समीक्षकों ने आँचलिक उपन्यास से सम्बोधित किया है क्योंकि इसमें शहर के विशिष्ट मुहल्ले का चित्रण, वहाँ की भाषा, लहजा, तरीका, संस्कार आदि के साथ किया गया है।

नागर जी ने इस उपन्यास में बूँद के समान चौक मुहल्ले में समुद्र की तरह विशाल भारतीय सामाजिक जीवन के दर्शन कराये हैं। चौक मुहल्ले की सीमा में नित्य प्रति घटने वाली प्रमुख अप्रमुख सभी घटनाएँ वहाँ के गली–कूचों में बसने वाले परिवारों का अपना भीतरी जीवन, उनका अर्थ और काम–जन्य कुंठाएँ उनके सामाजिक आचार–विचार, आये दिन होने वाले लड़ाई – झगड़े जिनमें स्त्रियाँ प्रमुख भूमिका अदा करतीं हैं। गाली गलौज, टोना–टुटका तथा भांति के अन्य धार्मिक, पाखण्ड "पीपल के नीचे का चबूतरा, हुक्के, नीम की दातूनें, अखबार, गजक और मूँगफली बेचने वाले, मक्खन की तारीफ, कोन पर पाँच–पाँच रुपये रख दो और भाग न दबे, कुल्फी की तारीफ, गोल दरवाजे में खरीदो और रानी कटरे में जाकर खाओ और तारीफ ये कि जरा भी न गले, तीतरों को बुलाता हुआ परसोत्तम, सेक्रेटरिएट के बाबू गुलाब चन्द्र, लखनऊ की खास गजी को उपनाम की तरह अपने वाक्यों में जड़ने वाले, लाला मुकुन्दीमल, मुहल्ले से लेकर विश्व तक की समस्याओं पर वाद–विवाद, कथा बाँचते हुए पण्डित जी[1]" आदि एक से एक सजीव चित्र इतनी स्वाभाविक भूमिका के साथ कथावस्तु का अंग बने हैं कि डा. राम विलास शर्मा का यह कथन सर्वाशंतः सत्य प्रतीत होता है – "वातावरण के छोटे बड़े तथ्य जो मनुष्य की दुःख पूर्ण या मनोरंजक

---

[1] आस्था और सौन्दर्य – डा. राम विलास शर्मा पृ. 135

स्थिति की ओर संकेत करते हैं। लेखक की निगाह से बच नहीं पाते। वह वास्तव में गली कूचों का कवि है।''[1]

अमृत और विष

नागर जी का यह उपन्यास कथा शिल्प की दृष्टि से एक नवीन तथा साहसपूर्ण प्रयोग है। इसमें नागर जी ने अपने दूसरे उपन्यासों से सर्वथा भिन्न कथा कहने की एक नई पद्धति अपनाई है। 'अमृत और विष' में दोहरे कथानक का संबंध उनके द्वारा लिखे गए उपन्यास से है। उपन्यास में ये दोनों कथानक साथ – साथ गतिशील हुए हैं और दोनों एक दूसरे से स्वतन्त्र है। यहीं नहीं जिस कथानक का सम्बन्ध अरविन्द शंकर के उपन्यास से है उसके अन्तर्गत वे उपन्यास रचना के कतिपय महत्वपूर्ण सूत्रों का विवेचन करते है। उदाहरण के लिए वे बीच -- बीच में उपन्यास की रचना प्रक्रिया को भी स्पष्ट करते चलते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि यह टेक्निक हिन्दी उपन्यास में सर्वथा भिन्न और नई है। इन बातों का विवेचन नागर जी ने आख्यानक शैली में बड़े ही सहज ढंग से किया है। वे बाते किसी समीक्षक का निष्कर्ष न बनकर एक रचनाकार के अपने अनुभवों का अंग बनकर आईं हैं। नागर जी के खट्टे मीठे अनुभवों ने उपन्यास के महत्त्व को और भी बढ़ा दिया है।''[2]

नागर जी ने 'अमृत और विष' नामक उपन्यास में समाजवादी यथार्थ का विस्तृत चित्रण किया है। इस उपन्यास में वर्तमान जीवन की सामाजिक राजनीतिक

---

[1] आस्था और सौन्दर्य – डा. राम विलास शर्मा पृ. 136
[2] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 119

तथा आर्थिक समस्याओं को व्यंग्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। विक्टोरिया कालीन युग से वर्तमान युग की ऐतिहासिक स्थिति में अनेक पहलुओं का दिग्दर्शन हुआ है। नागर जी के रचना संघर्ष ने 'अमृत और विष' को 'बूँद और समुद्र' की तुलना में अधिक समसामयिक और अधिक प्रासंगिक कृति का रूप प्रदान किया है। इसकी समसामयिकता एवं प्रासंगिकता इसकी वस्तु के कारण नहीं; प्रत्युत इसकी शिल्पगत अभिनव भंगिमा के कारण भी है जिसके मूल में प्रयोगात्मकता है।[1]

डा0 धर्मवीर भारती के अनुसार –"प्रयोग की दृष्टि से उपन्यास का यह कथाशिल्प रोचक और सफल तो है परन्तु इस प्रयोग में दो खतरे भी थे। एक तो इसमें इतना उखड़ापन आ जाये कि कथा की गति बाधित होने लगे और दूसरे वास्तविकता या प्रमाणिकता की जो भ्रान्ति औपन्यासिकता का एक महत्त्वपूर्ण तत्व है वह स्थापित ही न हो पाये और सारी कहानी बनावटी मालूम होने लगे पहले खतरे से तो यह उपन्यास पूरी तरह नहीं बच पाया है लेकिन नागर जी की प्रतिभा और कथा शैली की यह उपलब्धि है कि अपने शिल्प और पात्रों को गढ़ने की सारी प्रकिया को पाठक के समक्ष बिल्कुल उद्घाटित कर देने के बाद उन्होंने न केवल उससे आत्मीयता और अन्तरंगता स्थापित कर ली है वरन् कथा को एक नये स्तर पर वास्तविकता और प्रामाणिकता का स्वाद दे दिया।"

---

1 डा0 अतुलवीर अरोड़ा – आधुनिकता के संदर्भ में आज का हिन्दी उपन्यास पृ. 232

शतरंज के मोहरे

'शतरंज के मोहरे' नागर जी का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास है। नागर जी ने इस उपन्यास में राजे, नबाबों की ह्रासशील जिंदगी और उनके द्वारा पोषित तथा पल्लवित संस्कृति का जो चित्र अवध की नबाबी को केन्द्र में रखकर प्रस्तुत किया है उसका संबंध खास अवध प्रदेश से ही नहीं समूचे भारत के राजा -- नवाबों की पतनशील जिंदगी तथा उनके द्वारा पैदा की जाने वाली विकृति से है। इस उपन्यास में सन् 1820 से सन् 1837 तक के लखनऊ के नवाबी शासन की घटनाएँ हैं जिनका संबंध शाहे अवध गाजीउद्दीन हैदर तथा उनके पुत्र नसीरुद्दीन हैदर के काल से है। अवध के इतिहास की नागर जी को गहरी तथा प्रामाणिक जानकारी है यही कारण है कि इस उपन्यास में इतिहास का जो अंश है वह भी अत्यन्त प्रामाणिक है। उन्होंने नवाबों के सामंतवादी शासन पर गहरा व्यंग्य किया है। लखनऊ के दोनों नवाबों गाजीउद्दीन हैदर तथा नसीरुद्दीन हैदर के सारे क्रियाकलाप बादशाह बेगम तथा आगामीर के संघर्ष, नवाबों का सनकीपन, निर्वीर्यता, राजमहल के आन्तरिक कुचक्र, अंग्रेज रेजीडेण्टों की साजिशें आदि घटनायें ऐतिहासिक आधार पर वर्णित की गईं हैं।''[1]

इस उपन्यास में नागर जी ने नारी जीवन की विवशता को अपनी सम्पूर्ण संवेदना के साथ चित्रित किया है। नागर जी ने उस समय के शोषित नारी समाज की व्यथा, विवशता तथा असहायता को अपनी सम्पूर्ण सामाजिक और अनुभवी दृष्टि के साथ प्रस्तुत किया है।

---

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास सहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 175

नागर जी ने अपने ऐतिहासिक उपन्यास 'सुहाग के नूपुर'' में दक्षिण भारत के उस समाज की झलक प्रस्तुत की है जिसमें कुलवधू की सर्वाधिक प्रतिष्ठा थी। वह परिवार की लक्ष्मी मानी जाती थी तथा पारिवारिक जीवन के सुखी भविष्य का स्रोत समझी जाती थी। कुलवधुओं के साथ – साथ समाज में नगर वधुओं का भी सम्मान था जिन्हें सामाजिक जीवन की सम्पन्नता का सूचक माना जाता था। ये नगरवधुएँ धनिकों के मनोरंजन के लिए थीं। संगीत और नृत्य उनका प्रमुख पेशा था। इस उपन्यास में नागर जी ने कावेरी पट्टणम नगर के दो प्रमुख सर्वश्रेष्ठ धनी सेठ व इनके पुत्र व पुत्री कोवलन व कन्नगी का विवाह, उसके बाद कोवलन का नगरवधू माधवी के प्रेमाकर्षण में फंसकर अपनी पत्नी व वंश की प्रतिष्ठा को दाँव पर लगाकर अपना स्वयं का जीवन भी पतन की ओर ले जाता है। 'सुहाग के नूपुर' उपन्यास को नागर जी ने एक सामाजिक समस्या के रूप में प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास के माध्यम से नागर जी ने समाज में वेश्या की स्थिति को चित्रित किया है जिसे कि पुरुष वर्ग ने ही वेश्या बनाकर उसको समाज की दृष्टि में नीचा स्थान प्रदान किया है। नागर जी ने सदियों से समाज में पीड़ित नारी के कष्टों को अनुभव करते हुए उसकी स्थिति को बदलने का प्रयास करने की चेष्टा की है। नागर जी ने यह अनुभव किया कि प्राचीन काल की नारी व आधुनिक काल की नारी दोनों ही अपने समाज में किसी न किसी प्रकार पुरुष वर्ग के द्वारा शोषित है। पुरुष स्त्री को न घर में रखकर ही सुखी कर पाया न वेश्या बना कर ही। कन्नगी और माधवी दोनों ही पुरुष के अत्याचार से पीड़ित हैं।

प्रकाश चन्द्र मिश्र के अनुसार – इस प्रकार देखा जाय तो माधवी तथा कन्नगी दोनों ही समाज और उसके नियमों द्वारा पीड़ित हैं। ऐसी स्थिति में यदि कहा जाये कि उपन्यास में नागर जी ने वेश्या या कुलवधू की पीड़ा नहीं वरन् सामाजिक व्यवस्था के चक्र में पिसती कराहती नारी मात्र की दुःख कथा कही है तो अधिक सही होगा।"[1]

'ये कोठेवालियाँ' नामक उपन्यास जो कि सामाजिक सर्वेक्षण शैली पर आधारित है, में नागर जी ने वेश्यायों के जीवन के विविध रूपों को स्पष्ट किया है। नागर जी का अपना अनुभव है कि वेश्या एक असहाय नारी है जो कि परिस्थितियों की शिकार होकर इस पेशे को अपनाती है। नागर जी को नारी की इस दयनीय व समाज से उपेक्षित स्थिति से सहानुभूति है इस वर्ग की नारी का रूप भले ही काल के साथ – साथ परिवर्तित हुआ है लेकिन उसकी पीड़ा विवशता ज्यों की त्यों बनी रहती है। एक वेश्या बाह्य रूप से तड़क–भड़क, विलासी जीवन व्यतीत करती है लेकिन वास्तव में वह मजबूर तथा आत्मिक रूप से वह अत्याचारों से पीड़ित नारी है। जो समाज में अपनी भावनाओं को कुचलकर जी रही है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागर जी ने वेश्या जीवन के कठिन अनुभवों को उन लोगों से मिलकर अनुभव किया व लेखनी उठाकर उनकी समस्त पीड़ा को जनमानस के समक्ष रखा।

'नाच्यौ बहुत गोपाल' आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया एक अत्यधिक गतिशील उपन्यास है। इस रचना में नागर जी ने डायरी शैली या इण्टरव्यू शैली का प्रयोग किया है। "नाच्यौ बहुत गोपाल" को इसी शैली का उपन्यास कहा जाए तो

---

[1] प्रकाश चन्द्र मिश्र – अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य पृ. 201

अनुचित नहीं होगा। इस उपन्यास के माध्यम से नागर जी ने भंगी बस्ती को पहली बार एक जबरदस्त विचार के रूप में चित्रित किया है।"[1] इसमें "अंशधर शर्मा" नामक पत्रकार अपनी कल्पना योजना द्वारा उपन्यास की प्रमुख चरित्र निर्गुणियाँ की कहानी को आगे बढ़ाते हैं। डा. हेमराज कौशिक के अनुसार –"यह उपन्यास समाज के गर्हित कहे जाने वाले वर्ग मेहतर जाति और सवर्णों के इर्द गिर्द बँधी हुई मोटी जकड़बंदी और इस दीवार के दोंनों छोर पर अपने पाले हुए अहं तथा मिथ्याडंबरों का सजीव आलेख है।[2]" नागर जी का यह उपन्यास अत्याचारों से पीड़ित एक नारी की व्यथा भी प्रस्तुत करता है जो समाज के कारण व्यथित है। उसने नारी पीड़ा को झेलने के साथ दलित वर्ग की पीड़ा को भी झेला है। उन्होंने एक ही नारी को जिन्दगी के विविध मोड़ों पर गुजरते हुए प्रस्तुत किया है। नागर जी ने इस उपन्यास के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि कोई भी व्यक्ति जन्म से ही सवर्ण नहीं होता जो लोग अपना सवर्ण होने का दावा करते हैं हो सकता है कि कल कोई ऐसी विवशता आ जाये जो उन्हें नीच वर्ण अपनाने पर विवश कर दे।

'सात घूँघट वाला मुखड़ा' नागर जी का राजनीतिक उद्देश्य पर लिखा गया उपन्यास होते हुए भी श्रंगारिक प्रतीत होता है । इस उपन्यास की नायिका के जीवन में कई तरह के उतार चढ़ाव आते हैं तथा उसके चरित्र के कई पहलू नजर आते हैं। इस कथा की केन्द्र बिन्दु बेगम समरू हैं। जुआना बेगम जो कि बेगम समरू के रूप में हमारे सम्मुख आतीं है। वह वशीर खाँ के पिता द्वारा खरीदी हुई लड़की है वह वशीर

---

[1] आधुनिक उपन्यास – विविध आयाम – डा. विवेकी राय पृ. 9

[2] अमृत लाल नागर के उपन्यास – डा. हेमराज कौशिक पृ. 110

खाँ से प्रेम करती है तथा शादी करके अपना जीवन यापन करना चाहती है। परन्तु वशीर खाँ के पिता उसे शादी न करने की सौगन्ध दिलाकर उसके मन में यह कूट – कूट कर भर देते हैं कि वह केवल हुकूमत करने के लिए पैदा हुई है। इस प्रकार मुन्नी नाम की वह साधारण कश्मीरी लड़की नवाब समरू को दस हजार अशर्फियों में बेंच दी जाती है। धीरे–धीरे वह अनेक पुरुषों से अनैतिक संबंध बना कर पुरुषों को अपना गुलाम सा बना लेती है। "बेगम समरू को केन्द्र में रखकर अमृत लाल नागर 'देह' और 'मुल्क' की राजनीति से जुडे घपले को उद्‌घटित करते हैं'।"[1] लवसूल के साथ पकड़े जाने पर वह सब ओर से निराश होकर ईश्वर की शरण में चली जाती है। नागर जी ने अनुभव किया कि यदि नारी अपने उचित मार्ग की ओर न बढ़कर यदि गलत रास्ते की ओर बढ़ जाए तो उसकी महत्वाकांक्षाएँ भी बहुत अधिक बढ़ जातीं है जो कि उसे अनैतिक कार्यों की ओर ले जाकर पतनोन्मुख कर देतीं हैं। अन्त में ऐसी नारियों का सांसारिक जीवन से शान्ति न मिलने पर ईश्वर की खोज में निकलना ही सबसे सच्चा मार्ग है।

पौराणिक विषय को अपने उपन्यास का माध्यम बनाते हुए नागर जी ने 'एकदा नैमिषारण्ये' नामक पौराणिक रचना का निर्माण किया है। यह रचना पौराणिक सभ्यता और संस्कृति को हमारे सामने प्रस्तुत करती है। इस उपन्यास में भारतीय एकता को प्रतिपादित कर यह कहने में विशेष जोर देते हैं कि कितनी भी प्रतिकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जायें परन्तु भारत की एकता सदैव अक्षुण्ण रहेगी। डा. सुदेश बत्रा के शब्दों में – वस्तुतः नागर जी का 'एकदा नैमिषारण्ये' उपन्यास समस्त वैचारिक विभिन्नता

---

[1] अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व और रचना संसार – मधुरेश पृ. 78

और जटिलता के बावजूद लोक कल्याण और सांस्कृतिक अभ्युदय का एक अभिनव साहसिक चरण है।"[1]

इस रचना को लिखने का मूल उद्देश्य हिन्दू संस्कृति को निर्मित करना है। उन्होंने इस उपन्यास की भूमिका में स्पष्ट किया है – "नैमिष आन्दोलन को ही मैंने वर्तमान भारतीय हिन्दू संस्कृति का निर्माण करने वाला माना है। वेद, कर्मकाण्डवाद, उपासनावाद, ज्ञानमार्ग आदि का अन्तिम रूप से समन्वय नैमिषारण्य में हुआ। अवतारवाद रूपी जादू की लकड़ी घुमाकर परस्पर विरोधी संस्कृतियों को घुलामिलाकर अनेकता में एकता स्थापित करने वाली संस्कृति का उदय नैमिषारण्य में हुआ है और मुख्यतः यह काम एक राष्ट्रीय दृष्टि से ही किया गया था।"[2]

'मानस का हंस', 'खंजन नयन', उपन्यासों में तुलसीदास तथा सूरदास के माध्यम से नागर जी ने तत्कालीन समाज के अन्तर्विरोधों को देखा, अनुभव किया और इन ऐतिहासिक पुरुषों के जीवन वृत्त के अनछुये अंशों को उजागर किया है। वास्तव में यह कार्य एक अनुभवी लेखक के सूक्ष्म हृदय की भावनाएँ ही कर सकतीं थीं यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण कार्य है। तुलसीदास, सूरदास ने जिस प्रकार मध्यकालीन बोध को नये सिरे से देखा है तथा मुगलकालीन भारत की सोई हुई आत्मा को झकझोरा है, तत्कालीन समाज की दृष्टि से इन महापुरुषों का यह कार्य अद्भुद है। नागर जी ने इन महापुरुषों के जीवन में कौन कौन संघर्ष हुए? कैसे वे अपनी कमियों को सुधारते हुए ऊर्ध्वगामी हुए? इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया है। व्यक्ति जन्म से

---

[1] डा. सुदेश बत्रा – अमृत लाल नागर व्यक्तित्व , कृतित्व एवं सिद्धान्त -- पृ. 339

[2] अमृत लाल नागर – एकदा नैमिषारण्ये -- अपनी बात पृ. 13

नहीं कर्म से बड़ा होता है। तुलसीदास और सूरदास का जीवन भी इसी प्रकार है। किस तरह संघर्ष करते हुए वे उस शिखर तक पहुँचे? जहाँ पहुँचना हर व्यक्ति के लिए संभव नहीं है। अपने में खोए रहना, अपने लिए सोचना तथा व्यक्तिगत दुःख दर्दों को समाज के दुःखदर्दों से अधिक समझना व्यक्तिवाद है और इससे ऊपर उठकर समाज के लिए उत्थान के कार्य करना वास्तव में साधारण मनुष्य को महामानव की श्रेणी में पहुँचा देता है तथा वह व्यक्ति सदियों के लिए आदर्श पुरुष बन जाता है। नागर जी ने तुलसीदास और सूरदास के जीवन की जिन अनजानी घटनाओं को भी अनावृत किया है वह उनके जैसे अनुभवी लेखक का ही कार्य था। 'बिखरे तिनके' नागर जी की एक नवीनतम कृति है। उनकी अन्य कृतियों की भाँति यह कृति भी आज के समाज की कई समस्याओं और विसंगतियों को प्रकट करती है। इस उपन्यास के माध्यम से नागर जी ने पुरानी और नई पीढ़ी से संघर्ष, बेईमानी के प्रति युवकों का विरोध, भ्रष्टाचारी समाज में व्याप्त कुप्रथाओं को दूर करने का प्रयास किया है। नागर जी ने यह अनुभव किया कि वर्तमान समाज में नौकरशाही और भ्रष्टाचार हर जगह पर व्याप्त है। छोटे से छोटे व्यक्तियों से लेकर उच्च से उच्च अधिकारी तक इस भ्रष्टाचार रूपी कीचड़ के दलदल में फँसे हुए हैं। रिश्वत खोरी जैसा गलत काम आज के समाज में सामान्य बात हो गई है। सत्य व योग्यता का भी आज के समाज में कोई महत्व नहीं है। रिश्वत देकर आप किसी भी गलत कार्य को कर सकते हैं। उच्चाधिकारी रिश्वत लेकर अपने पद का दुरूपयोग करते हैं। सरकारी धन तो वे लूट ही रहे हैं साथ में गरीब जनता से भी उनके अपने अधिकारों के लिए निःसंकोच होकर रिश्वत लेते है। गुरूसरन बाबू को इसी प्रकार के चरित्र के रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'बिखरे तिनके' के माध्यम से

लेखक यह बताना चाहता है कि आज के युग में भ्रष्टाचार को नियंत्रित करना बड़ा कठिन कार्य है। डा० हेमराज कौशिक के अनुसार – 'इस उपन्यास में नागर जी ने आज की नौकरशाही, भ्रष्टाचार, नैतिक मूल्यों के पतन, दाँवपेच की राजनीति, रिश्वतखोरी, बिखरते संबंधों को व्यक्त किया है।"[1] 'बिखरे तिनके' उपन्यास के विषय में सुदीप पत्रिका का दृष्टिकोण इस प्रकार है –

अपनी सूक्ष्म प्रेक्षा क्षमता, मानव मन और व्यवहार की उनकी अद्भुद समझ और उनके अपने विस्तृत अनुभव भण्डार ने नागर जी को समकालीन सामाजिक तथा राजनीतिक परिवेश का रचनात्मक इतिहासकार बनाया है। इससे ज्यादा बड़ा काम कोई लेखक कर भी नहीं सकता।"[2]

'अग्निगर्भा' नामक उपन्यास मे नागर जी दहेज समस्या जो कि आधुनिक समाज का कोढ़ है इसी गहन समस्या का अनुभव करते हुए सीता को इससे पीड़ित दिखाते हुए समस्त पीड़ित नारियों की दुःख कथा कही है। नागर जी ने यह अनुभव किया है कि आज के स्वार्थी समाज में नारी चाहे कितनी पढ़ लिख जाये परन्तु उसे पुरुष द्वारा आर्थिक व मानसिक शोषण का शिकार होना ही पड़ता है। नागर जी का अपना अनुभव है कि दहेज प्रथा को समाप्त करने की कोशिश तो की जा रही है परन्तु यह समस्या खत्म होने का नाम नहीं ले रही बल्कि इसको लेने के तरीके में परिवर्तन आ रहा है। स्त्री युगों से पुरुषों के अत्याचारों से पीड़ित है और आज आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होने के बावजूद भी यह अत्याचार समाप्त नहीं हो रहा है। अन्याय के विरुद्ध उसके मन में

---

[1] अमृत लाल नागर के उपन्यास – डा० हेमराज कौशिक पृ0134

[2] सुदीप रविवार 27 नवम्बर से 3 दि. 1983 पृ. 45

ज्वालाएँ जलतीं रहतीं हैं यही ज्वालाएँ एकत्रित होकर उसे अग्निगर्भा बना डालतीं हैं। 'अग्निगर्भा' में नागर जी सीता के माध्यम से अपने अनुभव व्यक्त करते हुए कहते हैं – "आज कहते है कि स्त्री–और पुरुष दोनों ही के समान अधिकर है। झूठ–मूठ बिल्कुल झूठा स्त्री भले ही पुरुष की बराबरी में अन्तरिक्ष तक उठ गई हो, तीन–2 लोकतान्त्रिक देशों की प्रधानमंत्री बन चुकी हो पर आधुनिक नारी आज भी पाषाण युग की नारी की तरह से त्रस्त है।"[1]

'करवट' नागर जी की एक महान सफल औपन्यासिक कृति है जिसके माध्यम से नागर जी ने आधुनिक भारत का निर्माण करने की कोशिश की है। उपन्यास के मुख्यपृष्ठ पर लिखा गया है– जीवन और समाज की यह करवट अपने पीछे क्या कुछ छिपाये है?यह सब आज हमारे लिए आश्चर्य की बातें हो सकतीं हैं। परन्तु यही है वह जिसकी पीठिका पर आज समाज खड़ा है।" इस उपन्यास की घटनाएँ मध्ययुगीन भारत से संबंधित है इसलिए इसे ऐतिहासिक उपन्यास भी माना गया है। इस उपन्यास की रचना नागर जी ने भारत के उत्थान तथा नव निर्माण के उद्देश्य से की है। मध्ययुगीन भारत में कलकत्ता, लाहौर, लखनऊ के जन–जीवन के रहन–सहन, रीति–रिवाज, खानपान, त्यौहार आदि का नागर जी ने सूक्ष्मता से चित्रण किया है। अंग्रेजों की शासन व्यवस्था का भी वर्णन नागर जी ने इसमें किया है। नागर जी ने अनुभव किया कि अंग्रेज जो कि भारत में मात्र व्यापारी बनकर आये थे और कूटनीतिक चालों द्वारा शासक बन गए। उन्होंने यहाँ के नवाबों और बादशाहों के बीच आपस में फूट डालने का प्रयास किया और वे सफल हो गए। अपनी इसी अनुभूति को नागर जी

---

[1] अमृत लाल नागर – अग्निगर्भा – पृ. 23

ने 'करवट' उपन्यास के माध्यम से व्यक्त किया है। डॉ0 पुष्पा बंसल के शब्दो में– 'करवट' बहुत विशाल, ऐतिहासिक चित्रपट अनगिनत पात्र कुछ सर्जित तथा कुछ भारत के बहुत निकट के अतीत के इतिहास अर्थात् समाचारों से चयनित तथा विविध रंग, अनेक दिशाएँ, अनेक बिन्दु।"[1]

'पीढ़ियाँ' अमृत लाल नागर का अन्तिम उपन्यास है। इसमें नागर जी ने 'करवट' के आगे की कथा को लिखा है। इस "उपन्यास में अंकित लगभग अस्सी वर्षों के समय को इस समूचे कालखंड की जीवंतता को दो तरह से देखा जा सकता है। अंग्रेजों के आने के बाद वैज्ञानिक और औद्योगिक प्रगति के नाम पर जो परिवर्तन समाज में घटित हो रहे थे और पढ़े लिखे पैसे वाले लोग इस परिवर्तन के अनुरूप अपने को कैसे ढाल रहे थे और इस पूरी प्रकिया में जो संकान्ति कालीन एक खिचड़ी समाज बन रहा था उन विचारों, आस्थाओं और संस्कारों का द्वन्द्व भी इसी का हिस्सा है।"[2]

इस प्रकार नागर जी के अनुभूति जगत् को देखते हुए हम कह सकते हैं कि नागर जी ने यथार्थ में जो कुछ अनुभव किया है उसे ही शब्दों का रूप देकर अपना रचना संसार रचा है। कहीं भी उनकी रचनाओं में कृत्रिमता या बनावटीपन देखने को नहीं मिलता बल्कि उनकी रचना पढ़ने में पाठक खो सा जाता है।

---

[1] डा0 पुष्पा बंसल – अमृत लाल नागर भारतीय उपन्यासकार पृ0 सं0 107
[2] मधुरेश – अमृत लाल नागर व्यक्तित्व और रचना संसार

उपन्यास - घटना - अनुक्रम

- सामान्य से विशिष्ट का संकेत
- विशिष्ट से सामान्य का आंकलन
- अमृत लाल नागर के उपन्यास-घटना-अनुक्रम

उपन्यास - घटना - अनुक्रम

1. सामान्य से विशिष्ट का संकेत

अमृत लाल नागर जी ने दैनिक जीवन में घटित होने वाली विभिन्न यथार्थ परक घटनाओं को ही अपने उपन्यासों का आधार बनाया है परन्तु सन् 1972 में लिखित 'मानस का हंस' नामक उपन्यास में तुलसीदास के जीवन में घटित होने वाली सामान्य घटनाओं को विशिष्ट मानते हुए इन्हीं घटनाओं के माध्यम से नागर जी ने तुलसीदास को महाकवि के स्थान तक पहुँचाया है तुलसीदास जी 'मानस का हंस' के नायक हैं जिनके साथ विभिन्न घटनाक्रम जुड़े हुए हैं और सामान्य सी घटनाओं और विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों से संघर्ष करते करते अपने राम प्राप्ति के लक्ष्य तक पहुँचे। नागर जी ने तुलसीदास के जीवन की छोटी से छोटी घटना को पूरा स्पष्ट रूप प्रदान करते हुए उन्हें विशेष बना दिया है।

तुलसीदास के जन्म के समय ही एक ऐसी घटना घटी जिससे तुलसीदास को जन्म लेते ही गृह त्याग करना पड़ा। ज्योतिष के द्वारा पिता के यह जान लेने पर कि अभुक्त मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुआ पुत्र माता – पिता के लिए काल बनकर आया है तो वह मुनिया दासी के द्वारा रामबोला (तुलसी) को घर से बाहर भेज देते हैं। मुनियाँ अपनी सास पार्वती अम्मा नाम की भिखारिन को दे आती है और वह तुलसीदास का पालन पोषण करके उसे भी भीख के माध्यम से जीवन – यापन करना सिखाती है। फिर तुलसीदास के जीवन में एक घटना घटती है कि उसकी पार्वती अम्मा की मृत्यु हो जाती है और एक बार फिर अनाथ हो जाते

हैं। गाँव के जीवन से असन्तुष्ट और दुःखी तुलसी सूकर खेत जा पहुँचा वहाँ सरयू और घाघरा नदियों के पावन स्थान पर महावीर जी का एक छोटा सा मन्दिर था वहीं पर बन्दरों के आगे डाले जाने वाले गुड़ चना खाकर अपना पेट भरता व हनुमान जी से कहता – 'अब हम तुम्हीं से माँगेंगे हनुमान स्वामी, अब किसी के पास नहीं जायेंगे। तुम हमारा पेट भर दिया करो। हम तुम्हारा स्थान खूब साफ कर दिया करेंगे?"[1]

यहीं पर उनकी भेंट बाबा नरहरिदास से होती है। नरहरिदास की कृपा से तुलसी के मुण्डन, उपनयन संस्कार होते हैं। प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के बाद तुलसी दास जी काशी के महान् और प्रसिद्ध विद्वान शेष सनातन जी महाराज के पास उच्च शिक्षा ग्रहण करके तुलसीदास शास्त्री बन गये।

परन्तु मेघा भगत के सत्संग में गायिका मोहिनी को निहार शैशव के सुकुमार क्षणों से ही अनवरत ठुकराया जाने वाला उनका जीवन प्रेम की आग से सहसा फुंकने लगता है परन्तु मोहिनीबाई की माँ की फटकार सुनकर उनके हृदय पर पड़ा अज्ञान और मोह का पर्दा हट जाता है और इस बात पर तुलसीदास को बेहद पश्चात्ताप होता है–

" .... कभी मेघा भगत के शब्द के सहारे हूबहू उन्हीं के मन की तरह से छटपटाते हुए श्रीराम झलकते और कभी जंगल के आर पार अपने और मोहिनी के बिंब। राम और तुलसी .... मन ने पूछा 'इनमें कौन रहे? .... मन ने ही अपने कठिन मोह जाल को भेदकर सत्य को सकारा और फिर कुछ पल पश्चात्ताप में गूँगा हो गया। आँखें बरसने लगीं। मैंने राम को बिसारा। हे राम मुझे क्षमा कर"[2]

---

[1] अमृत लाल नागर – मानस का हंस पृ0 51
[2] अमृत लाल नागर – मानस का हंस पृ0 116

इस घटना के बाद तुलसीदास मेघा भगत और कैलाश के साथ तीर्थाटन करते हुए अपने गाँव विक्रमपुर आ गये। यहीं पर धीरे धीरे स्थितियों के क्रमिक विकास में तुलसी का विवाह रत्नावली से होता है। तुलसी का जीवन सुखमय व्यतीत होने लगता हैं। एक बार रत्नावली के मायके जाने पर आधी रात को तुलसी के पहुँचने पर, पति – पत्नी की बातों में तकरार हो जाने पर रत्नावली उलाहना देते हुए कहती है–

स्त्री और पुरूष में यही तो अन्तर होता है। नारी भले ही काम – वश माता क्यों न बने, किन्तु माता बनकर वह एक जगह निष्काम भी हो जाती है और पुरूष पिता बनकर भी दायित्व बोध भली प्रकार से अनुभव नहीं करता। सच पूछो तो वह किसी के प्रति अपना दायित्व अनुभव नहीं करता। वह निरे चाम का लोभी है, जीव में रमे राम का नहीं।"[1]

यह सुनकर तुलसी के कलेजे पर गाज सी गिर पड़ती है उनका मन और स्वर भीतर ही भीतर घुटने लगता है– "मैं कामी हूँ, मैं कामी हूँ, पामर हूँ। राम को छोड़कर चाम चाहा तो मुझे ये बातें सुननी पड रहीं है और कहाँ तक सुनोगे तुलसी? कहाँ तक सुनोगे? क्यों सुनोगे? क्या कापुरूष हो?"[2]

इस तरह इस एक सामान्य घटना ने तुलसी को उनके राम – प्राप्ति के लक्ष्य की ओर बढ़ने को प्रेरित किया और एक सामान्य रामबोला विशिष्ट महाकवि तुलसीदास बन गया। सामान्य सी घटने वाली घटनाएं तुलसीदास को आगे बढ़ने और संघर्ष करने का रास्ता प्रदर्शित करतीं रहीं और तुलसीदास जी अपने महाकाव्य रामायण के साथ साथ अन्य ग्रन्थों की रचना करते रहे। नागर जी ने तुलसीदास के जीवन में घटित होने वाली सामान्य से सामान्य घटना को विशिष्टता प्रदान करते हुए 'मानस का हंस' की रचना की है।

---

[1] अमृत लाल नागर – मानस का हंस पृ0 116

[2] मानस का हंस – अमृत लाल नागर पृ0 246

इसी तरह नागर जी ने 'बूँद और समुद्र' में महिपाल की आत्म हत्या, 'शतरंज के मोहरे' में कुदसिया बेगम की आत्म हत्या, 'नाच्यौ बहुत गोपाल' मे निर्गुनियाँ की आत्महत्या, 'अमृत और विष' में आई0ए0एस0 बेटे उमेश शंकर द्वारा आत्महत्या, 'सुहाग के नूपुर' में माधवी का पागल हो जाना इत्यादि सामान्य घटनाओं को अपने उपन्यासों में बडे ही विशेष ढंग से वर्णन करते हुए प्रस्तुत किया है। नागर जी के वर्णन की यही विशेषता है कि वे सामान्य घटना को विशिष्ट ढंग से प्रस्तुत कर उपन्यासों में कौतूहल और रोचकता की वृद्धि कर देते हैं।

2. विशिष्ट से सामान्य का संकेत

हमारे समाज में हम विभिन्न घटनाएँ प्रतिदिन देखते हैं। उनमें से कुछ घटनाएँ सामान्य होती हैं और कुछ विशिष्ट। सामान्य व्यक्ति के लिए इन घटनाओं का इतना अधिक महत्व नहीं होता है जितना कि एक साहित्यकार के लिए। एक श्रेष्ठ लेखक अपनी किसी भी कृति में विशिष्ट घटना को सामान्य बना देता है। एक सामान्य जन की जो भावना होती है वह उपन्यासकार के लिए कुछ अलग होती है जिससे प्रेरित होकर वह अपने भावों, विचारों और शब्दों को अपनी लेखनी के माध्यम से एक रचना का रूप देता है। कोई विशेष घटना भी इस तरह सामान्य ढंग से प्रकट करता है कि वह विशेष न होकर सामान्य ही प्रतीत होती है। किसी भी रचनाकार या उपन्यासकार के लिए कोई भी घटना सामान्य या विशेष नहीं होती। बल्कि यह उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करती है कि कौन सी घटना सामान्य होकर भी विशेष होने का संकेत दे? या कौन सी घटना विशेष होकर भी सामान्य होने का संकेत दे?

उपन्यासकार की सृजन क्षमता पर यह निर्भर करता है कि कैसे किसी विशेष घटना को सामान्य होने का संकेत दे?

अमृत लाल नागर जी ने अपने उपन्यास 'करवट' में विशिष्ट घटना को सामान्य ढंग से प्रस्तुत किया है। नागर जी ने 'करवट' उपन्यास में सन् 1854 से लेकर 1902 तक की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा धार्मिक स्थितियों का मूल्यांकन किया है। इस उपन्यास के माध्यम से नागर जी ने आधुनिक भारत का निर्माण करने की कोशिश की है। उपन्यास के मुख्य पृष्ठ पर लिखा गया है– "जीवन और समाज की यह करवट अपने पीछे क्या कुछ छिपाये है, यह सब आज हमारे लिए आश्चर्य की बातें हो सकतीं हैं परन्तु यही है वह जिसकी पीठिका पर समाज खडा है।' इस उपन्यास की घटनाएँ मध्ययुगीन भारत से संबंधित हैं। इस उपन्यास की रचना भारत के नव निर्माण तथा उत्थान के उद्देश्य से की गई है। 'करवट' उपन्यास में नागर जी ने लखनऊ के नबाबी शासकों के पतन के कारण, भारतीय राजाओं की विलासिता तथा आलस्य, आपस में एक दूसरे में फूट पड़ना, एकता का अभाव इन सब विशिष्ट घटनाओं को सामान्य ढंग से वर्णित किया है। अंग्रेजों ने अपना प्रभाव जमाने के लिए धीरे धीरे समाज में नारी शिक्षा को बढ़ावा, नवयुवकों को पढ़ने के लिए विदेश भेजना आदि समाज सुधारक कार्य प्रारम्भ किये। बंगाल में राजा राम मोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना की जिससे कि जनमानस पर काफी प्रभाव पड़ा इसी प्रकार दयानन्द सरस्वती ने भी आर्य समाज के द्वारा अंधविश्वास और रूढ़िवादिता से दूर करने का प्रयास किया। अंग्रेजी भाषा का समाज में प्रभाव बढ़ने लगा। समाज में धीरे धीरे परिवर्तन की लहर चलने लगी। नागर जी ने तनकुन उर्फ वंशीधर टंडन के द्वारा उस समय घटित होने वाली घटनाओं का सामान्य रूप से संकेत दिया है। नागर जी ने 'करवट' के माध्यम से बदलते समय की करवट का चित्रण किया है।

'करवट' संक्रान्ति काल को अंकित करने वाला उपन्यास है। इसमें एक दुनिया मर रही है और एक पैदा हो रही है मरती हुई दुनिया को नागर जी ललक और पीड़ा के साथ देखते हैं लेकिन नई पैदा होने वाली दुनिया को लेकर उनका उत्साह और भी अधिक हैं।" यह मध्यमवर्ग के उदय की कहानी है। उसके काफी कुछ जटिल और बहुस्तरीय विकारा को अंकित करने के लिए इसके बाद की कहानी लिखने की योजना भी नागर की है। 'करवट' की मूल योजना वस्तुतः तीन खंडों की है। दूसरे में वह देश की स्वतन्त्रता तक और तीसरे में उसकी बाद की स्थितियों को अंकित करना चाहते हैं।[1]

इसी तरह नागर जी ने अपने अन्य उपन्यासों 'सात घूँघट वाला मुखड़ा', 'बिखरे तिनके', 'अग्निगर्भा' आदि उपन्यासों की घटनाओं का विशिष्ट होते हुए भी बड़े ही सामान्य ढंग से आकलन किया है। 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' में नागर जी ने बेगम समरू के जीवन में घटित होने वाली विशिष्ट घटनाएँ जैसे मुन्नी को टामस के हाथों दस हजार में बेचा जाना, नबाव समरू द्वारा उसे बेगम समरू बनाया जाना, लक्सूल से उसका प्रेम, लवसूल के साथ भागने पर लवसूल द्वारा आत्महत्या मुन्नी उर्फ बेगम समरू का पकड़ा जाना इत्यादि विशिष्ट घटनाओं को सामान्य ढंग से स्पष्ट किया है।

'विखरे तिनके' में नागर जी ने बिना किसी बडे विजन और फलक के युवा पीढ़ी के विचलन और भटकाव को अंकित किया है। इस उपन्यास में नागर जी ने भारतीय राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार, नेताओं के भ्रष्ट चरित्र का उद्घाटन किया है। गुरसरन बाबू का भ्रष्टाचारी होना, छिद्दा डाकू का प्रसंग, स्वतंत्र कुमार और सरसुतिया के विवाह में बिल्लू

---

[1] अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व और रचना संसार – पृ0115

दल की भूमिका, बबलू राठौर की जादुई सहायता आदि घटनाओं के द्वारा विशिष्ट घटनाओं को सामान्य ढंग से प्रस्तुत किया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागर जी में विशिष्ट घटनाओं को भी सामान्य ढंग से आंकने की अपूर्व शक्ति है। अपने उपन्यासों में विशिष्ट घटनाओं को भी सामान्य ढंग से चित्रित करने में नागर जी की लेखनी सिद्ध हस्त है।

3. अमृत लाल नागर के उपन्यास घटना—अनुक्रम

कोई भी उपन्यास किसी न किसी घटना से अवश्य ही संबंधित होता है। उपन्यासकार अनेक घटनाओं को उपन्यास में इस तरह समायोजित करता है कि वे घटनाएँ एक दूसरे से जुडीं हुई प्रतीत होती हैं। जिससे उपन्यास की रोचकता में वृद्धि होती है।

अमृत लाल नागर जी ने भी अपने उपन्यासों में घटनाओं का समायोजन इस प्रकार किया है कि वे घटनाएँ अन्योन्याश्रित प्रतीत होतीं हैं। नागर जी ने अपने उपन्यासों में सामान्य और विशिष्ट घटनाओं को इस तरह से समन्वित किया है जिससे कि उपन्यास की कथा रोचकता और सरसता से युक्त होती हुई पाठक के हृदय को सराबोर कर देती है।

अमृत लाल नागर जी का उपन्यास 'शतरंज के मोहरे' एक घटना प्रधान उपन्यास है इस उपन्यास में नागर जी ने विभिन्न घटनाओं को इस तरह से संगुंफित किया है कि विभिन्न घटनाएँ एक दूसरे की पूरक बनती हुई अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचती है।

वस्तुतः उपन्यास में नागर जी ने नबाब गाजीउद्दीन हैदर तथा उसके पुत्र नसीरूद्दीन हैदर के काल का वर्णन किया है। नबाब गाजीउद्दीन हैदर का महल विविध षड्यन्त्रों और विश्वासघात का केन्द्र बना हुआ है। औलाद की चाहत में धोबिन के बच्चे को

बादशाह का बेटा बनाकर प्रचारित किया जाता है गाजीउद्दीन के न चाहने पर भी बादशाह बेगम अपने हठ के आगे कोई समझौता नहीं करतीं। इधर दासियाँ और बाँदियाँ इसी लालच में बादशाह के निकट आकर बेगम का दर्जा और खिताब पाने की होड़ लगाए रहतीं हैं। गाजीउद्दीन हैदर का वजीर आगामीर नबाब को अपने वश में किये था। बादशाह बेगम हर संभव आगामीर को हटाने के लिए संकल्पबद्ध थीं। वह गाजीउद्दीन हैदर के बाद स्वयं ही राजसत्ता का संचालन करना चाहतीं हैं। तभी नाटकीय घटनाक्रम के द्वारा नबाब के पुत्र प्राप्ति की घोषणा करा दी जाती है और उसका पालन स्वयं अपनी देखरेख में करातीं हैं। उसे अपने वश में रखने की वजह से बेगम उसे भोग विलास की तरफ धकेल देतीं हैं। गाजीउद्दीन हैदर की मृत्यु के बाद नसीरूद्दीन हैदर को नबाब बना दिया जाता है और शासन सूत्र का संचालन बादशाह बेगम के हाथों से ही होने लगता है। इधर एक घटना फिर घटित होती है। नबाब नसीरूद्दीन को भी बाप बनाने की झूठी घटना का प्रचार किया जाता है। नसीरूद्दीन सब कुछ जानते हुए भी कुछ नहीं कर पाता है तभी मुन्ना जान की आया के रूप में दुलारी के महलों में प्रवेश की घटना महल में एक नई घटना को जन्म देती है। दुलारी धीरे धीरे नसीरूद्दीन हैदर को अपने वश में करके उसकी माँ से भी उसकी अनबन करवा देती है और विभिन्न षडयन्त्रों और झूठी मूठी कहानियों को सुनाकर अपने पुत्र कैवाजान को राजसिंहासन पर बैठाना चाहती है इधर बादशाह बेगम स्वयं द्वारा घोषित मुन्ना जान को राजसिंहासन का उत्तराधिकारी घोषित करतीं हैं।

इसी बीच नागर जी ने दिग्विजय ब्रहमचारी और उनकी भतीजी कुल्सुम के कथा प्रसंग के माध्यम से अनेक घटनाओं को दिखाया है। वह अपनी भतीजी कुल्सुम को तत्कालीन विकृत समाज से बचाने के लिए जगह जगह भटकते हैं परन्तु विभिन्न घटते हुए घटनाक्रमों से नागर जी ने कुल्सुम की सहेली भुलनी के जीवन में घटित होने वाली भयानक

घटना का बड़ा ही संवेदनापूर्ण चित्रण किया है। भुलनी पर एक अंग्रेज अफसर स्मिथ बलात्कार करता है। भुलनी को उस समय का रूढ़िवादी समाज बिरादरी से बाहर कर देता है। वह गाँव के बाहर एक पेड़ के नीचे पड़ी रहती है ब्रह्मचारी के समझाने पर नईमउल्ला भुलनी से शादी के लिए तैयार हो जाता है परन्तु भुलनी अपने प्राणों को त्याग देने को तत्पर है उसकी अन्तिम इच्छा है कि उसे जीवित गंगा में प्रवाहित कर दिया जाये नईमउल्ला उसे जीवित ही गंगा में बहा देता है इधर जिस मातादीन नामक व्यक्ति से उसकी शादी होने वाली होती है वह अंग्रेज अफसर को मार डालता है तथा अंग्रेज सिपाही उसकी भी हत्या कर देते हैं।

इस उपन्यास की घटनाएँ फिर धीरे धीरे आगे बढती हैं। ठाकुर शिवनन्दन सिंह, नत्थू खाँ और दिग्विजय ब्रह्मचारी की कथा और उसमें घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं के क्रम से उपन्यास आगे गतिशील होता है तभी अचानक फिर एक घटना होती है और एक मेले में एक षड्यन्त्र के तहत कुल्सुम का अपहरण करवा दिया जाता है और दिग्विजय ब्रह्मचारी को कोठरी में कैद कर दिया जाता है।

इधर दुलारी बेगम और बादशाह बेगम में टकराव के कारण अनेक घटनाएँ घटित होतीं हैं। इसी बीच बादशाह का आकर्षण बिस्मिल्लाह बानू उर्फ कुदसियाबेगम से हो जाता है जो बेहद शालीन तरीके से नसीरूद्दीन की जीवन शैली व सोच में परिवर्तन करके उसके बच्चे की माँ बनने वाली होती है। परन्तु महलों में कुचक्रों और षड्यन्त्रों के चलते उसे चरित्रहीन साबित करके नबाब की नजरों से गिरा दिया जाता है और वह अपने को सही साबित करने के लिए जहर खाकर आत्महत्या कर लेती है। इधर सच्चाई ज्ञात होने पर नसीरूद्दीन पागलों की तरह सड़कों पर दौड़ते हैं। इस घटना के पश्चात् उसका मन किसी

पर भी विश्वास नहीं करता है। सिर्फ एक धनिया ही है जिस पर उसे थोड़ा बहुत विश्वास है क्योंकि बुरे वक्त में धनिया ही उसके निकट है। परन्तु दो लाख रूपये और रेजीडेंट की सरपरस्ती के लालच में वह नसीरूद्दीन हैदर को जहर पिला कर उसकी हत्या कर देती है। इधर बादशाह बेगम द्वारा घोषित किये नबाव फरीदूनबख्त उर्फ मुन्ना जान को राज सिंहासन पर बैठाया गया परन्तु अंग्रेजों द्वारा उसे बादशाह स्वीकार न किये जाने पर अंग्रेज अपने षड्यन्त्रों द्वारा अवध पर अपना कब्जा कर लेते हैं बादशाह बेगम अपनी ही साजिशों का शिकार होकर अन्त में गिरफ्तार हो जातीं हैं इस प्रकार विभिन्न घटनाओं को एक एक क्रम से प्रस्तुत करते हुए नागर जी ने 'शतरंज के मोहरे' जैसे एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास की रचना की है।

उपन्यास के अन्त में दिग्विजय ब्रहमचारी का दुलारी के जेल से छूटे हुए पति को दिया हुआ उत्तर उस समय की प्रजा के मन में भरे हुए विद्रोह को प्रकट कर देता है–

''कहा न भाई, रात के बाद दिन अवश्य आता है। मैं उसी उजाले की बाट में बैठा हूँ।''[1]

नागर जी ने अपने अन्य उपन्यासों में भी इसी तरह विभिन्न घटनाओं को क्रम से प्रस्तुत किया है। 'मानस का हंस' में तुलसीदास के जीवन की विभिन्न घटनाओं को इस क्रम में संजोया है कि कथा में बिखराव नहीं आने पाता है बल्कि रामबोला के जीवन में घटतीं हुई विभिन्न घटनाएँ उसे महाकवि तुलसीदास बना देतीं हैं। 'खंजन नयन' में अन्धे सूरदास को समाज में अपना स्थान बनाने के लिए एक से एक कठिन परिस्थितियों से जूझना पड़ता है।

---

[1] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर पृ0 272

विभिन्न घटनाओं के कम में आगे बढ़ते हुए कंतो के प्रसंग में ईर्ष्यालु और कुचकी लोगों के द्वारा पिटते हुए भी महाकवि कृष्ण भक्त सूरदास बन जाते हैं।

'सुहाग के नूपुर' में विभिन्न घटनाओं के माध्यम से कन्नगी के जीवन में आने वाले दुःख व विषाद तथा माधवी का वेश्या जीवन से संबंध होने के बावजूद एक आम गृहिणी व सती की तरह जीवन बिताने का दंभ व निर्णय इन सब घटनाओं के बीच में दोहरी मनःस्थिति से गुजरता हुआ कोवलन इन सबके बीच में घटित होने वाली घटनाओं को नागर जी ने इस कम से प्रस्तुत किया है कि सम्पूर्ण घटनाकम एक दूसरे से संबंधित होते हुए रोचक और कौतूहलपूर्ण ढंग से आगे बढ़ता है।

कथा - संगठन

विकास क्रम में आवेग और स्थैर्य का संश्लेषण

अमृत लाल नागर के उपन्यासों का कथा-संगठन

कथा संगठन

विकास – कम में आवेग और स्थैर्य का संश्लेषण

जीवन के मूल्यों को व सत्यों को सूक्ष्म व प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करने के लिए उपन्यास सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम है। उपन्यास के द्वारा ही जन–जीवन के हर आयाम को सुगमता पूर्वक वर्णित अथवा स्पर्श किया जाता है। नागर जी ने भावों और अभावों की चरम–स्थिति का स्पर्श करते हुए भारतीय समाज, संस्कृति के अतीत और वर्तमान को अपने उपन्यासों द्वारा स्पष्ट कर दिया है। कहानी और उपन्यास दोनों ही कथा साहित्य की महत्वपूर्ण विधायें हैं यद्यपि इन कथाओं पर भारतीय आख्यायिकाओं तथा आख्यानों का भी थोड़ा बहुत प्रभाव है परन्तु उनका जो रूप हमारे सामने है वह मूलतः आधुनिक युग की देन है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – "हिन्दी साहित्य का सबसे नया और शक्तिशाली रूप उपन्यासों में प्रकट हुआ।'[1]

कथा संगठन के प्रमुख तत्वों का कुशल संगुफन प्रेमचन्द परम्परा के उपन्यासकारों की रचनाओं में नवीन प्रयोगों सहित दिखाई देता है। 'एक ओर विविध प्रसंगों की उद्भावना, सम्बद्ध गठन, मौलिकता, निर्माण, गुणवत्ता, यथार्थता और

---

[1] हिन्दी साहित्य आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – पृ. 412

रोचकता से भरपूर है तो दूसरी ओर उपन्यास के बँधे बँधाये ढ़ाँचे को नूतन तकनीकों में भी प्रस्तुत किया गया है।"[1]

कथानक के गठन में आकार के साथ – साथ उसे प्रस्तुत करने का ढंग रचना को सौष्ठव और सौन्दर्य प्रदान करता है। नागर जी के पास कहने को इतना कुछ है कि वे अपने आक्रोश और लक्ष्य की प्रस्तुति के निमित्त अपने समस्त अनुभवों को उड़ेल देना चाहते हैं। कथा संगठन उपन्यास कला का मूल तत्व व प्राण है कथानक का नियोजन यदि संगठित नहीं होगा तो कथानक में बिखराव आना सुनिश्चित है इसीलिए कथानक में राचकता और कौतूहल बनाये रखने के लिए आवेग और स्थैर्य का संश्लेषण आवश्यक है। रचनाकार किसी भी घटना में रोचकता लाने व प्रवाह को आगे बढ़ाने में आवेग का सहारा लेता है परन्तु कथानक के विकास को आगे बढ़ाते हुए स्थैर्य का सहारा लेता है। कोई भी उपन्यास तभी सफलता प्राप्त कर सकता है या पाठकों के चित्त को हर सकता है जब उसके कथानक में आवेग और स्थैर्य का उचित समन्वय हो।

अमृत लाल नागर जी वस्तुतः एक अनुभवी व विचारशील साहित्यकार हैं। उनके रचनात्मक साहित्यकार से उनका विचारक एक पल के लिए भी अलग नहीं हुआ है। विचार की इस भूमिका से ही उन्होंने वर्तमान सामाजिक अराजकता का विश्लेषण किया है। उनके लेखन की जड़ें जन–जीवन के बीच गहराई से जुड़ी है। उन्होंने यथार्थ मूलक दृष्टि और मस्तिष्क की प्रौढ़ता से समाज के कण–कण में स्पन्दित जीवन का

---

[1] अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त डा0 सुदेश बत्रा पृ. 299

जो अनुभव संजोया है उसे ही कल्पना के धागे में पिरोकर अपने उपन्यास रूपी माला मं पिरो दिया है। उन्हें जन–जीवन की सूक्ष्मतम भूमिकाओं की पहचान है। उनके सुख–दुःख, हर्ष – विषाद, आशा–आकांक्षा तथा शक्ति को उन्होंने ठीक से जाना, पहचाना व समझा है इसीलिए वह वर्णन करते समय कहीं–कहीं बहुत उद्वेलित हो जाते हैं और फिर स्थैर्य रखते हुए कथानक का विकास करते हैं।

'महाकाल' उपन्यास में नागर जी ने सन् 1943 में बंगाल में पड़े जिस भयंकर दुर्भिक्ष का वर्णन किया है वह वास्तव में पूँजीपतियों, साहूकारों और अंग्रेजों की मिली भगत का परिणाम था। 'भारत के एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो. महालनवीस ने उन दिनों सही आँकड़े प्रस्तुत करके यह सिद्ध कर दिखलाया था कि उस साल बंगाल में धान की उपज के हिसाब से अकाल पड़ने की कोई संभावना नहीं थी।"[1] इस उपन्यास में नागर जी ने जन सामान्य के दुःख दैन्य का वर्णन करते हुए महाजन और जमींदारों की हृदय हीनता का भी बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। मृत्यु और भूख से उत्पन्न हुई घृणा को केशव बाबा के माध्यम से व्यक्त करते हुए नागर जी आवेग में कहते हैं – घृणा की गति है कहाँ? विनाश ही में न? तुम्हारा यह अकाल क्या है? मनुष्य की घृणा ही न? यह महायुद्ध क्या है? कौन सा आदर्श है इसमें? सत्य एक असत्य के साथ संधि करके दूसरे असत्य का सर्वनाश करने के लिए युद्ध कर रहा है। मनुष्य इसे राजनीति कहकर

---

[1] महाकाल – अमृत लाल नागर – पृ. 4

अर्द्धसत्य का पोषण करता है। अर्द्धसत्य अज्ञान का कारण है। ज्ञान प्रेम का मूल्य है और प्रेम की गति है निर्माण तक – निर्माता तक।"[1]

तदुपरान्त विभिन्न कथानकों के माध्यम से स्थैर्य का सहारा लेकर अपने उपन्यास को आगे बढ़ाते हैं।

'बूँद और समुद्र' उपन्यास में नागर जी ने नारी के विविध रूपों का वर्णन किया है। नागर जी वनकन्या के माध्यम से आर्थिक अभाव के कारण कराहती हुई नारी का वर्णन करते समय बेहद आवेग में आ जाते हैं। वनकन्या वर्तमान युग की स्वाभिमानी और स्वतंत्र अस्तित्व वाली नारी है। वह नारी की विवशता का चरम–रूप अपनी भाभी के अत्याचार पीड़ित जीवन में देखती है – "भाभी का अपराध यही है कि वे औरत हैं और एकनामिकली फ्री नहीं हैं।"[2] नागर जी नारी की सामाजिक स्थिति पर भी बहुत आवेशित होते हैं और महिपाल के माध्यम से अपने आवेग को इन शब्दों में व्यक्त करते हैं – "हिन्दुस्तान का हर घर औरतों के लिए कसाईखाना है। मौजूदा समाज में नारी की एक अजीब सामाजिक स्थिति है। आमतौर से हमारे देश में तो यह विचित्रता और भी स्पष्ट होकर झलकती है। हम देखते हैं कि औरत इस समय आम घरों में किसी न किसी रूप में बेइज्जती का जीवन बिताती है।"[3]

नागर जी नारी स्वातंत्र्य के समर्थक रहे हैं। इसीलिए नागर जी वनकन्या के माध्यम से नारी को सामाजिक क्रान्ति के लिए आगे बढ़ने का आह्वान करते हुए कहते

---

1 महाकाल – अमृतलाल नागर – पृ. 143
2 बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर – पृ. 56
3 बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर – पृ. 11

हैं – कि वे बहिनें जो स्कूलों और कालेजों में पढ़तीं पढ़ातीं हैं वे जो घरों की चहारदीवारी में कैद हैं, उन सबसे मेरा सत्याग्रह भरा निवेदन है कि 'प्रेम' शब्द के साथ फैली हुई नारी विरोधी जिस गंदी तस्वीर को जन – समाज आज अपनाये हुए है, उससे साँप के फन की तरह दूर रहें।"[1]

इस प्रकार 'बूँद और समुद्र' में विभिन्न पात्रों के माध्यम से अपने आवेग को व्यक्त करते हुए नागर जी स्थैर्य के साथ अपने कथानक को विकास की ओर ले जाते हैं।

'नाच्यौ बहुत गोपाल' में नागर जी निर्गुनियाँ के माध्यम से समाज में मेहतर वर्ग की निम्न व करुण स्थिति का वर्णन करते समय उनके साथ होने वाले भेदभावों व अत्याचारों का भी जमकर विरोध करते हैं। नारी की विवशता व पीड़ा का वर्णन करते हुए नागर जी बेहद आवेग में आते हुए पुरुष जाति से पीड़ित नारी निर्गुनियाँ किस तरह से ब्राह्मण होने के बावजूद मेहतरानी बनने को मजबूर कर दी जाती है बतते हैं। वह कहती है –

"दुनियाँ में दो पुराने से पुराने गुलाम हैं – एक भंगी और दूसरी औरत। जब तक ये गुलाम हैं आपकी आजादी रुपये में पूरे सौ के सौ नये पैसे भर झूठी है।"[2]
'एकदा नैमिषारण्ये' में नागर जी नारी पर होने वाले अत्याचारों को वर्णित करते समय बेहद आवेग में आ जाते हैं क्योंकि स्त्रियों की सबसे बड़ी दुश्मन स्त्री है। वह ईर्ष्या

---

1 बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर – पृ. 147–148
2 नाच्यौ बहुत गोपाल – अमृत लाल नागर – पृ. 343

और छल–कपट से स्त्री को सताती है सास के रूप में बहू को सताती है। ननद के रूप में भौजाई से ईर्ष्या करती है– "मंगल की पहली बहू को उसने बहुत कष्ट देकर उसे क्षय रोगी बना दिया और वह मर गई। अपनी मातृभक्ति के कारण झूठी शिकायतों पर अपनी बहू को मंगल भी मारा–पीटा करता था। उसकी दूसरी पत्नी गूँगी गाय नहीं थी वह रँभाना भी जानती थी। उसने अपने पति को सचेत करके उसके सामने यह सिद्ध भी कर दिया है कि माँ झूठी, कर्कश और विकट अत्याचारिणी है।"[1]

'अग्निगर्भा' उपन्यास में नागर जी सीता के माध्यम से दहेज दानव रूपी समस्या से त्रस्त स्त्री जाति पर होने वाले कष्टों की पीड़ा को व्यक्त करते हुए आवेग में आ जाते हैं। सीता सोचती है – "दहेज के कारण कोई स्त्री एक तरह का दुःख पाती है तो कोई दूसरी तरह का। यह सारे अत्याचार निरीह स्त्री जाति पर ही हो रहे हैं। पुरुषों पर नहीं हो रहे हैं? .... होते हैं, होते हैं। हर कमजोर व्यक्ति चाहे पुरुष हो या स्त्री मार खाता है। आवश्यकता है शक्ति की। वह शक्ति कैसे अर्जित की जाय।"[2]

नागर जी आवेशित होने के बाद स्थैर्य का सहारा लेकर अपने कथानक में विभिन्न कथा धाराओं को संयोजित करते हुए कथाक्रम का विकास करते हैं। नागर जी ने अपने कथानक के विकास क्रम में रोचकता और सरसता बनाये रखने के लिए आवेग और स्थैर्य का सहारा लिया है। उपन्यासों को सुरुचिपूर्ण बनाने हेतु कथानक में आवेग और स्थैर्य अपरिहार्य है। आवेग से सरसता और सहजता का अनुभव करते हुए अध्येता स्थैर्य भाव को देखते हुए आल्हादित होता है। आवेग तथा स्थैर्यहीन कथानक शुष्क

---

[1] एकदा नैमिषारण्ये – अमृत लाल नागर पृ. 63

[2] अग्निगर्भा – अमृत लाल नागर पृ. 125–126

तथा नीरस प्रतीत होता है, जिससे पाठक को आनन्दानुभूति नहीं होती और न ही ऐसे कथानक मानव जीवन को तथा हृदय को स्पर्श कर पाते हैं। नागर जी ने अपने उपन्यासों की कथा के विकास में आवेग व स्थैर्य का विशेष ध्यान रखते हुये घटनाओं को प्रभावकारी व साकार रूप प्रदान करते हुये अध्येता के हृदय को स्पर्श करने का तथा अनुभूत्यात्मक शक्ति प्रदान करके आनन्दित करने का सफल प्रयास किया है।

अमृत लाल नागर के उपन्यासों का कथा संगठन

कथा तत्व उपन्यास का एक साधारण किन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है जिसमें प्रायः आकर्षक घटनाओं का कुशल संगुंफन होता है।[1] वास्तव में कथा तत्व के बिना तो उपन्यास का अस्तित्व ही संभव नहीं है।[2] कथानक की महत्ता के बारे में आचार्य भागीरथ मिश्र ने अपनी 'काव्य शास्त्र' शीर्षक पुस्तक में लिखा है कि – 'यद्यपि आधुनिक काल में कथानक का महत्व कम समझा जाता है पर यह उपन्यास का मूल है। उपन्यास में व्याप्त कुतूहल का तत्व कथानक के सहारे ही विकास पाता है। उपन्यास का समग्र रूप कथानक के ढ़ाँचे पर ही विकसित होता है .... यह कारण भ्रांत है कि उपन्यास में कथानक का कोई महत्त्व नहीं या सामान्य कथानक को ही वर्णन कौशल द्वारा उत्तम बनाया जा सकता है।[3] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कथा तत्व के बिना उपन्यास की रचना संभव नहीं है कथानक का एक अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

उपन्यासकार का कार्य केवल अव्यवस्थित जीवन से घटनाओं अथवा परिस्थितियों का चयन मात्र न होकर, उन्हें एक व्यवस्था देना भी होता है और यह व्यवस्था बहुत महत्वपूर्ण है। इस बात को आचार्य द्विवेदी जी ने और भी स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है – कोई उपन्यास या (छोटी कहानी) सफल है या नहीं; इस बात की

---

[1] *"The most simple form of prose fiction is the story which records a succession of events; generally morvellous."* **The structure of novel.** Edwin Muir P. 17

[2] **Aspects of the novel** E.M. Forster P. 33-34

[3] काव्यशास्त्र – डा. भागीरथ मिश्र पृ. 83

प्रथम कसौटी यह है कि कहानी कहने वाले ने कहानी ठीक–ठीक सुनाई है या नहीं। अनावश्यक बातों को तूल तो नहीं दिया है .... सौ बात की एक बात यह कि शुरू से अंत तक सुनने वाले की उत्सुकता जाग्रत रखने में नाकामयाब तो नहीं रहा।[1]

कथानक की मौलिकता, निर्माण कौशल तथा रोचकता एक अच्छे उपन्यास लेखक के लिए अनिवार्य विशेषता है। कथानक में नाटकीयता का होना भी आवश्यक है।

इन सब दृष्टिकोणों से जब हम नागर जी के उपन्यासों का अध्ययन करते है तो हमें ज्ञात होता है कि नागर जी ने अपने उपन्यासों में कथा तत्व को प्रमुख स्थान दिया है। उनके चाहे ऐतिहासिक उपन्यास हो चाहे सामाजिक उपन्यास, नागर जी के उपन्यास एक सम्पन्न कथा तत्व के सूचक हैं। नागर जी ने कुछ दीर्घ आकार के उपन्यास लिखे हैं तथा कुछ लघु। जैसे – उनका 'बूँद और समुद्र' और 'अमृत और विष' वृहद आकार वाले उपन्यास हैं, और 'सुहाग के नूपुर' तथा 'महाकाल' छोटे आकार के। 'सेठ बाँकेमल' हास्य और व्यंग्य से परिपूर्ण अत्यधिक लघु उपन्यास है। उनका ऐतिहासिक उपन्यास 'शतरंज के मोहरे' की स्थिति दीर्घ और लघु के बीच की मध्यम आकार की है। आकार का छोटे या बड़े होने का संबंध उनके कथा तत्व से है। नागर जी के जिन उपन्यासों में सामाजिक जीवन तथा उनकी नाना समस्याओं का चित्रण किया गया है वे आकार में बड़े हो गए हैं तथा जिनमें जीवन के किन्हीं खास अंशों या समस्याओं को उठाया गया है वे आकार में छोटे हो गए हैं। जैसे कि 'महाकाल'

---

[1] साहित्य का साथी– डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ. 82

उपन्यास में बंगाल का अकाल और उससे सम्बद्ध समस्या तथा 'सुहाग के नूपुर' में नारी की आर्थिक पराधीनता की समस्या प्रमुख है। 'अग्निगर्भा' में दहेज जैसी सामाजिक बुराई को उठाया गया है। 'बूँद और समुद्र' तथा 'अमृत और विष' बड़े चित्रपट वाले उपन्यास हैं।

'जहाँ तक लघु अथवा वृहत् आकार वाले इन उपन्यासों में कथावस्तु के नियोजन का प्रश्न है, नागर जी सामान्यतः इस कार्य में सफल रहे हैं।[1]

नागर जी को अपने छोटे आकार वाले उपन्यासों में अधिक से अधिक सफलता प्राप्त हुई उनमें घटनाओं एवं परिस्थितियों की भली प्रकार नियोजना की गई है। कथा भी एक ही है तथा प्रासंगिक कथाओं को लगभग नहीं ही लिया है। एक ही प्रमुख कथा को लेने के कारण लेखक बड़े विश्वास के साथ कथा के सूत्रों को आगे लेकर बढ़ता है और इस क्रम मे उन्होंने समस्या का विचारात्मक पक्ष भी बड़ी सफाई के साथ प्रस्तुत किया है। वस्तु नियोजन संबंधी प्रश्न 'बूँद और समुद्र' तथ 'अमृत और विष' के सबंध में अवश्य विचारणीय हैं। इन्हें शिथिल कथानक वाला उपन्यास तो नहीं कह सकते परन्तु इतना अवश्य कह सकते हैं कि इनमें वस्तु योजना व्यवस्थित नहीं है। 'बूँद और समुद्र' का कथानक संरचना की दृष्टि से शिथिल और बिखरा हुआ है। इसमें श्रंखलाबद्ध या संगठित वस्तु विन्यास का प्रायः अभाव है। इसका कारण स्पष्ट है कि लेखक का उद्देश्य कथा कहना नहीं वरन् विराट समुद्र की अनगिनत बूँदों का चित्र प्रस्तुत करना है और ये बूँदें एक होने का प्रयास करते हुए भी सर्वथा बिखरी हुई हैं।

---

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 247

कथाकार उपन्यास की कहानी को लखनऊ के चौक की एक गली से उठाता है और चौक क्षेत्र के इन्हीं गली मुहल्लों में केन्द्रित करने का प्रयास करता है। इसी तरह 'अमृत और विष' उपन्यास कथा शिल्प की दृष्टि से एक नवीन तथा साहसपूर्ण प्रयोग है। इस उपन्यास में उन्होंने एक प्रौढ़ कलाकार की वैचारिक परिपक्वता, गाम्भीर्य और ताजगी का दर्शन कराया है। इस उपन्यास का कथानक दोहरा है इस उपन्यास के भीतर एक और उपन्यास लिखने का नागर जी ने सशक्त प्रयोग किया है। पहले उपन्यास का नायक अरविन्द शंकर उपन्यासकार है और वह आन्तरिक कथानक की रचना करते समय अपने पारिवारिक परिवेश, चिन्तन, सम्पर्क आदि का परिचय समान्तर रूप से देता चलता है। कथाएँ अलग होते हुए भी उपन्यासकार की मानस दृष्टि से तारतम्यता जोड़े रखतीं है। एक उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में और दूसरा वर्णनात्मक शैली में रचित अनूठा चित्रण और एकान्विति प्रस्तुत करता है। उपन्यास में ये दोनों कथानक साथ – साथ गतिशोल हुए हैं और दोनों ही एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं।

नागर जी ने इन दोनों कथानक का संबंध परिश्रमपूर्वक स्थापित किया है। डा. धर्मवीर भारती के अनुसार – इस उपन्यास में कथानक के तीन स्तर हैं – अरविन्द शंकर का जीवन स्तर, उसकी सृजन प्रकिया से निकलने वाले पात्र और परिस्थितियाँ और उनकी कथा, तीसरे वास्तविक लेखक यानी नागर जी की कथा–दृष्टि। ये तीनों एक के अन्दर एक विचित्र ढंग से गुँथे हुए हैं। कभी एक दूसरे के पूरक होकर, कभी एक दूसरे के विलोम होकर।

नागर जी की प्रतिभा और कथा–शैली की यह उपलब्धि है कि अपने शिल्प और पात्रों को गढ़ने की सारी प्रक्रिया को पाठक के समक्ष बिल्कुल उद्घाटित कर देने के बाद उन्होंने न केवल उससे और भी आत्मीयता और अन्तरंगता स्थापित कर ली है वरन् कथा को एक नये स्तर पर वास्तविकता और प्रामाणिकता का स्वाद दे दिया।[1]

जहाँ तक कथा – शिल्प का प्रश्न है अपने इस प्रयोग में नागर जी को पर्याप्त सफलता मिली है। एक बात महत्वपूर्ण है कि नागर जी ने शिल्प संबंधी प्रयोग वस्तु के मूल्य पर नहीं किया वरन् अपनी मूल्यवान वस्तु को प्रभावशाली रूप देने के लिए यह कथा कहने की पद्धति अपनानी पड़ी। यद्यपि नागर जी के द्वारा किये गये वर्णन अपने आप में सजीव हैं जिससे उनकी अद्भुत निरीक्षण शक्ति और प्राणवान चित्रण शैली का परिचय मिलता है परन्तु जब वे इन वर्णनों को दूर तक खींचने का प्रयास करते हैं तब अवश्य कथावस्तु की गति में शिथिलता आ जाती है इस उपन्यास में बारात, बाढ़, लच्छू की रूस यात्रा आदि के वर्णन यद्यपि बहुत सजीव हैं। परन्तु उनसे कथा की गति में अवरोध सा उत्पन्न हुआ है। सामान्य तथा मध्यमवर्गीय जीवन के चित्रण भी प्रस्तुत उपन्यास में अत्यन्त सजीवता के साथ उतरे हैं। 'अमृत और विष' शब्द व्यंजना गर्भित है। जो कथावस्तु के समूचे उद्देश्य को व्यंजित करने वालों का प्रतीक हैं। लेखक अरविन्द शंकर परिस्थितियों की समूची कटुता के बावजूद आस्था के प्रकाश में एक नये पथ पर चलने का संकल्प लेते हैं। जीवन के समूचे विष को उनकी आस्था अमृत में बदल देती है। यह विष पर अमृत की विजय है, जिसे नागर जी ने अपनी इस

---

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 120

कथावस्तु द्वारा पुष्ट किया है। कथावस्तु की यह आदर्शवादिता तथा सोद्देश्यता उपन्यास का प्राणतत्व मानी जा सकती है।

नागर जी के उपन्यासों में कथा तत्व की अन्य जो भी विशेषताएँ हैं वे समस्त पूरी होतीं है। उनकी कथावस्तु मौलिक कथावस्तु हैं और सत्यता की शर्त को भी पूरा करती है। इसका प्रधान कारण उनकी अनुभव सम्पन्नता है। उन्होंने अपने जीवन के भोगे गये अनुभवों तथा प्रबुद्ध मस्तिष्क से जिस यथार्थ को देखा, समझा है वह ही उनके उपन्यासों में उतर आया है। लोक जीवन की जितनी समृद्धि उनके उपन्यासों में दिखाई पड़ती है उतनी आज के उपन्यासकारों में विरल है। जहाँ तक जीवन के खरे यथार्थ चित्रण का प्रश्न है अनुभूतियों की अकृत्रिम अभिव्यक्ति का प्रश्न है, उन पर उँगली नहीं उठाई जा सकती।

नागर जी के उपन्यासों में कथा वस्तु सर्वत्र रोचक है। वे कथातत्व के इस महत्व को भी भली भाँति समझते हैं और इसीलिए उन्होंने रोचकता के प्रति अपनी पूर्ण निष्ठा व्यक्त की है। उनके कथातत्व का आधार वास्तविक जीवन है इसलिए उनके वर्णनों में कहीं भी अरोचकता नहीं आ पाई है। कभी – कभी नागर जी अपनी कथा को रोचक बनाने के लिए तथा उसमें कौतूहल उत्पन्न करने के लिए अवश्विसनीय तथा जासूसी – तिलिस्मी उपन्यासों जैसे कुछ प्रसंगों को जोड़ देते हैं। जैसे – 'बूँद और समुद्र' में बाबा राम जी दास के चरित्र में कहीं–कहीं अविश्वास सा होने लगता है। उदाहरण – सज्जन को बाबा राम जी दास की आवाजें सुनाई पड़ना, महिलाश्रम का भंड़ाफोड़ तथा 'अमृत और विष' में डाकुओं को पकड़ने के दृश्य जासूसी – तिलिस्मी

उपन्यासों जैसे प्रतीत होते हैं। अधिकांशतः नागर जी का कथा–संगठन विश्वसनीय घटनाओं पर आधारित हैं और कल्पना का बहुत ही संयम से प्रयोग किया गया है।

नागर जी के उपन्यासों में नाटकीयता सर्वत्र देखने को मिल जाती है। नागर जी किसी भी घटना को चित्रमय बनाकर प्रस्तुत करने में सिद्ध हस्त हैं। यह कला उन्हें अपने फिल्मी जीवन के अनुभव से प्राप्त हुई है। उनके उपन्यासों की कथाएँ सामानान्तर गति से आगे बढ़ती हुई उत्कर्ष को प्राप्त करके चरम उत्कर्ष पर समाप्त होती हैं। 'अमृत और विष' तथा ' सेठ बाँकेमल' अलग तरह की रचनाएँ है। 'अमृत और विष' में नागर जी ने जहाँ दोहरे कथानक की सृष्टि की है वहीं 'सेठ बाँकेमल' में हास्य और व्यंग्य के माध्यम से मिटते सामंतवादी जीवन के यथार्थ को कथावस्तु का आधार बनाया है। किस्से भले ही कपोल कल्पित हों, कोरी गप्पों पर आधारित हों परन्तु इस कपोल कल्पना तथा गप्पों के मूल में निहित बीते हुए सामाजिक जीवन के यथार्थ को भुलाया नहीं जा सकता। मीठी चुटकियाँ लेने में नागर जी उस्ताद हैं। नागर जी की 'नबाबी मसनद' कृति की भूमिका में डा. राम विलास शर्मा ने लिखा था ''........ गप्प लिखना भी एक आर्ट है और कल्पना की तगड़ी कसरत पर निर्भर है। लेकिन ये गप्पें सब कल्पना पर निर्भर नहीं, यथार्थ की इनमें ऐसी तगड़ी बैक ग्राउन्ड है कि गप्प मारने वालों पर आप शक नहीं कर सकते। पात्र सभी अपनी विशेषताएँ लिए सजीव और विचित्र पाठक के सामने उपस्थित होते है।[1]

---

[1] नबाबी मसनद – भूमिका – डा. राम विलास शर्मा

जहाँ तक अन्य विशेषताओं का प्रश्न है नागर जी के उपन्यासों की कथावस्तु का प्रमुख आधार मानव जीवन में आने वाली विभिन्न समस्याओं में प्रमुख रूप से हम 'बूँद और समुद्र' को ले सकते हैं। जिसमें मानव जीवन के विविध स्तर तथा उनके जीवन में घटने वाली विभिन्न समस्याओं का चित्रण किया है मानव जीवन के विविध स्तरों में मध्यवर्गीय जीवन उनकी समस्यायों के समाधान का राजीव रूप हमें 'बूँद और समुद्र' में देखने को मिलता है। उपन्यासों की विविध कथाओं के अन्तर्गत नागर जी ने अपने कथा संगठन के कौशल का परिचय दिया है। इस उपन्यास में नागर जी ने कथा सूत्र का ऐसा जाल बुना है कि उसमें समाज का सम्पूर्ण परिवेश आबद्ध हो गया है नागर जी की दृष्टि सर्वत्र आन्तरिक सम्भावना पर टिकी हुई है। कथा विस्तार के बावजूद अनेक प्रसंगों में एक सूत्रता बनी रहती है। ये कथा सूत्र जगह – जगह पर स्वतन्त्र रूप से विकसित हुए हैं और कहीं – कहीं इनका परस्पर सम्मिलन भी हो गया है सम्पूर्ण कथा पर्वतीय निर्झरिणी की भांति न होकर मैदानी नदी की तरह है जिसमें से अनेक रस कुल्याएँ फूट निकलीं हैं।''[1]

अन्त में हम कह सकते हैं कि नागर जी की कथा संगठन की कुशलता की दृष्टि से 'बूँद और समुद्र' तथा 'अमृत और विष' उपन्यास पूर्ण सफल कहे जा सकते हैं। 'वे पहले ऐसे कथाकार हैं जिनका प्रमुख लक्ष्य कथा को रोचक, सुसम्बद्ध और विश्वसनीय ढंग से अपने उपन्यासों में प्रस्तुत करना है।[2]

---

[1] सुन्दर लाल कथूरिया, आधुनिक साहित्य-- विविध परिदृश्य वीरेन्द्र नाथ मिश्र का लेख, सामाजिक सन्दर्भों का आधार फलक पृ. 175

[2] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 250

उन्होंने अपनी कथा को बड़ा ही व्यवस्थित व संगठित रूप प्रदान किया है उनकी कथाओं में कहीं भी बनावटीपन देखने को नहीं मिलता है। सर्वत्र वास्तविक जीवन में घटने वाली सच्ची घटनाओं को बड़े ही मार्मिक व कारुणिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

कथा-विकास के बिन्दु

 घटनात्मक गति

 चरित्रात्मक विशिष्टता

 वर्णनात्मक वस्तुगतता

 अमृत लाल नागर के कथा-विकास का विश्लेषणात्मक चित्र

कथा - विकास के बिन्दु

1. घटनात्मक गति

कथा – विकास के प्रमुख बिन्दु के रूप में घटनाओं को प्रधान माना गया है। वैसे तो कथाकार अपने जीवन व अपने आसपास के वातावरण घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं को देखता व महसूस करता है। परन्तु जिन घटनाओं के माध्यम से उसके अन्तर्मन को पीड़ा पहुँचती है उन्हें वह कथा के माध्यम से क्रमबद्ध ढ़ंग से सुनियोजित करके मानव जीवन के विविध चित्रों को उतारता चला जाता है। इन घटनाओं को लिखने में वह अपने रचनात्मक कौशल का इस प्रकार प्रयोग करता है कि एक घटना दूसरी घटना से जुड़ी प्रतीत होती हुई सामान्य गति से आगे बढ़ती है।

'शतरंज के मोहरे' उपन्यास नागर जी का घटना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने सन् 1820 से लेकर सन् 1837 तक की राजा – नबाबों की ह्रासशील जिंदगी तथा उनके द्वारा उत्पन्न की जाने वाली विकृतियों का वर्णन विभिन्न घटनाओं के माध्यम से किया है। इस समय में सामंतों – राजा -- नबाबों के निकम्मे शासन चक्र के नीचे जन सामान्य का जीवन बुरी तरह कष्ट में व्यतीत हो रहा था। उच्छ्रंखलता, विलासिता, अनैतिकता, कुचक्र, छल–प्रपंच, राजा–नबाबों के महलों से निकलकर बाहर उतराने लगते हैं। लेखक ने इन सबका विभिन्न घटनाओं के माध्यम

से बड़ा ही सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। नागर जी ऐतिहासिक तथ्यों, घटनाओं, चरित्रों तथा राजा नबाबों के जीवन को महत्व देते हुए भी उनकी अधिक रूचि जन सामान्य के जीवन को चित्रित करने में भी रखते हैं। "वे घटनाओं के ऊपरी विवरण में न भटककर उनके मर्म तक पैठने का प्रयास करते हैं और इसीलिए उनके उपन्यासों में ऐसी बातें उद्घाटित होतीं हैं जो इतिहास में या तो नहीं मिलतीं या फिर उपलब्ध तथ्यों पर नया आलोक फेंकती हैं।"[1]

इस उपन्यास में लखनऊ के जिस नबाबीशासन की घटनाएं हैं उनका संबंध शाहे अवध गाजीउद्दीन हैदर तथा उनके पुत्र नसीरूद्दीन के शासन काल से है। इन नबाबों के शासन काल में राजमहलों से लेकर सामाजिक जीवन तक में जिस भ्रष्टाचार, अराजकता, आतंक, दमन, कुचक, छल प्रपंच आदि का बोलबाला था। कथा की घटनाएँ इसी बीच से धीरे धीरे गति प्राप्त करतीं है। इस उपन्यास में नागर जी ने अल्प काल में घटित होने वाली घटनाओं के माध्यम से अपनी कथा को गति प्रदान की है।

नागर जी ने इस उपन्यास में प्रमुख घटना गाजीउद्दीन हैदर का निःसन्तान होना तथा उनकी पत्नी बादशाह बेगम से अनबन को मुख्य आधार बनाकर 'शतरंज' के मोहरे' नामक उपन्यास की सृष्टि की है। इसके बाद एक के बाद एक अनेकों घटनाएँ घटित करते हुए नागर जी ने अपने उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाया है।

बादशाह बेगम नबाब के वजीर आगामीर को अपदस्थ करके स्वंय राजगद्दी का संचालन करना चाहती हैं इसके लिए वह विभिन्न प्रकार की चाल चलती हैं। वह एक

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास – साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ0–171

दासी के बच्चे को गाजीउद्दीन हैदर का पुत्र घोषित करतीं हैं तथा अपने षड्यन्त्र में सफल होतीं हैं तथा नबाब गाजीउद्दीन हैदर की मृत्यु के पश्चात इसी नबाबजादे को गद्दी पर बिठाकर स्वयं उसका संचालन करती है। नये नबाब नसीरूद्दीन हैदर के नाम से गद्दी पर आसीन होते हैं।

इसके पश्चात नागर जी ने उपन्यास की विभिन्न घटनाओं को नसीरूद्दीन हैदर के शासन काल में घटित होते हुए दिखाया है। नसीरूद्दीन की कुछ दिन तो अपनी माँ से बनती है परन्तु कुछ समय बाद बादशाह बेगम से उनकी अनबन हो जाती है। धीरे – धीरे यह अनबन विद्रोह में बदल जाती है. अब नसीरूद्दीन हैदर व बादशाह बेगम के जीवन में विभिन्न प्रकार की घटनाएं घटतीं हैं। एक दिन बादशाह बेगम यह घोषणा करवातीं हैं कि नये नबाब पिता बनने वाले हैं। नबाब स्वयं इस चाल को समझते हैं परन्तु कर कुछ नहीं पाते। इधर नये उत्तराधिकारी 'मुन्ना जान' की आया के रूप में अत्यन्त सुन्दरी दुलारी का प्रवेश होता है तथा धीरे धीरे वह नसीरूद्दीन को अपने वश में करके 'मलिका–ए–जमानियाँ' का खिताब प्राप्त करती है। वह भी अपने पुत्र को गद्दी पर बिठाना चाहती है। नसीरूद्दीन हैदर मानसिक अशांति से छुटकारा पाने के लिए राग–रंग व विलास लीलाओं में डूबता है। इधर महल की अनेक दासियों में से एक दासी कुदसिया बेगम नबाब की संतान को जन्म देने के लिए अपने हमल की भली प्रकार देखभाल करती है परन्तु राजगद्दी के असली बारिश का आना जानकर अचानक एक ऐसी घटना घटित होती है कि राजा का विश्वास कुदसिया बेगम से हट जाता है तथा वह अपने सत्य का विश्वास दिलाने के लिए आत्महत्या कर लेती है। अंतिम समय में वह नबाब से कहती है– "मैं तुम्हारी थी, तुम्हारी रही और तुम्हारी

होकर ही जा रही हूँ। मरते वक्त खुदा की गवाही में मैं तुम्हें यकीन दिलाती हूँ कि मेरे हमल में मेरे साथ जो एक और नन्हीं सी जान भी दुनिया देखे बिना ही दुनिया से जा रही है, तुम्हारी ही औलाद है। मैं बड़ी साध से तुम्हारे बच्चे की माँ बन रही थी, तुमने मेरा ख्वाब चूर चूर कर दिया, तुमने अपना मुकद्दर मिटा डाला।''[1] कुदसिया के मरते ही नसरूद्दीन हैदर शोक में सड़क पर 'बचाओ बचाओ' की आवाज करते हुए भागता है तथा फूटफूट कर रोता है। धीरे धीरे उसके जीवन में अनेक छोटी मोटी घटनाएँ घटतीं हैं तथा आतंक के वातावरण में विक्षिप्त होकर उसकी मौत हो जाती है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागर जी ने इस उपन्यास में विभिन्न घटनाओं को ऐतिहासिक आधार देकर एक निश्चित गति प्रदान की है जिससे एक घटना दूसरी घटना से जुड़ी हुई प्रतीत होती हुई उनकी कथा को अन्त के चरमोत्कर्ष तक ले जाती है।

2. चरित्रात्मक विशिष्टता

उपन्यास की कथा के विकास में चरित्रों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। उपन्यास में चरित्र चित्रण की सार्थकता यह है कि औपन्यासिक पात्रों को इतनी मूर्तिमत्ता तथा स्वाभाविकता से चित्रित किया जाये, जिससे कि वे एक सजीव प्राणी जैसा व्यक्तित्व धारण कर लें। वह व्यक्तित्व जो चरित्र के विकास की विभिन्न अवस्थाओं और प्रक्रियाओं का परिणाम होता है। एक पाश्चात्य आलोचक की दृष्टि में– पात्रों के चरित्र

---

1 शतरंज के मोहरे अमृत लाल नागर पृ0 316

का कमिक निर्माण ही उपन्यास की वास्तविक समस्या है।[1].................. 'औपन्यासिक पात्र प्रायः कल्पित होते हैं किन्तु उनमें वास्तविक जगत् के पात्रों का प्रतिबिम्ब भी कहीं न कहीं अवश्य होता है ये पात्र वास्तविक पात्रों से साम्य रखते हैं।[2] उपन्यासकार इन चरित्रों का चुनाव समाज में बिखरे हुए विभिन्न चरित्रों से ही करता है और कल्पना के द्वारा उन्हें अपने अनुरूप ढाल लेता है।

चरित्र-चित्रण की महत्ता बताते हुए डा0 गुलाबराय का कहना है कि– 'यदि उपन्यास का विषय मनुष्य है तो चरित्र–चित्रण उपन्यास का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है क्योंकि मनुष्य का अस्तित्व उसके चरित्र में है। चरित्र के कारण ही हम एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से पृथक करते हैं। चरित्र के द्वारा ही हम मनुष्य के आपे (पर्सनैलिटी) को प्रकाश में लाते हैं। चरित्र में मनुष्य का बाहरी आपा और भीतरी आपा दोनों ही आ जाते हैं। बाहरी आपे में मनुष्य का आकार–प्रकार, वेश–भूषा, आचार–विचार, रहन–सहन, चाल–ढाल, बातचीत के विशेष ढंग (तकियाकलाम, संबोधन आदि) और कार्य–कलाप भी आते जाते हैं। भीतरी आपा इन सब बातों से अनुमेय रहता है। पात्र के भीतरी आपे का चित्रण बाहरी आपे के चित्रण में कहीं अधिक कठिन होता है।[3]

नागर जी ने अपने उपन्यास के पात्रों का चयन वर्तमान जीवन से ही किया है। नागर जी ने अपने चारों तरफ के सामाजिक वातावरण से ऐसे पात्रों का निर्माण किया है जो हमारे आस–पास के वातावरण के जीते जागते प्राणी जैसे लगते हैं। नागर जी

---

[1] W. H. Hudson – **An Introduction to the study of literature** P.148
[2] W.H. Hudson – **An Introduction to the study of literature** P.146
[3] काव्य के रूप – डा0 बाबू गुलाबराय पृ0178

के चरित्रों की यही विशेषता है कि वे कहीं पर भी बनावटी प्रतीत नहीं होते बल्कि लोक जीवन की गहरी अनुभूति रखने वाले नागर जी के उपन्यासों के पात्र सामाजिक जीवन व अपने चतुर्दिक परिवेश के जीवन्त पात्र जैसे लगते हैं।

विचारकों ने चरित्र–चित्रण के बारे में बहुत से महत्वपूर्ण निर्देश दिये हैं। उनका कहना है कि उपन्यास के चरित्र यद्यपि उपन्यासकार द्वारा गढ़े होते हैं। परन्तु फिर भी वे 'अपने मानव होने और ईश्वरीय सृष्टि होने का आभास देते हैं।..................... उपन्यासकार अपने कौशल से उनमें ऐसे गुण भर देता है कि उनसे हमारा निकटतम तादात्म्य स्थापित हो जाता है और उनके सुख दुःख हमारे अपने से प्रतीत होते हैं।'[1] कहने का तात्पर्य यह है कि उपन्यासकार को ऐसे चरित्रों की रचना करनी चाहिए जो वास्तविक से लगे तथा उपन्यास पढ़ने के पश्चात वे हमारी स्मृति में बने रहें।

वास्तव में पात्र रचना करते समय यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि 'पात्र न तो गुणों के पुतले हों और न ही अवगुणों के ही। सामान्य जीवन में जिस प्रकार हमें ऐसे व्यक्ति मिलते हैं जिनमें गुण तथा अवगुण दोनों होते हैं इसीलिए पात्रों का रूप भी वास्तविक होना चाहिए, तभी वे वास्तविक प्रतीत होंगे[2]।

चरित्रों की विशेषता प्रकट करते हुए नागर जी ने कहा है– कलाकार का बड़प्पन इसी में है कि उससे अधिक पाठकों को उसके पात्रों की याद आए।[3]

---

[1] **An Introduction to the study of Literature** W. H. Hudson P.145
[2] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ0 251
[3] अमृत लाल नागर – जिनके साथ जिया – पृ034

चरित्र की विशेषता: प्रकट करते हुए एडविन मूर ने अपनी किताब 'स्ट्रक्चर ऑफ नॉवेल' में लिखा है– "वस्तु और चरित्र-निर्माण परस्पर पूरक कार्य हैं। निर्माण हो सकता है, न संवादों की योजना ही हो सकती है, न किसी समस्या को ही उठाया जा सकता है, न कल्पना के लिए भूमि ही मिल सकती है, न कथावस्तु का ही गठन हो सकता है और न उपन्यास का मूल उद्देश्य ही सिद्ध हो सकता है। वास्तव में चरित्र उपन्यास के सभी तत्वों को अस्तित्व प्रदान करता है। अतः उपन्यास में चरित्र--चित्रण का भी अपना एक शिल्प होता है। कथानक की अभिव्यक्ति पात्रों द्वारा ही होती है। कोई भी कथा अथवा घटना व्यक्तियों की कियात्मकता के बिना अस्तित्वहीन एवं निर्जीव है। वस्तुतः वस्तु एवं पात्रों को अलग कर देखना बेमानी है।[1]

नागर जी लोक जीवन के साथ गहराई से जुड़े हैं तथा प्रेमचन्द को तरह जिन्दगी की गहरी छानबीन करते हैं और बनावटी पात्रों की सृष्टि से बचते हैं। किसी पूर्व धारणा या विचार को वे पात्र रचना का मूलाधार नहीं बनाते .... उनके लिए जीवन प्रमुख है, परिस्थितियाँ प्रधान हैं। उनमें जन्म लेने वाले और विकसित होने वाले पात्र अपनी–अपनी परिधि के अनुकूल अपने विचारों भावों और कल्पनाओं का विकास करते हैं।[2] इसीलिए नागर जी ने अपने चरित्रों को वास्तविकता के धरातल पर ला

---

[1] *The characters are not part of the machinery of the plot merely a rough frame lock round the characters. on the contrary bath are insepratably knit together. The given qualities of the characters determine the action. and the action in turn progressively changes the characters and thus everything is borne to|rds an end* ,, Edwin Mouir structure of Novel P.144

[2] डा0 विश्वम्भर नाथ उपाध्याय–आलोचना –जनवरी, 1966 पृ0144

खड़ा किया है। नागर जी के चरित्रों की यह विशेषता है कि वे हमारे सामाजिक जीवन के यथार्थ जैसे प्रतीत होते हैं।

नागर जी के कुछ उपन्यासों के पात्र विशिष्ट आदर्शों, सिद्धान्तों, एवं जीवन के दर्शन के प्रतिपादन के लिए रचे गए हैं जिन्हें हम लेखक के प्रतिनिधि पात्र भी सकते हैं। 'बँद और समुद्र' के 'बाबा रामजी दास', 'शतरंज के मोहरे' के 'दिग्विजय ब्रहमचारी', 'अमृत और विष' के 'अरविन्द शंकर' 'महाकाल' का 'पाँचू गोपाल' पात्र है। जीवन के प्रति गहन आस्था रखने वाले ये पात्र लेखक के मानवतावादी एवं आस्थाशील विचारों के सीधे वाहक हैं।

'अमृत और विष' उपन्यास में नायक अरविन्द शंकर के माध्यम से जैसे नागर जी ने अपने पात्रों को चुनने के ढंग के रहस्य को उद्घाटित कर दिया है। यह रहस्य और कुछ नहीं सामान्य जीवन से ही पात्रों को चुन लेने का रहस्य है। लोक जीवन से गहराई से जुड़े होने के कारण ही उन्हें जीवित पात्रों की इतनी बड़ी पूँजी प्राप्त हुई है। 'बूँद और समुद्र' में ताई जैसे अविस्मरणीय चरित्र सृष्टि का गुण लोक जीवन के साथ लेखक की इसी अभिन्नता में खोजा जा सकता है। 'सघन मनोविश्लेषण से युक्त इस चरित्र की एक एक रेखा सजीव विरोधाभासों से अंकित की गई है। नारी की विवशता और सशक्तता, ममता और निर्ममता, कठोरता और स्निग्धता के सुदूर डोरों से बँधी हुई ताई सहज ही नागर जी के साहित्य की अमर कृति बन गईं हैं।[1]

---

[1] अमृत लाल नागर व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त डा. सुदेश बत्रा पृ. 310

नागर जी के पहले उपन्यास 'महाकाल का नायक 'पाँचू गोपाल' एक बौद्धिक चरित्र है। इसके साथ वह नागर ही के विचारों तथा चिंतन को भी स्पष्ट करता है। इसी प्रकार 'बूँद और समुद्र' में व्यष्टि – समष्टि समन्वय की समस्या से सम्बन्धित गम्भीर बौद्धिक चिन्तन को प्रस्तुत करने वाले विशिष्ट प्रतिभा सम्पन्न कलाकार, साहित्यकार, बुद्धिवादी पात्रों के रूप में सज्जन, महिपाल और वनकन्या जैसे नारी पात्रों की सृष्टि की है। इसी प्रकार 'नाच्यौ बहुत गोपाल में मेहतर कर्म की समस्त विवशताओं को दिखाने के लिए ब्राह्मणी निर्गुणियाँ को चुना है जिसे कि जबरदस्ती मेहतर कर्म अपनाने पर मजबूर किया है तथा इस घिनौनी स्थिति से सामंजस्य बिठाने के लिए कितनी गहन पीड़ा का अनुभव किया है? इस का स्पष्ट वर्णन नागर जी ने अपनी रचना 'नाच्यौ बहुत गोपाल' में किया है।

नागर जी के अपने मिलन सार, बहिर्मुखी व्यक्तित्व तथा व्यापक सम्बन्धों के कारण हमें उनके उपन्यासों में मानव जीवन की विविध सम्भावनाएँ दिखाई देतीं हैं। इसीलिए उनके उपन्यासों में पात्रों की भरमार है। ये पात्र जीवन को महाकाव्यात्मक विस्तार तथा सम्भावना में दिखाते हैं।

नागर जी ने अपने उपन्यासों में बहुरंगी पात्र सृष्टि की है। 'सेठ बाँकेमल'[1] सज्जन, महिपाल, नाई, वनकन्या, शीला, कल्याणी[2], चेलम्मा, माधवी, कोवलन[3], रमेश,

---

[1] सेठ बाँकेमल अमृत लाल नागर
[2] बूँद और समुद्र अमृत लाल नागर
[3] सुहाग के नूपुर अमृत लाल नागर

रानी बाला, लच्छू, अरविन्द शंकर, डा. आत्माराम[1], निर्गुनियाँ[2], गुरसन बाबू, बिल्लू[3], रामेश्वर, सीता[4], इन सभी पात्रों की विशिष्टता सजीवता और सप्राणता अपना निश्चित व्यक्तित्व बनाए रखती है। दूसरी ओर बनिया मोनाई[5] सेठ रूप रतन[6] 'सर द्वारका दास, विरहेश, जगदम्बा सहाय, बड़ी, छोटी, तारा, नंदो, चित्रा'[7],'कन्नगी'[8], मैत्रेयी, कुसुम[9]' आदि पात्र टाइप अधिक हैं। अपनी वर्गीय विशेषताओं से सम्पन्न ये पात्र मुख्यतः स्थिर चरित्र है। पाँचू गोपाल[10], सज्जन, महिपाल, वनकन्या, ताई[11], लच्छू[12], निर्गुनियाँ[13], सतसाई प्रसाद उर्फ बिल्लू[14], सीता आदि ऐसे पात्र हैं जो परिस्थितियों के प्रवाह में बहते हुए विकास प्राप्त करते हैं। वे मुख्यतः व्यक्ति चरित्र हैं, किन्तु इनमें अपने – अपने वर्ग के संस्कार भी समाहित हैं। उदाहरण के लिए हम सज्जन को ले सकते हैं-- यह अभिजात वर्ग की विशेंषताओं से युक्त है। नारी को मात्र मनोरंजन का साधन मानकर अनेक नारियों से खेलना, नौकरों को डाँटना, तारा वर्मा – दम्पत्ति से संबंध बढ़ाने में हिचकिचाना और कन्या से की हुई प्रतिज्ञा से डगमगाना, उसके वर्गगत संस्कार हैं। किन्तु अन्ततः जीत उसके व्यक्ति की होती है। पहले वह समाज के अन्दर आकर रहता है, फिर वह अपनी बुरी आदतों को छोड़ता है। वनकन्या से उसका प्रेम होता है तत्पश्चात विवाह संबंध बनाता है। उसके बाद सम्पत्ति दान करके ईर्ष्या – द्वेष

---

[1] अमृत और विष
[2] नाच्यौ बहुत गोपाल
[3] बिखरे तिनके
[4] अग्निगर्भा
[5] महाकाल
[6] अमृत और विष
[11] बूँद और समुद्र
[12] सुहाग के नूपुर

7. अग्निगर्भा
8. महाकाल
9. बूँद और समुद्र
10. अमृत और विष
13. नाच्यौ बहुत गोपाल
14. अग्निगर्भा

से ऊपर उठकर समष्टि साधना के पथ पर अग्रसर होता चला जाता है। इस प्रकार से गत्यात्मक चरित्र व्यक्ति होते हुए भी सज्जन वर्गीय विशेषताओं से भी सम्पन्न हैं।

नागर जी के वर्गगत पात्र अपनी – अपनी वर्गीय प्रवृत्तियों तथा विशेषताओं से युक्त हैं। उच्च वर्ग के पात्रों के अन्तर्गत जमींदार, पूँजीपति, बड़े – बड़े व्यवसायी आदि हैं। जैसे– जमींदार दयाल बाबू , राय बहादुर द्वारका दास , डा. आत्माराम (उच्च वर्ग के बुद्धि जीवी) लाला रूप चन्द्र, रेवती रमन, खोखा मियाँ, ये उच्च वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं। जिन्हें उनकी वैयक्तिक विशेषताओं के साथ नागर जी ने प्रस्तुत किया है।

मध्यवर्ग का जो सही चरित्र है उसे अपने मध्यवर्गीय नारी चरित्रों और पुरुष पात्रों द्वारा नागर जी ने पूरी ईमानदारी के साथ व्यक्त किया है। नारी चरित्रों के विषय में नागर जी विशेष संवेदनशील रहे हैं। वे मानते रहे हैं कि नारी हमारे समाज में शोषित वर्ग का ही अंग है। उसे युगों की दासता, प्रताड़ना, अपमान ने अंधकार जैसा जीवन दिया है। नागर जी को जहाँ भी मौका मिला है आज की स्त्री को विद्रोह की भाषा देने की चेष्टा की है। नागर जी ने अपने उपन्यासों में कुलीन नारियों से लेकर समाज की उपेक्षित नारियाँ वेश्याओं तक के जीवन का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है।

नागर जी के उपन्यासों में प्रमुख पात्रों के साथ – साथ गौण पात्रों की भी बहुतायत है। जहाँ प्रमुख पात्र सामाजिक समस्याओं को निश्चित परिणतियों तक ले जाते हैं, वहीं गौण पात्र, प्रमुख पात्रों को सजीव और प्रभावी बनाने में सहायक हुए है। उपन्यासों में अनुकूल वातावरण बनाने के साथ–साथ कथानक को गति प्रदान करने

की दृष्टि से ये पात्र सार्थक हैं। इस दृष्टि से राजासाहब, सालिगराम, जानकी सरन, नन्दो, छोटी, बड़ी, तारा, शंकर लाल, कबि बोर, मि. वर्मा, चित्रा, सेठ रूपरतन, मुहल्ले के बड़े बूढ़े पुत्ती गुरु, रद्धू सिंह, बाबू सत्यनारायण, लाला रूप चन्द्र, हलवाइन दादी, सहदेई, गोपी आदि न जाने कितने पात्र हैं जो लखनऊ शहर के अंचल को हमारे सामने सजीव कर देते हैं। ये गौण पात्र उपन्यास के उद्देश्य की दृष्टि से सामाजिक जीवन के चित्र को पूर्णता देने में निश्चय ही सहायक हैं।

नागर जी ने अपने सामाजिक, ऐतिहासिक सभी उपन्यासों में भी ऐसे न जाने कितने गौण पात्र हैं जिनकी गिनती नहीं हो सकती है। नागर जी अपने गौण पात्रों की भी ऐसी कुछ न कुछ विशेषताओं का अंकन अवश्य करते हैं जो सामान्य को भी विशेष बनाती हो। 'बूँद और समुद्र' के पुत्ती गुरु, 'नाच्यौ बहुत गोपाल' में मसीताराम, गुल्लन और नब्बू जैसे गौण परन्तु जीवन्त पात्र हैं। गरीब, लाचार, जाति बिरादरी के प्रति आस्थावान, दीन–धरम के प्रति सतर्क मसीताराम मेहतर वर्ग का प्रतीक है। मसीता की प्रेमिका लेकिन शारीरिक संबंधों से दूर लालची भी और ईमानदार भी, सेविका भी और स्वार्थी भी । ये दोनों यथार्थ से जुड़े मानव मन की साधारण विशेषताओं से सम्पन्न चरित्र ऐसे बन गये हैं जिनका कोई मुखौटा नहीं। " अपनी सारी स्वभावगत कमजोरियों के बीच टिपिकल पात्रों से अलग नागर जी की एक और उपलब्धि है जो परिवेश को प्रामाणिक, तटस्थ तथा जीवन्त बनाने में सहायक है।[1]

[1] अरूणेश नीरन – पीर का पुराण – दस्तावेज अंक 1 – अक्टूबर 1978

इन गौण पात्रों की विशेषता यह है कि ये अपनी क्षणिक झाँकियों में ही दीप्त हो उठे हैं। नागर जी ने इनकी पारस्परिक भिन्नताओं की पहचान कराने वाली अपनी अपनी बोली–बानी विशिष्ट अनुभवों और आकृति–प्रकृति में एक दूसरे से पृथकता दर्शाकर मूर्त और साकार कर दिया है।

नागर जी ने अपने उपन्यासों में पुरूष पात्रों की अपेक्षा नारी पात्रों को अधिक महत्व दिया है। 'बूँद और समुद्र' मे 'ताई', 'सुहाग के नूपुर' में 'माधवी', 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' में दिलाराम, 'नाच्यौ बहुत गोपाल' में 'निर्गुनियाँ' और 'अग्निगर्भा' में सीता के चरित्र तो आरम्भ से लेकर अन्त तक सम्पूर्ण उपन्यास पर छाये हुए हैं। इसके साथ ही वनकन्या, कन्नगी और इज्या के चरित्र भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। नारी पात्रों के व्यक्तित्व को निखारने एवं सँवारने में नागर जी ने विशेष प्रयास किया है।

नागर जी का नारी चरित्र–प्रधान कांतिकारी उपन्यास 'नाच्यौ बहुत गोपाल' की प्रमुख पात्र निर्गुनियाँ है। यह उपन्यास नागर जी ने समाज में अत्यन्त हीन मानी जाने वाली मेहतर जाति के सूक्ष्मातिसूक्ष्म पहलुओं को यथार्थ रूप अनावृत्त करने के लिए रचा है। निर्गनियाँ नागर जी के श्रष्ठ चरित्रों में आती है। निर्गुनियाँ के चरित्र की यह विशेषता है कि अत्यन्त विषम परिस्थितियों में वह घबड़ाती नहीं है बल्कि मजबूत विचारों के साथ उन परिस्थितियों से निबटती है तथा अपने डाकू व मेहतर पति मोहना की मृत्यु के पश्चात वह स्वयं तथा अपने बच्चों को एक सम्मानित जीवन जीने की राह चुनती है।

'निर्गुनियाँ' का सम्पूर्ण व्यक्तित्व हिमालय जैसा है जिसका आत्म विश्वास, निष्ठा और धैर्य अटूट है। दूसरी ओर उसमें गंगाजल सी पवित्रता, निर्भलता और ममत्व के साथ ही बाधाओं और सामाजिक परिस्थितियों से लड़ने का अदम्य साहस है।

नागर जी के उपन्यास 'बूँद और समुद्र' की 'ताई' नागर जी की अमर सृष्टि है। इस उपन्यास में सबसे आकर्षक, प्राणवान् व विभिन्न चारित्रिक विशिष्टताओं से युक्त चरित्र उपन्यास की धुरी है।[1] नागर जी ने उपन्यास के अन्तर्गत ताई को 'भारत माता' कहा है जिसका आशय यही लगता है कि ताई के चरित्र में भारतीय जीवन और विशेषकर नारी जाति की समस्त रूढ़िवादिता एवं मानवीयता मूर्त हो सकी है। उनमें 'कायरता व साहस, सहिष्णुता एवं असहिष्णुता, संकीर्णता तथा उदारता की परस्पर विरोधी गुणों की समष्टि है।[2] उनका व्यक्तित्व सब पात्रों से अलग एक विशेषता लिए हुए है। ताई नागर जी की चरित्र सृष्टि की महान उपलब्धि बन गई है। जिसके बारे में स्वयं नागर जी लिखते हैं– मैं अब भी यह बखानने की क्षमता रखता हूँ कि भीतर की पर्तों के किस इशारे से प्रेरित होकर मेरे मन में एकाएक उस पात्र की कल्पना लहराती हुई आ गई, जिसने 'बूँद और समुद्र' उपन्यास में अपने लिए विशेष ख्याति तो अर्जित की ही पर मुझे भी अपना चितेरा होने का बड़ा यश दे गई।[3]

नागर जी ने 'बूँद और समुद्र' में ताई का चरित्र सबसे अधिक आकर्षक, प्राणवान, तथा सजीव ढंग से प्रस्तुत किया है तथा उपन्यास की कथावस्तु में गहन भाव

---

[1] आस्था और सौन्दर्या – डा0 रामविलास शर्मा – पृ0 138

[2] हिन्दी उपन्यास – डा0 सुषमा धवन – पृ077

[3] सम्पा0 डा0 भीष्म साहनी – बूँद और समुद्र – संस्मरण – नागर – उद्धृत आधुनिक उपन्यास सौन्दर्य पृ0 95

से अनुस्यूत हुआ है। ताई के जीवन में परिस्थितियों के इतने अधिक उतार चढ़ाव आये हैं तथा उन्होंने अपने जीवन में इतना अधिक भोगा है और इस भोगने की प्रक्रिया ने उन्हें इतना अधिक निर्मम व कठोर बना दिया है कि सारा संसार उन्हें शत्रुवत् लगता है। "जीवन की परिस्थितियों ने उसके मन में विचित्र ग्रन्थियाँ उत्पन्न कर दी हैं। अब वह जादू–टोने से मानव मात्र का संहार करने पर तुली हुई हैं। भारतीय समाज का सारा अन्धविश्वास और मनुष्य से घृणा करने वालों की सारी हिंसा मानो सिमट कर 'ताई' में केन्द्रित हो गईं हैं।[1] 'ताई' उत्पीड़ित है, सताई हुई है। परिस्थितियों ने उन्हें दानवी बना दिया है परन्तु उनके हृदय में भी मानवीय करूणा, दया और वात्सल्य जैसी कोमल भावनाएं विद्यमान हैं।

ताई के चरित्र के विभिन्न अन्तर्विरोधों के बीच जो बीज रूप से विद्यमान मानवीय करूणा का तत्व है, वह उन्हें अत्यधिक आकर्षक, स्वाभाविक और सशक्त चरित्र बना देता है। बिल्ली के बच्चों को घर से बाहर फेंकने जाते हुए ताई को अपनी बेटी की याद आ जाती है और वे उन बच्चों को कलेजे से लगा लेती हैं। 'हिंसा और अंधविश्वास की पुतली ताई में भी प्रेम का बीज मिटने से रह गया था। मानवेतर जीव के संस्पर्श से वह बीज सहसा अंकुरित हो उठा। इस बीज के मिटाने में रईस पति और ताई के मुहल्ले वालों ने कुछ न उठा रखा था। मनुष्य ने उसे मिटाया, पशु जीवन

---

[1] डा0 राम विलास शर्मा – आस्था और सौन्दर्य पृ0 138

ने उसे फिर अंकुरित कर दिया। इसका श्रेय पशु जीवन से अधिक ताई को है जो अपने अन्तस्थल में कहीं अब तक वह प्रेम का बीज छिपाये हुए थी।[1]

सब मिलाकर 'ताई' में भारतीय नारी के सभी गुणदोष विद्यमान हैं। डा0 राम विलास शर्मा के अनुसार– 'ताई का चरित्र उपन्यास की धुरी है'।[2] इस प्रकार से हम सकते हैं कि 'ताई' के चरित्र में नागर जी ने मनोवैज्ञानिक दृष्टि एवं क्षमता का परिचय दिया है। हिन्दी के समीक्षकों ने उसे हिन्दी उपन्यास जगत का अविस्मरणीय चरित्र कहा है।[3] कुछ समीक्षकों के अनुसार तो – ताई विश्व कथा – साहित्य में किसी भी सफल चरित्र की तुलना में रखी जा सकती है।[4]

वर्णनात्मक वस्तुगतता – जब एक उपन्यासकार अपनी कथा को एक विस्तृत भावभूमि पर स्थापित करना चाहता है तब वह वर्णन के द्वारा अपनी विभिन्न कथाओं को विस्तार देकर एक उपन्यास का रूप प्रदान करता है। वर्णनात्मक दृष्टि से नागर जी के उपन्यास 'बूँद और समुद्र' तथा 'अमृत और विष' को लिया जा सकता है। नागर जी का उपन्यास 'बूँद और समुद्र' अपने आकार और प्रकार में अत्यन्त वृहत् है। बूँद और सरिताओं के समान छोटी बड़ी कथाओं, रेखाचित्रों, तथा संबद्ध प्रसंगों की तमाम धाराएँ मिल जुल कर उपन्यास के उद्देश्य रूपी महासागर को सम्पन्न करतीं हैं।

'बूँद और समुद्र' पहला प्रमुख उपन्यास है जिसमें आंचलिकता का संबंध नागरिक जीवन से है। इस उपन्यास मे नागर जी ने लखनऊ के प्रमुख तथा पुराने

---

[1] आस्था और सौन्दर्य – डा0 राम विलास शर्मा पृ0139
[2] आस्था और सौन्दर्य – डा0 राम विलास शर्मा पृ0 138
[3] विवेक के रंग – दो आस्थाएँ – राजेन्द्र यादव पृ0 258
[4] हिन्दी नवलेखन – राम स्वरूप चतुर्वेदी, पृ0 119

चौक मुहल्ले में केन्द्रित रहकर उस मुहल्ले की अपनी खारा रेखाओं को वहाँ के समूचे सामाजिक जीवन को वहीं की बोली–बानी में एक सजीव व्यक्तित्व देने की चेष्टा की है[1]।'

इस उपन्यास के माध्यम से नागर जी ने लखनऊ के चौक मुहल्ले के द्वारा सम्पूर्ण भारतीय सामाजिक जीवन को बड़ी ही कुशलता से प्रस्तुत किया है। चौक मुहल्ले का अपना सामाजिक जीवन बूँद का स्थानापन्न है तो वृहत् भारतीय समाज को समुद्र की संज्ञा दी जा सकती है। इस उपन्यास में नागर जी ने व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंधों की समस्या को भी उठाया है।

नागर जी ने अपनी वर्णन कुशलता के साथ इस उपन्यास में सज्जन, महिपाल, कर्नल, बाबा रामजी, वर्मा, शंकर, ताई, वनकन्या, कल्याणी जैसी महत्वपूर्ण बूँदों का निर्माण करके उन्हें अपने जीवन समुद्र में डुबकी लगाते हुए दिखाया है। नागर जी ने छल – प्रपंच, राजनीतिक दाँव–पेंच, सामाजिक रहन–सहन, वैयदित्तक प्रेम, पारिवारिक द्वेष, मनुष्य की स्वाभाविक अनुभूतियाँ, धार्मिक विश्वास, सांस्कृतिक चेतना, प्रदर्शनियों एवं समारोह, कला एवं साहित्य आदि का वर्णन किया है।

नागर जी अपनी वर्णन शैली के द्वारा मुहल्ले की प्रत्येक छोटी छोटी वस्तुओं को भी कैनवास पर उतार देना चाहते हैं। नागर जी वर्णन जिस जगह का करते हैं उस जगह का बिल्कुल चित्र सा पाठक के सामने उतार कर रख देते हैं। 'जब कभी एक पात्र नगर के एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाता है तो लेखक मार्ग का पूरा वर्णन

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास – साहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र पृ0 85

करता जाता है और मार्ग के विभिन्न स्थलों को देखकर पात्र के मन में जो विचार उठते हैं उनका भी परिचय देता जाता है।[1]

वर्णनात्मक चरित्र–चित्रण में पात्र प्रायः बहुल और विविध होते हैं 'बूँद और समुद्र' में भी पात्रों की संख्या अधिक है। पुरूष पात्रों में जमींदार, चित्रकार, साहित्यकार, केमिस्ट, समाजसेवी, महाजन, प्रकाशक राजनीतिक नेता, मंत्री, क्लर्क, साधु, पहलवान, गुण्डे, पुजारी, कीर्तनिया, हलवाई, बढ़ई, मसालाफरोश, सुनार, दलाल, अध्यापक, कवि, गीतकार, अभिनेता, कप्तान, दरोगा, आदि सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन की विभिन्न स्थितियों को मूर्त करते हैं। स्त्री पात्रों में विधवा नारियाँ, कुंठित नारियाँ, रूढियों एवं परम्पराओं में बँधी नारियाँ, सोसाइटी वेश्याएँ, बहुपुरूषगामी, कुटनी और निन्दा कुशल नारियाँ, आधुनिकता और प्राचीनता के मिश्रण का प्रतिरूप आदि विभिन्न नारी स्थितियों के चित्र प्रस्तुत किये गये हैं।

चरित्र – चित्रण के वर्णन में लेखक ने बाह्य और अंतः दोनों प्रणालियों का उपयोग किया है लेकिन वर्णनात्मक वस्तुगतता की वजह से बाह्य चित्रण को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया है। नागर जी के पात्र अपनी ओर से कम बोलते हैं। वह स्वयं अपनी ओर से उनका ब्यौरा प्रस्तुत करते जाते हैं। महिपाल, वनकन्या, ताई, शीला–स्विंग, आदि की पूर्व जिन्दगी का वर्णन लेखक अपनी ओर से करता है, साथ ही उनके परिवर्तन एवं विकास की सूचना भी देता जाता है।

---

[1] सत्यपाल चुघ – प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की शिल्प–विधि पृ0 517

इस प्रकार नागर जी के उपन्यास बूँद और समुद्र को वर्णनात्मक दृष्टि से सफल कह सकते हैं।

नागर जी अपने एक और वृहद् उपन्यास 'अमृत और विष' में वर्णन शैली के माध्यम से कथा को विकास प्रदान कर रोचकता उत्पन्न करने में सफल हुए हैं 'अमृत और विष' में नागर जी ने उपन्यास के भीतर उपन्यास लिखवाने का एक नया प्रयोग किया है। नागर जी ने उपन्यासकार अरविन्द शंकर के माध्यम से लेखन जीवन में आने वाली कठिनाइयों का साकार और मूर्त वर्णन किया है। नागर जी बताते हैं कि किस प्रकार एक लेखक को अपने लेखन को जीवित रखने के लिए पारिवारिक, आर्थिक, व सामाजिक समस्याओं की गहन कटु अनुभूतियों से गुजरना पड़ता है पल–पल पर उसे नये संघर्षों व नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आत्मकथात्मक रूप में अरविन्द शंकर अपने जीवन की परिस्थितियों, अपने परिवार और मित्रों का उल्लेख करता है इसी में से ऐसे पात्र निकलते हैं जिनके आधार पर वह अपने उपन्यास की कथा परिकल्पित कर लेता है। एक औपन्यासिक कथा में दूसरी कथा इस खूबी से सहज स्वाभाविक ढंग से फूट पड़ती है कि कहीं भी व्यतिक्रम दृष्टिगोचर नहीं होता।

इस उपन्यास में एक कथा न होकर छोटी बड़ी अनेक कथाएं हैं: जीवन स्थितियाँ हैं, विभिन्न समय और स्थानों के अलग-अलग परिप्रेक्ष्यों मे गृहीत दृश्य हैं। लगता है कि जैसे घटनाचक्र और परिस्थिति के प्रवाह में विविध आयु, वर्ग, मनःस्थिति के मनुष्यों का जुलूस निकला हुआ है। उनकी बोली बानी, व्यंग्य विनोद, दुःख–दर्द,

आशा–आकांक्षा, विचार–पद्धति, जीवन–रीति, पारस्परिक संबंध आदि अपनी जीवंतता के साथ अपने मन पर अपनी छाप छोड़ जाते हैं।

मध्यवर्ग के ऊँचे तबके से लेकर गली मुहल्लों के सामान्य निम्न मध्यवर्गीय जीवन तक के यथार्थ का वर्णन इस उपन्यास में अत्यन्त पारदर्शी सफाई के साथ हुआ है। मध्यवर्गीय जीवन के चित्रण की दृष्टि से तो यह उपन्यास अपने आप में अनूठा है। रेखाचित्र के माध्यम से वर्णन करना नागर जी की यथार्थवादी शैली की महत्वपूर्ण विशेषता है। वर्णनों की सजीवता नागर जी के यथार्थवाद की दूसरी प्रमुख विशेषता है उपन्यास में आये बारात के दृश्यों का वर्णन, बाढ़ का वर्णन, लच्छू की रूस यात्रा का वर्णन, आम चुनाव, छात्र–विद्रोह, हड़ताल आदि के वर्णन द्वारा नागर जी ने वर्णनात्मक शिल्प की कुशलता का परिचय दिया है।

अमृत लाल नागर के कथा विकास का विश्लेषणात्मक चित्र

अमृत लाल नागर हिन्दी के उन महान उपन्यासकारों में से एक है जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से लेखन की ऊँचाइयों को छुआ है। नागर जी ने अपने उपन्यास की मूल कथाओं में छोटी छोटी कथाओं को स्थान प्रदान करके कथा का विकास किया है। नागर जी अपनी कथा में विभिन्न कथाओं के माध्यम से उस समय का चित्र सा उतार कर रख देते हैं। जैसे – 'सुहाग के नूपुर' उपन्यास में नागर जी ने कुलवधू बनाम वेश्या जीवन के द्वन्द्व का वर्णन किया है।

नागर जी का प्रस्तुत उपन्यास महाकवि इलंगोवन द्वारा रचित पुस्तक 'शिलप्पदिकारम्' की कथावस्तु पर आधारित है। नागर जी ने इसे नये रूप और रंग में ढालकर इस उपन्यास की रचना की है। इस उपन्यास में कुलवधू के सुहाग के नूपुर तथा नगर वधू के नृत्य घुँघरूओं का संघर्ष ही उपन्यास की मूल संवेदना है। वेश्या माधवी समाज के प्रति संघर्ष करती हुई एक गृहणी की भाँति पति–स्नेह, सन्तान, घर, धन दौलत सब कुछ प्राप्त कर लेती है परन्तु सुहाग के नूपुर पहनने की उसकी इच्छा कभी पूर्ण नहीं होती है। अन्त में वह इस कटु तथ्य को उद्घाटित करती हुई कहती है–'पुरूष जाति के स्वार्थ और दम्भ के कारण स्वार्थ और सारे पापों का उदय होता है। उसकी स्वार्थ वृत्ति के नाते ही नारी जाति पीड़ित है। एकांगी दृष्टिकोण से सोचने के कारण पुरूष न तो स्त्री को सती बनाकर सुख दे सका न ही वेश्या बनाकर। इसलिए वह स्वयं झकोले खाता है और आगे खाता रहेगा।[1]

'सुहाग के नूपुर' में नागर जी ने कोवलन, कन्नगी, माधवी के बीच चलते हुए अन्तर्द्वन्द्व का चित्र बड़ी ही कुशलता से प्रस्तुत किया है। इस उपन्यास की कथा को विकास देने के लिए नागर जी ने पेरियनायकी पान्सा, चेलम्मा, मासत्तुवान तथा मानइहन सेठ के चरित्रों को चुनकर एक श्रेष्ठ रचना को प्रस्तुत किया है। नागर जी ने इस रचना में यह समझाने का प्रयत्न किया है कि पुरूष प्रधान समाज में सदैव ही नारी को सम्मान पाने के लिए संघर्षरत रहना पड़ता है चाहे वह वेश्या का रूप हो या एक कुलवधू का। यदि माधवी समाज और उसके कर्णधारों के अत्याचारों का लक्ष्य

---

[1] सुहाग के नूपुर – पृ0 267

बनती है तो गृहलक्ष्मी कन्नगी पति के अत्याचारों को सहन करती है। वह इस स्थिति का विरोध भी नहीं कर सकती, वह यह सब सहन करने को बाध्य है क्योंकि इस स्थिति में भी सामाजिक मान्यताएँ एक पत्नी को पति के विरूद्ध जाने से रोकती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि माधवी तथा कन्नगी दोनों ही समाज और उसके नियमों द्वारा पीड़ित हैं। इस प्रकार हन परिस्थितियों में यदि कहा जाये कि उपन्यास में नागर जी ने वेश्या या कुलवधू की पीड़ा नहीं वरन् सामाजिक व्यवस्था के चक्र में पिसती कराहती नारी मात्र की दुःख कथा कही है, तो अधिक सही होगा। 'एक कुलवधू के रूप में पीड़ित है, दूसरी नगरवधू के रूप में, एक घर की सीमाओं में घुट रही है दूसरी खुले समाज में असफल विद्रोह के बावजूद घुटती है। यह घुटन मुख्यतः नारी जीवन की घुटन है जिसे इतिहास की पृष्ठभूमि में स्वर्ण युग की ऊपरी चमक दमक के बीच नागर जी ने प्रस्तुत किया है।[1] सुहाग के नूपुर में नागर जी ने तत्कालीन समाज के यथार्थ को विशेष रूप से देखने और परखने की कोशिश की है। उन्होंने कावेरी पट्टणम् के वैभव के लुभावने चित्रों को खींचा है, बड़े राजकीय समारोहों का विवरण है-- तथा बड़े बड़े श्रेष्ठियों के महलों, राजभवनों तथा मन्दिरों के सामने बैठी हुई भिखमंगों की पंक्ति को भी अपनी तीखी नजरों से देखकर वास्तविक चित्र खींचा है। एक ओर उन्होंने रूप गर्विता नर्तकियों के विलासपूर्ण जीवन के आकर्षक चित्र प्रस्तुत किये हैं तो किसी समय राज्य की सर्वश्रेष्ठ नर्तकी और अपूर्व मान–सम्मान और वैभव भोगने वाली चेलम्मा को दर दर ठोकरें खाते हुए भी दिखाया है।

---

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास – साहित्य – प्रकाशचन्द्र मिश्र पृ0 201

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागर जी ने कथानक के विकास में बड़ी ही सूझबूझ व कौशल का परिचय दिया है। कथानक में कहीं भी बिखराव नहीं आने दिया है विभिन्न घटनाओं को बड़ी कुशलता से एक दूसरे से सम्बद्ध करते हुए कथानक का विकास किया है।

चरम - बिन्दु

 वर्णनात्मक गति और संवेदन की चरम-स्थिति

 अमृत लाल नागर के उपन्यासों में चरम-बिन्दु

चरम - बिन्दु

1. वर्णनात्मक गति और संवेदन की चरम स्थिति

जब एक उपन्यासकार अपने आस पास घटित होने वाली घटनाओं को किसी रचना का आधार बनाता है। तो वह उस घटना में अपनी संवेदनाओं और भावनाओं को इस तरह वरर्णनात्मक गति प्रदान करता हुआ विभिन्न घटनाओं के माध्यम से संवेदना की चरम स्थिति तक पहुँचा देता है। वह नानाविध घटनाओं के माध्यम से संवेदना की चरम स्थिति से पाठकों को अन्त तक बॉधे रखता है। संवेदना शब्द मूलतः मनोविज्ञान का शब्द है। किन्तु आधुनिक साहित्य में इसका व्यापक अर्थ है। मनोविज्ञान के अनुसार संवेदना केवल ऐन्द्रिय ज्ञान तक ही सीमित है। किन्तु साहित्य में संवेदना का व्यापक अर्थ में स्वीकार किया गया है। उसे मानव के अन्तर्तम की अनुभूति माना है।

संवेदना का अर्थ होता है ज्ञान की सच्चे अर्थो में अनुभूति। यह दो शब्दों से मिलकर बना है– सम+विद् । सम का अर्थ होता है समान रूप से या प्रत्यक्ष रूप से और विद् का अर्थ है जानना। इस प्रकार संवेदना का अर्थ हुआ ज्ञान को प्रत्यक्ष रूप में जानना जिस रूप में वह है।

बट्रेन्ड रसेल ने संवेदनाओं के विषय में लिखा है–

"मैं विश्वास करता हूँ कि संवेदनायें (मूर्ति विधान भी) मस्तिष्क के लिए सारी सामग्री (Stuff) प्रदान करतीं हैं और मस्तिष्क सम्बन्धित किसी भी तथ्य का विश्लेषण विभिन्न संवेदन समूहों या संवेदना के लक्षणों या संवेदन समूहों के लक्षणों में किया जा सकता है।"[1]

जहाँ तक संवेदना का प्रश्न है नागर जी निःसंदेह एक संवेदनशील उपन्यासकार हैं। नागर जी ने अपने विभिन्न उपन्यासों में संवेदना की चरम स्थिति तक पाठक को पहुँचाया है। नागर जी ने किसी भी घटना के वर्णन में कहीं भी शिथिलता नहीं आने दी हैं। बल्कि अपने कथा संगठन की कुशलता से वर्णन को गति प्रदान करते हुये पात्र के जीवन में घटित होने वाली एक – एक घटना को संवेदना प्रदान की है और उसे चरम बिन्दु तक पहुँचाया है।

महाकाल, सुहाग के नूपुर, नाच्यौ बहुत गोपाल, अग्निगर्भा संवेदना की दृष्टि से निश्चित ही श्रेष्ठ उपन्यासों की श्रेणी में गिने जाते हैं। इन उपन्यासों में नागर जी ने एक–2 घटना का इतनी बारीकी व संवेदनशीलता से चित्रण किया है कि अन्त तक आते–आते पाठक का मन बेहद संवेंदना से भर जाता है। 'महाकाल' में अकाल में भूखों मरते हुये बंगाल के लोंगों की एक–2 घटना से पाठक का हृदय उन अकाल से भूखों मरने वाले व परिस्थितियों से समझौता कर विभिन्न तरह के कष्टों को झेलते हुये भी कष्टों का अन्त न होने वाले दृश्यों से संवेदना के चरम बिन्दु पर पहुँच जाता है।

---

[1] **The analysis of mind** – Betrand Russel P. 69
George allen and unwin Ltd. Ruskin house, 40 Museum street WCI London IV Impression, 1933

'सुहाग के नूपुर' में नागर जी ने माधवी व कन्नगी दोनों को सहानुभूति प्रदान की है। पुरूष अपने स्वार्थ में सती व वेश्या दोनों को कष्ट देता है यही इस उपन्यास में संवेदना का चरम बिन्दु है। 'नाच्यौ बहुत गोपाल' की निर्गुनियाँ तथा 'अग्निगर्भा' की सीता को भी समाज में विभिन्न प्रकार का संघर्ष करना पड़ता है। निर्गुनियाँ अन्त तक आते – आते स्लीपिंग पिल्स खाकर आत्महत्या कर लेती है। सीता की ये दहेज लोभी समाज द्वारा संघर्ष का रास्ता अपनाने पर हत्या करवा दी जाती है जहाँ उपन्यास की संवेदना चरम स्थिति पर पहुँच जाती है।

अमृत लाल नागर के उपन्यासों में चरम–बिन्दु

अमृत लाल नागर जी एक बेहद ही संवेदनशील कथाकार हैं। अमृत लाल नागर जी ने अपनी रचनाओं में संवेदना के एक – एक बिन्दु को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया है। नागर जी ने अपने समाज में, परिवार में, नगर में, अपने आस – पास के जीवन ऐतिहासिक कथानकों में संवेदना जनित और सहानुभूति जनित दृष्टि भंगिमा से समाज के उपेक्षित वर्गों व एक–एक घटनाओं को अपनी वाणी दी है।

नागर जी ने महाकाल, बूँद और समुद्र, शतरंज के मोहरे, सुहाग के नूपुर, मानस का हंस, नाच्यौ बहुत गोपाल, अग्निगर्भा आदि एक से एक उपन्यासों की रचना कर संवेदना के विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत किया है।

'महाकाल' उपन्यास में नागर जी ने सन् 43 में बंगाल में पड़े अकाल का प्रामाणिक तथा यथार्थ चित्रण करते हुये एक संवेदनशील घटना का यथातथ्य प्रस्तुत

किया है। बंगाल के अकाल की रोमांचकारी घटनाओं के संदर्भ में बड़ी ही गहन मानवीय संवेदनायें लिये हुये नागर जी ने उपन्यास के क्षेत्र में प्रवेश किया था। भूख, मौत, नैतिक मूल्यों का विघटन, ह्रास तथा विनाश के यथार्थ चित्रों से कथावस्तु को अधिक से अधिक प्रामाणिक तथा सजीव बनाने के लिये नागर जी ने जिस यथार्थ का चित्रण किया है वह किसी भी संवेदनशील व्यक्ति के दिल व दिमाग को झकझोर देने के लिये पर्याप्त है। नागर जी ने भूख से मरते लोगों का सजीव चित्रण किया है– "खाज के कारण खड़िया की तरह निकल आने वाली खुरदरी चमड़ी में पसलियों की लकीरें चमकती थीं। कइयों के हाथ पैरों में सूजन आ गई थी। शरीर में जगह –2 से पानी रिसता था। गर्मी, सूजाक, और खून की बीमारियों से सड़े हुये शरीर एक दूसरे से रगड़ते, धक्कम धक्का करते, मोनाई पर अपना अपार, अकर्मण्य रोष प्रकट करने के लिये उसकी दूकान पर चढ़े जा रहे थे। इतनी दुर्गन्धपूर्ण देहों से घिरे हुये मोनाई का दम घुटने लगा।"[1] चावल के दाने दाने पर झपटती हुई भीड़ तथा भूखी जनता को दयाल जमींदार और मोनाई अपने आदमियों द्वारा लाठियों, बन्दूकों से मार – मार कर अधमरा करवा देता है– "उसके गोदाम में, उसके आँगन और दालान में खून से सनी हुई लाशें पड़ी थीं। उसका सारा घर अस्त–व्यस्त हो गया था, चीजें टूटी फूटी और लुटी हुई पड़ी थीं। उसके घर में कई जख्मी पड़े थे। खून बह रहा था। कइयों के जीव निकलने से पहले तड़प रहे थे। प्राण छोड़ने की पीड़ा कराह – कराह कर दीवारों में भी दर्द पैदा कर रही थी।" मुट्ठी भर चावल के लिये शरीर का आखिरी वस्त्र भी झपट कर छीनते हुये स्वार्थी पुरूषों का समूह, छोटे – छोटे बच्चों की हत्या करता

---

[1] महाकाल – अमृत लाल नागर – पृ. 67

हुआ मनुष्य, बेची जाती हुयीं नारियाँ आदि एक से एक संवेदनशील बिन्दु है। अपनी पुत्री को जीवित भूनकर खाने की लालसा वाला दृश्य– "सहसा उसने सोचा ये लड़कियाँ किस दिन काम आयेगीं? इन्हें पकाओ – पकाओ तो घर की रौनक लौटेगी– पकाओ।" चमकती हुई आँखों से चाँद को देखते हुये सहसा जोर से उसकी गर्दन पकड़ी और जोर के साथ चूल्हे में उसका मुँह झुका दिया।"[1] बड़ा ही संवेदनशील है। अपनी पत्नी को मारकर खाने वाला पति "अपने हाथ में पत्नी के शरीर के टुकड़ों को देखकर बेनी को नया उत्साह आया था। बेनी ने उन टुकड़ों को मुँह में भर लिया और चबाने लगा।"[2] कुत्तों और गिद्धों के मुँह से अन्न के दाने तथा माँस छीनती हुई स्त्री– "सहसा पाँचू के पास से ही एक मादरजाद नंगीं औरत दौड़ती हुई घूरे की तरफ चली गई। सभ्यता के युग में जन्म लेकर पाँचू खुले आम दिन – दहाड़े ऐसी बेशर्मी से भरी हुई घटना को देखने का आदी न था। पाँचू ने देखा, उस औरत में चीलों, कौओं, कुत्तों , आदमियों से ज्यादा जोश था। जब वह घूरे के पास पहुँची तो सब अलग हो गये।"[3] को देखकर हमारी संवेदना चरम – बिन्दु पर पहुँच जाती है।

'बूँद और समुद्र' में नागर जी ने ताई और महिपाल के माध्यम से गहन संवेदना व्यक्त की है। ताई जिनके कि विवाह के बाद ही राजा बहादुर के घर में लक्ष्मी, यश, वैभव का आगमन होता है। परन्तु किन्हीं कारणोंवश वह अपनी सास का प्रेम व विश्वास न पा सकीं। एक लड़की की माँ बनने व उसके चल बसने के बाद ताई का व्यक्तित्व एक भयानक प्रतिहिंसा में बदल जाता है और वह अलग हवेली में जाकर रहने लगतीं

---

[1] महाकाल – अमृत लाल नागर – पृ. 69
[2] महाकाल – अमृत लाल नागर – पृ. 114
[3] महाकाल – अमृत लाल नागर – पृ. 132

हैं। लड़ाई--झगड़ा टोना – टुटका, आटे के पुतलें आदि बना बनाकर लोगों के विषय में बुरे ख्याल रखना ही जैसे उनका लक्ष्य बन गया। सिर्फ सज्जन ही एक ऐसा व्यक्ति था। जिसे ताई का प्यार मिला । ताई के जीवन के अनेक छोटे बड़े महत्वपूर्ण प्रसंग उस चौक मुहल्ले में घटित होते हैं। स्वभाव से कठोर, मुहल्ले भर के लोगों की मृत्यु की मनौतियाँ मनाने वाली, नारी सुलभ ममता से सर्वथा शून्य ताई की मृत्यु के समय पूरा मुहल्ला शोक मग्न हो जाता है– "ताई का विमान फूलों की तरह लोग उठाये लिये जा रहे थे। जीवन भर ताई को छेड़कर उनकी गालियों से अपना मनोरंजन करने वाले बच्चे, बूढ़े, जवान अन्तिम बार ताई के साथ चले जा रहे थे। आज ताई की लाठी का भय न था, ताई उनके कंधों पर थीं दिलों पर थीं।"[1]

महिपाल एक प्रगतिशील विचारों के साथ ही मध्यवर्गीय संस्कारों से बँधा लेखक है। वह सदैव धन के अभाव से ग्रस्त रहता है। अपने मित्रों से दिखावा करता रहता है परन्तु जब भॉजी के विवाह के अवरार पर लाला रूपरतन द्वारा उसके जीवन का रहस्य (ननिहाल में उसके द्वारा की जाने वाली चोरी) जब भरी सभा में उद्घाटित कर दिया जाता है तब वह आत्म ग्लानि में आकर आत्महत्या कर लेता है – "अपनी कायरता को धोने के लिये मैं स्वेच्छा से आत्महत्या कर रहा हूँ"[2]

ये इस उपन्यास में संवेदना के चरम बिन्दु हैं जिन्हें पढ़कर पाठक के हृदय में इन पात्रों के प्रति सहानुभूति जाग्रत होती है।

---

[1] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर – पृ. 543
[2] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर – पृ. 556

'शतरंज के मोहरे' में नागर जी ने कुदसिया, भुलनी, कुल्सुम, बादशाह बेगम, नसीरूद्दीन हैदर आदि पात्रों के जीवन में घटने वाली विभिन्न घटनाओं के माध्यम से पाठकों को संवेदना के चरम बिन्दु तक पहुँचाया है।

कुदसिया बेगम उर्फ बिस्मिल्ला बानू एक सामान्य कश्मीरी लड़की किन्तु एक बेहद खूबसूरत तवायफ है। उसकी सुन्दरता व गुणों पर रीझ कर नसीरूद्दीन उससे विवाह कर लेता है। वह बादशाह में आत्मविश्वास जगाती है। अपनी सूझबूझ का परिचय देती है परन्तु राजमहल के षड़यन्त्रों से अनजान रहती है। वह बादशाह के बच्चे की माँ बनने वाली है। परन्तु इसी बीच षड़यन्त्र करके उसे बादशाह की नजरों में चरित्रहीन साबित कर दिया जाता है। परन्तु अपनी सच्चरित्रता को साबित करने के लिये वह जहर खाकर आत्महत्या कर लेती है। उसके ये शब्द "मैं तुम्हारी थी, तुम्हारी रही और तुम्हारी ही होकर जा रही हूँ मरते वक्त खुदा की गवाही में मैं तुम्हें यकीन दिलाती हूँ कि मेरे हमल में मेरे साथ एक और नन्हीं सी जान भी दुनिया देखे बिना ही दुनिया से जा रही है, तुम्हारी ही औलाद है। मैं बड़ी साध से तुम्हारे बच्चे की माँ बन रही थी। तुमने मेरा ख्वाब चूर – चूर कर दिया, तुमने अपना मुकद्दर मिटा डाला।"[1] पाठक की संवेदना को जाग्रत करने के लिये महत्त्वपूर्ण है। उसकी मृत्यु के पश्चात बावला सा हुआ नसीरूद्दीन "बचाओ कोई बचाओ! बचाओ ! " चिल्लाता हुआ कमरे से भागा, महलों से भागा, बेतहाशा सड़क पर भागता ही चला गया। सिपाही, आसाबरदार, नौकर चाकर उसके पीछे दौड़ने लगे। राह चलती रियाया ये अनहोनी

---

[1] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 202

देखकर सनाका खा गई। नसीरूद्दीन शाहे अवध मामूली इंसान की तरह नन्हें मासूम बच्चे की तरह फूट – फूट कर धूल में मचल मचल कर रो रहा था। उसका अन्तिम सहारा टूट गया था।"[1] का यह दृश्य उसे पाठकों की संवेदना का अधिकारी बनाता है।

कुदसिया बेगम के बाद संवेदना प्राप्त करने की पूर्ण अधिकारी गज्जू बसोर की तेरह बर्षीया बालिका भुलनी है। जो अपने ऊपर स्मिथ द्वार किये गये बलात्कार के फलस्वरूप अपने प्राणों का बलिदान देकर अपने पापों का प्रायश्चित्त करती है। ब्रम्हचारी द्वारा नईम से विवाह का प्रस्ताव रखने पर वह कहती है– "जमराज से मोर बियाहु होइ चुका महराज! जियै के बदे अपन धरम न छाँड़ब।"[2] नईम से वह जीवित ही गंगा में प्रवाहित करने के लिए प्रार्थना करती हुई कहती है– "बड़ा पुन्न होई तुमका। पापी परान कसस निकसैं। मँहिका गंगा किनारे ले चलो। मोर रकत गंगा जी मा बही, मोर जलम – जलम के पाप धुलिहैं, तुम्हैं जलम – जलम का पुन्न मिली" xxxxx भुलनी आँख बन्द किये पूर्ण समर्पण के भाव में तन्मय शान्त पड़ी थी। नईम के हाथों में फूल सी उठी और नईम की गोद में मानों गंगा की गोद में चली गई।"[3]

नसीरूद्दीन हैदर को मारने के लिये महल में अनेक षड़यन्त्र चलते रहते हैं। कुदसिया बेगम की मृत्यु के बाद उसे किसी पर विश्वास नहीं रह जाता। सिर्फ एक विश्वासपात्र धनिया है जो बादशाह के पास आ जा सकती है। धनिया दो लाख रूपया और रेजीडेण्टी की सरपरस्ती के लिये बादशाह को मारने के षड़यन्त्र में शामिल होकर

---

[1] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 203
[2] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 105
[3] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 105

उसे दवा के बहाने जहर पिला देती है– "हारी हुई आवाज में नसीरूद्दीन बोला "पहले एक घूँट पानी पिलाओ। और फिर लाओ .... मुझे लेकर दुनिया का यह अरमान भी अधूरा क्यों रह जाये।"

रात के साढ़े बारह बजे शाही कमरे से एक मर्मान्तक चीख सुनाई दी। घोषणा हुई कि दिल की कमजोरी से धड़कन रूक गई शाहे अवध मर गया।"[1]

इसके बाद बादशाह बेगम का अन्तिम समय भी उन्हें पाठकों की संवेदना प्रदान करता है। मृत नसीरूद्दीन हैदर के पास पहुँच कर "धीरे से कफन हटाया, अपने मरे हुए सौतेले बेटे का मुँह देखती रही।"[2] उसे देखकर उनके मन में अपने जीवन में घटित होने वाली विविध घटनाओं के दृश्य साकार हो उठे – "नसीरूद्दीन मर गया था। बादशाह बेगम, अब उसकी लाड़ लड़ाने वाली माता अब अपनी अहन्ता को लेकर रूक न सकीं, बहुत रोकते हुये उनकी आँखों से आँसू बह चले। नसीरूद्दीन हैदर के चेहरे ने विमाता के आँसुओं की ठंडक पायी बादशाह बेगम ने लाश का मुँह धीरे – 2 फिर चादर से ढ़क दिया।"[3]

"अब बादशाह बेगम की बारी थी। वह शान्त भाव से अपना अन्त देखने के लिये प्रस्तुत थीं।"[4]

---

[1] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 267
[2] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 271
[3] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 271
[4] शतरंज के मोहरे – अमृत लाल नागर – पृ. 272

इस प्रकार 'शतरंज के मोहरे' उपन्यास में नागर जी ने इन पात्रों के माध्यम से संवेदना को चरम बिन्दु तक पहुँचाया है।

'सुहाग के नूपुर' उपन्यास में नागर जी ने माधवी व कन्नगी दोनों के ही जीवन में घटने वाली विविध करूण परिस्थितियों का चित्रण करके पाठकों की संवेदना प्रदान की है। नागर जी ने 'सुहाग के नूपुर' उपन्यास में नारी संवेदना के महत्वपूर्ण पक्षों को चित्रित किया है। वह कन्नगी हो चाहे माधवी उसका भिन्न –2 तरीकों से शोषण करने वाला पुरूष ही है। पुरूष प्रधान समाज में पुरूष ने उसको भिन्न –2 रूपों में छला है। इसी कटु सत्य को नागर जी ने अपने उपन्यास का आधार प्रदान किया है। कोवलन का विवाह तो कन्नगी के साथ होता हैं। परन्तु वह पूर्णरूपेण कन्नगी का कभी नहीं हो पाता वह माधवी के प्रेमाकर्षण में बँधा हुआ कन्नगी को अनेकानेक कष्ट देता है। माधवी के प्रेम में पागल कोवलन की वजह से कन्नगी को घर तक छोड़कर धर्मशाला में शरण लेनी पड़ती है। उसे अनेकों मानसिक कष्ट झेलने पड़ते हैं। कुलवधू के 'सुहाग के नूपुर' और नगर वधू के नृत्य घूँघरूओं का संघर्ष ही उपन्यास की मूल संवेदना है। माधवी के उकसाने पर कोवलन कन्नगी से नूपुर लेने के लिये जाता है– "उतार यह नूपुर"[1] परन्तु कन्नगी उन नूपुरों के देने से इन्कार करती हुई कहती है– "सौभाग्य मेरे पूज्य श्वसुर ने प्रदान किया था। आपकी जीवन सहचरी बनने का अधिकार मुझे उन्होंने दिया था।"[2] कोवलन वापस लौट जाता है। 'सुहाग के नूपुर' न पाकर मदान्ध हुई माधवी एक दिन कोवलन को भी घर से निकाल देती है। "कोवलन

[1] सुहाग के नूपुर – अमृत लाल नागर – पृ. 121
[2] सुहाग के नूपुर – अमृत लाल नागर – पृ. 121

जड़ हो चुका था। शव की भाँति अपने ही घर के अन्तःपुर के बाहर पड़ा रहा। हँफनी तीव्र गति से चल रही थी। दुर्बल हृदय की धड़कनें ज्वार के समुद्र की तरह उठ रहीं थीं। लगता था कि उसके प्राण खिंच रहे हैं, प्यास जोर से लग रही है........... किन्तु कौन देगा पानी ! कोवलन! तेरी यह दशा होनी थी।"[1] माधवी से आहत हुआ कोवलन पुनः कन्नगी के पास लौट जाता है। इधर अहंकारी माधवी को राजपुरूष विश्वासघात देकर पुनः वेश्या बना देता है– "राजपुरूष का स्वर फिर सुनाई दिया– "कोटपाल! आज से नगर की कोई वेश्या दान, धर्म और वाणिज्य की आड़ लेकर सतियों को त्रस्त न कर सकेगी और यदि कभी ऐसा हुआ तो मैं नगर की सर्वश्रेष्ठ वेश्या इस माधवी को भरे चौराहे पर श्वपच चाण्डालों के मनोरंजनार्थ नचाऊँगा।"[2]

जिन नूपुरों को माधवी के द्वारा मँगानें पर न देकर अनेकों कष्ट सहन करती है। उन्हीं नूपुरों को कन्नगी कोवलन को व्यापार करने के लिये देने को सहर्ष तैयार हो जाती है– कन्नगी मुस्कराई। किंचित लजाकर कहा– "अप्पा मेरे पैरों से लक्ष्मी को बाँध गयें हैं। इन नूपुरों को बेचिए, नया जीवन आरम्भ करने के लिये इनसे पर्याप्त धन मिल सकेगा।"[3] अन्त मैं माधवी पागल होकर बौद्ध धर्म में शरण लेती हैं और नारी के प्रति उचित न्याय की माँग करती हुई कहती है– "पुरूष जाति के स्वार्थ और दम्भ भरी मूर्खता से ही सारे पापों का उदय होता है। उसके स्वार्थ के कारण ही उसका अर्धांग नारी जाति पीड़ित है। एकांगी दृष्टिकोण से सोचने के कारण ही पुरूष न तो स्त्री को

---

[1] सुहाग के नूपुर – अमृत लाल नागर – पृ. 124
[2] सुहाग के नूपुर – अमृत लाल नागर – पृ. 139
[3] सुहाग के नूपुर – अमृत लाल नागर – पृ. 131

सती बनाकर ही सुखी कर सका और न वेश्या बनाकर ही। इसी कारण वह स्वयं भी झकोले खाता है और खाता रहेगा। नारी के रूप में न्याय रो रहा है महाकवि!"[1]

ये बिन्दु इस उपन्यास में संवेदना के चरम–बिन्दु हैं। इन्हें पढ़कर पाठक के हृदय में इन पात्रों के प्रति सहानुभूति जाग्रत होती है। इसमें नारी जीवन की सम्पूर्ण करूणा दृष्टिगोचर होती है।

'मानस का हंस' उपन्यास में तुलसीदास के जीवन में विविध घटनाक्रम घटित होते हैं। जिससे उन्हें पाठक की गहन संवेदना प्राप्त होती है। तुलसीदास के जन्म लेते ही पिता द्वारा यह जान लेने पर कि इसका जन्म अभुक्त मूल नक्षत्र में हुआ है– "महतारी बाप के लिए तो काल बनि कै आवा है काल।"[2] वे मुनिया दासी को तुलसीदास को घर से बाहर कहीं भी ले जाने के लिये कहते हैं– "जौन उचित समझ वही कर। हम तुझे चाँदी के पाँच सिक्के देंगें। अपनी सास को दे देना । जा उसकी महतारी की मिट्टी उठने से पहले ही इस अभागे को दूर ले जा, जिससे उसकी पाप छाया किसी को न छू पावे।"[3] इसके बाद तुलसीदास को अपनी बूढ़ी भिखारिन अम्मा के साथ भीख माँगते हुये जीवन यापन करना पड़ता है–"चार – पाँच वर्ष का नन्हा सा बालक कंधे पर झोली लटकाये आँधी पानी में बढ़ा चला जा रहा है। x x x x x सहसा देर से कड़कड़ा रही बिजली बच्चे से दो तीन कदम दूर एक पेड़ पर गिरी। बच्चा भय

---

[1] सुहाग के नूपुर – अमृत लाल नागर -- पृ. 146
[2] मानस का हंस – अमृत लाल नागर – पृ. 31
[3] मानस का हंस – अमृत लाल नागर -- पृ. 32

के मारे दौड़ने लगता है। चार पाँच कदम के बाद ही फिसल के गिर पड़ता है। झोली का अन्न बिखर जाता है।"[1]

पार्वती अम्मा की दुःखद मृत्यु से तुलसीदास एक बार फिर बेसहारा हो जाते हैं–"अपनी पालनहारी को ठिकाने लगाकर अपनी कुटी में आकर अकेला बैठ जाता है।' "अब हमारा क्या होगा बजरंग स्वामी? राम जी के दरबार में हमारी गोहार लगा दो। हे राम जी! अम्मा बिना हम क्या करें? बच्चा फूट–फूट कर रोने लगता है।"[2] गाँव वालों के द्वारा सताये जाने पर वह सूकर खेत हनुमान के मन्दिर पर जाकर बन्दरों को दिये जाने वाला चना गुड़ खाकर अपना जीवन यापन करने लगते हैं। नरहरिदास से सम्पर्क के बाद काशी में विद्या अध्ययन करते हैं। सुखमय वैवाहिक जीवन यापन करते हुये एक दिन पत्नी के व्यंग्य वाणों से आहत होकर तुलसीदास अन्तर्द्वन्द्व व मानसिक पीड़ा से गुजरते हुये घर छोड़ने का संकल्प कर लेते हैं–"राम कृपा भव निसा सिरानी, जागे पुनि न डसैहों। दबे पाँव उठे बच्चे के पास जाकर एक बार उसे देखा, पत्नी को अपना ओढ़ा हुआ दुशाला उड़ाया। चोर की तरह चुपके से द्वार खोला फिर उसे धीरे से खींचकर बन्द किया। और अब एक मुक्त संसार तुलसी के सामने था।"[3]

तुलसीदास का मृत्यु शैया पर लेटी रत्नावली के समीप पहुँचना– "बाबा ने मैया का हाथ अपने हाथ से उठाकर और प्रेम से दबाकर धीरे से कहा– "बोलो, बोलो, सीताराम।" सी.......ता.........रा........।" एक हिचकी आई मैया की ऑखे खुली की खुली

[1] मानस का हंस – अमृत लाल नागर – पृ. 41
[2] मानस का हंस – अमृत लाल नागर – पृ. 48
[3] मानस का हंस – अमृत लाल नागर – पृ. 248

रह गईं और काया निष्चेष्ट हो गई।"[1] ये अनेक ऐसे प्रसंग हैं जो इस उपन्यास में संवेदना के चरम बिंदु हैं।

'नाच्यौ बहुत गोपाल' में नागर जी ने एक ब्राहम्ण लड़की निर्गुण बाला का मेहतरानी निर्गुणिया बनाने वाले बेहद संवेदनशील बिन्दुओं की अपने उपन्यास में स्थान दिया है। एक अच्छे संस्कारों वाली लड़की के साथ उसके बूढ़े रखैल पिता की मालकिन का बेटा भगवान के मन्दिर में बलात्कार करता है। –"अम्मा उस दिन तड़के ही खड़गबहादुर को लेकर फिटन पर अपने खेत देखने चली गई। मैं पूजा कर रही थी बबुआ सरकार सब मौका महल देखकर ही आये। ठाकुर जी की सेवा करते समय, ठाकुर जी की गवाही में मेरी सारी अनबूझी पहेलियाँ सुलझ गईं।"[2]

उसके बाद बूढ़े मसुरियदीन से ब्याही गई निर्गुणिया कामाग्नि में अंधी होकर मेहतर मोहना के साथ भाग जाती है। और अपने को कैसे मेहतरानी बनाया इस कटु अनुभव को बताते हुए उसका मन भर जाता है।– "माई ने रात में हम दोनों की बातें सुन ली थीं और सबेंरे उसका ही उन्होंने जो मुझे दण्ड दिया था वह मेरी तब तक की जिन्दगी की सबसे बड़ी सजा थी। तब तक कहावत में सुना ही था कि "मार –2 के भंगी बनाया जाता है मैं सचमुच ही मार –2 के भंगिन बना दी गई।"[3]

---

[1] मानस का हंस – अमृत लाल नागर – पृ. 11
[2] मानस का हंस – अमृत लाल नागर – पृ. 51
[3] नाच्यौ बहुत गोपाल – अमृत लाल नागर – पृ. 92

"माई ने कैसे मेहतरानी बनाया .... उस दिन सबेरे उठी वह हरामजादी।.........
फिर झाड़ू पंजे की ओर इशारा करके मुझसे कहा , इसे कगा, टोकरे में डाल! मेरा सिर
चकरा गया।. .... अब भी चकरा रहा है साला।"[1]

मोहना के मारे जाने के बाद अपने जीवन में परिस्थितियों से संघर्ष करती हुयी,
अपने बच्चों को उच्च प्रतिष्ठित पद दिलाकर लेखक अंशुधर शर्मा को अपने जीवन की
सम्पूर्ण कटुता बताकर स्लीपिंग पिल्स खाकर आत्महत्या कर लेती है। "दूसरे दिन सबेरे
दस बजे के लगभग मुझे फोन से सूचना मिली कि श्रीमती निर्गुणियाँ रात में किसी
समय गत हो गईं। सुनकर धक् से रह गया, दौड़ा हुआ उनके घर गया।"

"कल आपसे अपने इस जनम का हिसाब चुका कर घर आई तो सोचा कि अब
सोने की टिकियों का हिसाब भी चुका लूँ आप इस जीवन में चलते चलाते खूब मिले!
जै राम जी की।"[2]

इस प्रकार और भी अनेक ऐसे स्थल हैं जिनमें नागर जी ने अपने पात्र के प्रति
संवेदना को चरम बिन्दु तक पहुँचाया है।

'अग्निगर्भा' उपन्यास के माध्यम से नागर जी ने आज के समाज की ज्वलन्त
समस्या दहेज समस्या को नारी उत्पीड़न का कारण मानते हुये दहेज पीड़ित व समाज
पीड़ित स्त्री का गहन संवेदना के साथ चित्रण किया है।

---

[1] नाच्यौ बहुत गोपाल – अमृत लाल नागर – पृ. 97
[2] नाच्यौ बहुत गोपाल – अमृत लाल नागर – पृ. 345

आज के अर्थ प्रधान युग में रिश्तों, भावनाओं का कोई स्थान नहीं है। रिश्तों की पवित्रता का भी नहीं। आज रिश्तों का आधार धन है। धन के अभाव में बने हुए रिश्ते भी बिगड़ जाते हैं। एक बेहद मेधावी छात्रा सीता को एक ऐसा धनलोलुप परिवार मिल जाता है जो उसे धन कमाने वाली मशीन समझता है तथा इसी स्वार्थ की वजह से उससे शादी करता है। उसका पति रामेश्वर उससे शादी करता है। उसका पति रामेश्वर उसकी सम्पूर्ण कमाई का मालिक है। अपनी इच्छा से वह एक भी पैसा खर्च नहीं कर सकती। अपनी माँ को दो सौ रूपयों की सहायता करने पर रामेश्वर नाराज हो जाता है । यहाँ तक कि उसे अपने बेटे से अलग कर के अपनी माँ बहन के पास छोड़ आता है। जो उस पर तरह–तरह के अत्याचार करती हैं। "सर्वेश्वरी के रसोईघर से लौटते समय उसके हाथ की गगरी जाने किस तरकीब से दीवाल से टकराई और पूरी की पूरी सीता की कमर पर उलट गई। रात का समय एक तो पानी दूसरे पीतल की करारी चोट । सीता के मुख से चीख निकल गई।"[1] जरा सा प्रतिरोध करने पर "सास और ननद दोनों ही उस पर टूट पड़ी। गीली साड़ी, गीली जमीन दोनों उसे खींचते हुये सूखे में लायी ताकि खुद न फिसल पड़ें और घूँसे लातों से पिटाई करने लगी।"[2]

बार–बार अपमानित होती सीता अन्त में अपना घर छोड़ देती है तथा दहेज लोभियों व स्त्री पर अत्याचार करने वालों के विरूद्ध उठ खड़ी होती है। एक स्त्री को जलाने पर वह पुलिस को खबर कर देती है। इससे क्रोधित हुआ उसका पति सीता

---

[1] अग्निगर्भा – अमृत लाल नागर – पृ. 119
[2] अग्निगर्भा – अमृत लाल नागर – पृ. 119

को मारने का मौका तलाशने लगता है। प्राचार्या पद लेने की विनय करता हुआ रामेश्वर तथा उस पद को ठुकराने वाली सीता को मनाता हुआ रामेश्वर उससे घर वापस चलने की जिद् करता है परन्तु सीता इन्कार कर देती है। रामेश्वर उसे घर तक छोड़ने के लिये आता है परन्तु पहले से ही घात लगाये बैठा– "तेजी से उसका दाहिना हाथ ऊपर उठा और झटके से पिस्तौल सीता की छाती पर। रामेश्वर जब तक बाहर निकले तब तक –"धाँय–धाँय।"

"दो गोलियाँ एक चीख। सीता लुढ़क गई रामेश्वर जब तक सीता के पास पहुँचें तब तक उसके प्राण पखेरू उड़ चुके थे।"[1] वह व्यक्ति सीता की हत्या कर देता है। यह उपन्यास में संवेदना के चरम बिन्दु हैं जो पाठकों के अन्तर्मन को झकझोर देते हैं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागर जी ने संवेदना के एक–2 पहलू पर लेखनी चलाकर अपने उपन्यासों में संवेदना को चरम बिन्दु तक पहुँचाया है। एक–2 पात्र के जीवन में घटित होने वाली घटना का ऐसा यथार्थ वर्णन किया गया है कि पाठक अपने आप को उससे जुड़ा हुआ महसूस करता है।

---

[1] अग्निगर्भा – अमृत लाल नागर – पृ. 145

छठा अध्याय

घटना-चक्र का क्षैतिज प्रवाह

क्षैतिज प्रवाह की विभिन्न धाराओं का परस्पर समीकरण

अमृत लाल नागर के उपन्यासों में धारात्मक समीकरण

घटना - चक्र का क्षैतिज प्रवाह

1. क्षैतिज प्रवाह की विभिन्न धाराओं का परस्पर समीकरण

एक साहित्कार या उपन्यासकार का मन बेहद संवेदनशील होता है। उसे अपने आस--पास के वातावरण में घटित घटनाओं से प्रेरणा मिलती है और उन घटनाओं में वर्णन करने की संभावना की तलाश उसकी विशिष्ट प्रतिभा करती है बहिर्जीवन में घटित घटना अंजाने में लेखक के अन्तर्मन पर प्रभाव डालती है और वह समाज में बहने वाली विभिन्न धाराओं का आपस में इस प्रकार समीकरण बनाता है कि अलग – अलग होती हुई भी विभिन्न धाराएँ क्षितिज पर मिलती हुई सी प्रतीत होतीं है। हमारे समाज में उच्च व निम्न वर्ग, उच्च व मध्यम वर्ग, कुलीन व अकुलीन, पढ़े लिखे व अनपढ़, चारित्रिक दृढ़ता--चरित्रहीनता, कुटिलता व सज्जनता की विभिन्न धाराएँ बहतीं हैं जो निश्चित ही एक दूसरे से बिल्कुल अलग हैं। परन्तु अलग होते हुए भी इन विभिन्न धाराओं को एक सूत्र में पिरोकर विभिन्न घटनाओं के माध्यम से एक ऐसी रचना साहित्यकार प्रस्तुत कर देता है जिनमें दो अलग – अलग धाराएँ मिलकर एक होने का प्रयास तो करतीं हैं परन्तु सदैव अलग--अलग ही बनीं रहतीं हैं। क्षैतिज प्रवाह में बहती हुई विभिन्न धाराओं का परस्पर समीकरण वास्तव में एक कुशल शिल्पी ही कर सकता है जिसमें कि नागर जी का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

जहाँ तक नागर जी का सवाल है। नागर जी तो इस निकष पर पूरी तौर पर खरे उतरे है। नागर जी ने अपने उपन्यासों में विभिन्न घटनाओं के माध्यम से विभिन्न चरित्रों के द्वारा अनेक धाराओं का परस्पर समीकरण प्रस्तुत किया है। विभिन्न धाराएँ अलग–अलग प्रयोजन व निष्कर्ष रखते हुए भी एक दूसरे से पूरी तरह संबद्ध हैं।

'बूँद और समुद्र' उपन्यास की कथा का मुख्य संबंध 'यों तो लखनऊ के चौक मुहल्ले से ही हे।'[1] परन्तु इस मुहल्ले के अपने चित्रण के माध्यम से लेखक ने लखनऊ नगर के अलावा सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को प्रत्यक्ष करने का प्रयास किया है। इसके लिए नागर जी ने इस उपन्यास में विभिन्न धाराओं को बहाया है परन्तु अन्त में वे प्रवाह में बहतीं हुई परस्पर इस प्रकार समीकरण बनाती है कि सभी एक दूसरे की पूरक सी प्रतीत होतीं हैं।

'मानस का हंस', 'खंजन – नयन' में भी नागर जी ने महाकवियों का काम व आत्म संघर्ष तथा तत्कालीन समाज की परिस्थितियों का चित्रण करते हुए जिस तरह से विभिन्न धाराओं को आपस में मिलाकर एक समीकरण तैयार किया है वह वास्तव में नागर जी जैसे महान उपन्यासकार के लिए ही संभव था। नागर जी ने सांसारिक जीवन व वातावरण में पिसते हुए उच्च मध्य व निम्न वर्ग के जनजीवन के विविध तथ्यों या साक्ष्यों को जुटाकर जिस प्रकार अलग – अलग बहने वाली विभिन्न धाराओं का समीकरण बनाकर अपनी एक से एक श्रेष्ठ कृतियों से हिन्दी साहित्य के भंड़ार में अभिवृद्धि की है वह अतुलनीय ही नहीं अनुपमेय भी है क्योंकि नागर जी ने अपने

---

[1] बूँद और समुद्र अमृत लाल नागर – भूमिका से

अनुभवों से जो विभिन्न घटनाएँ धारा रूप में बहाई है वह नागर जी जैसे श्रेष्ठ व कुशल साहित्यकार के लिए संभव थी। नागर जी ने जिस कौशल के माध्यम से विभिन्न कथा धाराओं को मिलाकर अपने उपन्यासों को पूर्णत्व प्रदान किया है वह निश्चय ही श्लाघनीय है।

2. अमृत लाल नागर के उपन्यासों में धारात्मक समीकरण

अमृत लाल नागर जी निःसन्देह उन महान् कलाकारों में से एक हैं जिन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से हिन्दी साहित्य भंड़ार में अपूर्व वृद्धि की है। उन्होंने अपने आस–पास के जीवन व ऐतिहासिक तथ्यों से विविध साक्ष्य जुटाकर विभिन्न धाराओं को आपस में गूँथ कर एक सुन्दर रचना का आधार प्रदान किया है। विभिन्न धाराएँ एक दूसरे से पृथक अस्तित्व रखते हुए आपस में एक धारात्मक समीकरण बनातीं हैं। लेखक बाहरी विभिन्न घटनाओं से प्रभावित होता है, उससे उसके दिमाग में कुछ चित्र उभरते है और उन चित्रों में अपने उपन्यासों के लिए सामग्री देखता है और वर्णन की कुशलता के द्वारा वह इन धाराओं का एक समीकरण प्रस्तुत कर देता है जो कि एक श्रेष्ठ उपन्यासकार के लिए ही संभव है।

अमृतलाल नागर जी ने अपने उपन्यासों 'महाकाल', 'अमृत और विष', 'खंजन–नयन', 'मानस का हंस', 'बूँद और समुद्र' में परस्पर विरोधी धाराओं में परस्पर इस प्रकार समीकरण स्थापित किया है कि अलग–अलग होती हुई भी विभिन्न कथा धाराएँ आपस में घुल–मिल गईं हैं।

नागर जी ने 'महाकाल' के माध्यम से व्यक्ति के अपने स्वार्थ, गरीबी, भूख पर कठोर प्रहार किया है। 'महाकाल' में कथावस्तु का संबंध यद्यपि बंगाल के एक छोटे से गाँव मोहनपुर से है परन्तु गहराई से देखने पर उसकी व्याप्ति दूर–दूर तक प्रतीत होती हैं। वह पाँचू गोपाल के अपने जीवन उसके परिवार, समूचे गाँव और गाँव के शोषक वर्गों के साथ सम्पूर्ण शोषक समुदाय की कथा है। अन्ततः वह उस साम्राज्यवादी, सामंतवादी, पूँजीवादी षड़यन्त्र की कथा है जो न केवल बंगाल को ही अपने चंगुल में बाँधे था वरन् जिसके क्रूर पंजों में तत्कालीन पूरा समाज, पूरा देश सिमटा हुआ था। एक छोटी सी कहानी के माध्यम से नागर जी ने जहाँ एक ओर मृत्यु की भयावहता से आँखे ओझल नहीं की हैं वहीं दूसरी ओर उसका अत्यन्त व्यापक और लोमहर्षक चित्र खींचा है, परन्तु मृत्यु में भी उनकी जीवन संबंधी आस्था को बल मिला है।

एक ओर नागर जी ने भूख से मरते हुए जनसामान्य के दुःख दैन्य को उभारा है तो दूसरी ओर जमींदार और महाजनों के एशो आराम और विलास के चित्र भी खींचे हैं। " बड़े हॉल में घुसते ही दाहिनी तरफ एक बनावटी झरना और उसके साथ ही लगा हुआ फव्वारा था। झरने से लगी हुई दीवार पर शीशे में जंगल और झरने का दृश्य अंकित किया गया था। बनावटी झरने में जगह–जगह रंगीन बल्ब फिट किये गए थे। दीवारें शीशों पर बनी हुई रंगीन तस्वीरों से मढ़ी हुई थीं। बीच–बीच में कद्दे – आदम आईने लगे हुए थे। पेण्ट की हुई छत थी जिसमें बिजली के झाड़–फानूस लटके हुए थे। कीमती फारसी कालीनों से हॉल का संगमर्मरी फर्श सजाया था। आधे

हॉल को घेरे हुए दो फुट ऊँचा गद्दा पड़ा था, जिस पर रेशम की चाँदनी बिछी हुई थी।''[1]

नागर जी ने भूख से मरते हुए लोगों को अपनी संवेदना प्रदान की है इसका सजीव चित्र प्रस्तुत है – आँखों के सामने थोड़ी ही दूर पर मोनाई की दुकान थी। माँस की पतली–पतली झिल्लियों में चमकती हुई खुदा की खुदाई डगमगाते हुए कदमों से इधर–उधर डोल रही थी। गड्ढ़ों में धँसी हुई डगर–डगर आँखें घूर–घूर कर अन्न के एक दाने की तलाश में मोनाई की दुकान के आस–पास मँड़रा रही थीं। कितने ही नर–कंकाल झुके हुए, जमीन में चावल की सिर्फ एक कनी खोज रहे थे। बेतरतीबी के साथ उनकी दाढ़ियाँ बढ़ी हुई थीं। बच्चे इंसान के बच्चे नहीं मालूम पड़ते थे समूची बस्ती ही इन्सान की बस्ती नहीं मालूम पड़ती।''[2]

''दयाल जमींदार को शराब की एक बूँद तड़पा रही थी और दयाल की प्रजा को चावल की एक कनी। कैसा विचित्र साम्य था? उसके कुछ दिनों बाद जब कंट्रोल से तीस रुपये पर स्कॉच मिलने की खबर दयाल बाबू को मिली थी, तब वे कितने उत्साह में आए थे। आज चावल पर कंट्रोल हुआ है। प्रजा का उत्साह देखो। मोनाई का उत्साह देखो।''[3]

'अमृत और विष' नामक उपन्यास में जहाँ एक ओर नागर जी ने अरविन्द शंकर के जीवन –संघर्षों का चित्रण किया है तो दूसरी ओर अरविन्द शंकर से भी उसके

---

[1] महाकाल – अमृत लाल नागर पृ. 91
[2] महाकाल – अमृत लाल नागर पृ. 45
[3] महाकाल – अमृत लाल नागर पृ. 59

भीतर एक उपन्यास लिखवाकर दो अलग–अलग धाराओं को विभिन्न घटनाओं के माध्यम से एक सूत्र में पिरोते हुए आगे बढ़ाया है। "नागर जी की यह टेक्नीक हिन्दी उपन्यास में सर्वथा भिन्न और नई है।"[1]

"विविध अनुभवों भरे सारे जीवन ने एकाएक धावा बोलकर मेरे ध्यान का साम्राज्य जीत लिया। मन भर उठा आदमी जनम से लेकर मरन के दिन तक इतना सारा दुःख भोगता है, हजारों चेहरे, रूप रंग, वातावरण देखता है, सुनता है, सहता है– आखिर किसलिए? व्यक्ति के जीवन की ढेर सारी उपलब्धियाँ जिन्हें प्राप्त करने के लिए वह जान लड़ाता है, अन्त में निकम्मी होकर नष्ट हो जातीं हैं उसमें कितनी ही उपयोगी होतीं हैं – सोचता हूँ कि अपनी जीवन कहानी लिख ड़ालूँ। जनम भर उपन्यास और कहानियों में दूसरे के देखे –सुने और अपने गढ़े हुए किस्से लिखे, एक अपना भी लिखकर रख जाऊँ।"[2]

अमृत और विष की कथावस्तु इन दो भिन्न धाराओं को लेकर चली है। नागर जी ने दोनों धाराओं में उद्‌घाटित घटनाओं का तालमेल आपस में समीकरण बनाते हुए इस प्रकार बिठाया है कि दोनों ही कथानक एक दूसरे से अलग नहीं होने पाये हैं।

पहली धारा का संबंध उपन्यास के केन्द्रीय पात्र लेखक अरविन्द शंकर से है जिसमें उनके पूर्वजों के इतिहास, उनके परिवार, जीवन तथा उनके मानसिक उद्वेलन की कथा है–

---

[1] नागर उपन्यास कला – प्रकाश चन्द्र मिश्र पृ. 119
[2] अमृत और विष – अमृत लाल नागर – पृ. 6

"हॉल खचाखच भरा था। द्वार से लेकर मंच तक साठ नर--नारी, बच्चे, बूढ़े, जवान हर पेशे के प्रतिनिधि, जाने वाले मार्ग में दर्शकों की कुर्सियों के किनारे – किनारे फूल मालाएँ लिए खड़े थे। शहनाई पर बधावा बज रहा था।"[1]

"मुझे लग रहा था, जैसे सुखद सपना देख तो रहा हूँ लेकिन उस सपने में भी मेरे जीवन का कटु यथार्थ अपनी प्रखर चेतना के साथ विद्यमान है।"[2]

दूसरी धारा में उपन्यास के भीतर ही लेखक अरविन्द शंकर द्वारा रचे गये उपन्यास का विवरण है जिसमें उन्होंने बहुरंगी पात्र सृष्टि के माध्यम से वर्तमान सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों के मध्य डूबते उतराते समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। पहली धारा में अरविन्द शंकर स्वयं परिस्थितियों के भोक्ता हैं और दूसरे में अपने समय में सामाजिक जीवन के दर्शक और चितेरे। उपन्यास में आदि से अंत तक ये दोनों धारायें परस्पर एक दूसरे से गुंथी हुई अत्यन्त व्यवस्थित रूप से गतिशील हुई हैं।

नागर जी 'अमृत और विष' में इन दो धाराओं के अतिरिक्त लच्छू और रमेश की कथा, रमेश की बहन की शादी में रमेश का रानीबाला के प्रति प्रेम, नगर में महाबाढ़ का प्रकोप जिसमें सैकड़ो गाँव तो जल मग्न होते ही हैं नगर भी भयंकर तीव्र लहरों की चपेट से बच नहीं पाता। बाढ़ पीड़ितों की सहायता रमेश तथा उसका मित्र वर्ग भी

---

1 अमृत और विष – अमृत लाल नागर – पृ. 14
2 अमृत और विष – अमृत लाल नागर – पृ. 14

करता है। लच्छू की कथा, लाल साहब और वहीदन की कथा, नबाब अनवर मिर्जा और गैहाबानूँ की कथा तथा चोइथराम सिंधी की कथा उल्लेखनीय है।

इन कथा धाराओं के अतिरिक्त नागर जी ने सहदेई की लघु कथा धारा को भी प्रवाहित किया हैं। हाजीनबी बख्श, चौधरी वंश, खोखा मियाँ, रेवती रमन की छोटी मोटी धाराएँ भी उपन्यास की मुख्य धारा में मिल कर धारात्मक समीकरण बनातीं हैं।

'मानस का हंस' में नागर जी ने राम और काम के मध्य संघर्ष करते हुए तुलसीदास के जीवन में बहने वाली इन दो विपरीत धाराओं का परस्पर इस प्रकार समीकरण तैयार किया है कि तुलसीदास जी को महाकवि होते हुए भी एक सामान्य मानव के रूप में चित्रित किया है। काम ने सदैव ही तुलसी के जीवन में समय – समय पर उनकी परीक्षा ली है। वर्तमान और अतीत जीवन की दो समानान्तर चलने वाली धाराओं में से अतीत में विभिन्न घटनाएँ हैं तो वर्तमान में उनसे संबंधित जिज्ञासा या प्रश्न हैं।

"प्रस्तुत उपन्यास तुलसी के जीवन की बाह्य घटनाओं का अलबम होते हुए भी आन्तरिक प्रभावों वाला अन्तःसंघर्षपूर्ण अधिक हो गया है। मुख्य संघर्ष काम और राम का है जो उपन्यास की केन्द्रीय वस्तु है।"[1]

इस उपन्यास में तुलसीदास के विद्यार्थी जीवन में काशी की प्रसिद्ध वेश्या मोहिनी पर अनुरक्त होने की कथा को नागर जी ने जिस स्वाभाविक ढंग से कल्पित व चित्रित किया है वह निःसंदेह एक प्रशंसनीय कार्य है। प्रथम नारी आकर्षण की यह

---

[1] समकालीन हिन्दी उपन्यास – काम और राम की महान् संघर्ष गाथा– डा. विवेकी राय – पृ. 126

दास्तान तुलसीदास बेनीमाधव दास को सुनाते हैं। तेईस – चौबीस वर्षीय तुलसी मेघा भगत के यहाँ न्यौते पर मोहिनीबाई का गायन सुनकर एकदम मन्त्र मुग्ध हो जाते हैं इसके बाद राम और काम में अद्‌भुद द्वन्द्व चलता है – " पहली बार तुलसी और मोहिनी की आँखें मिलीं। चारों आँखें एक दूसरे की प्रशंसा में निछावर हुई जातीं थी। मोहिनीबाई ने हँसकर कहा – आपक स्वर तो अगम सरोवर का कमल है, पंडित जी, कल से मेरे कानों में भी अब तक गूँज रहा है।"[1] मेघा भगत के यहाँ से अपनी कुटी में आकर यद्यपि तुलसीदास अपने मन को बार–बार समझाना चाहते हैं परन्तु मोहिनी के प्रति अपने आकर्षण को कम नहीं कर पाते। मोहिनी के आग्रह पर वे कोतवाल के घर पहुँच जाते हैं। वहाँ उन्हें कोतवाल के आगे भी गाना सुनाना पड़ता है परन्तु मोहिनीबाई की माँ की फटकार सुनकर– "खबरदार, जो फिर कभी इस घर में आए। कोतवाल साहब को खबर लग जायेगी तो तुम्हारी इस सुन्दर काया से तुम्हारा सिर कटकर पल भर में ही अलग जा पड़ेगा। x x x x जोगी – ब्रह्मचारियों की सिद्धी में देवता भी विघ्न डालते हैं विश्वामित्र मुनि को जैसे मेनका से फँसा कर कुत्ता बनाया था वैसे ही रांड़ मेरी लड़की तुम्हारे पीछे पड़ गई है। जाओ, जाओ। भागो, भागो।"[2] उन्हें अपनी गलती का अहसास हो जाता है उनके ऊपर राम का प्रभाव प्रबल हो जाता है और वे काम के मारक आकर्षण से उबर पाते हैं।

इस प्रकार नागर जी ने राम और काम दो विपरीत धाराओं के साथ मानस का हंस में धारात्मक समीकरण स्थापित किया है।

---

[1] मानस का हंस – अमृत लाल नागर पृ. 112
[2] मानस का हंस – अमृत लाल नागर पृ. 131

'खंजन – नयन' उपन्यास में नागर जी ने महाकवि सूरदास के जीवन, उनके संघर्षों तथा जीवन में आने वाली विभिन्न कठिनाइयों को दिखाया है यद्यपि नागर जी ने सूरदास के चरित्र–विन्यास में मानवीय गुणों को अधिक से अधिक दिखाना चाहा है और उन्हें एक संघर्षरत मानव के रूप में अंकित करने में सफल रहे हैं। सूरदास जी शरीर धर्म को समझते हैं। शरीर के विकार को समझते हैं। युवावस्था प्राप्त होने पर सूर में भी काम भोग की इच्छा जागती है। सूर अपनी इस दुर्बलता से गहरे आत्मसंघर्ष की प्रक्रिया से गुजरते है। नागर जी ने अपनी कल्पना धारा से जिस सूरदास को संघर्षरत, मानवीय भूमिका में उभारना चाहा है वह कन्तो नाम की एक तिरस्कृत कुरूप, मल्लाहिन कन्या के सम्पर्क में आने के बाद ही संभव हुआ है। कंतो के विषय में वर्णन करते हुए नागर जी कहते हैं कि –"अंधी धुंधी। कालों में भी काली। ऊपर से माता के दाग। मोय कौन पूछैगो। या जनम तो बस मार खाइबे और काम करिबे के ताईं मिल्यो है। मैं सुख कहा जानूँ।' इतनी देर में पहली बार खुलकर बोली, जीवन की सारी कटुता एक ही बहाव में पनाले सी बहा दी।"[1]

कन्तो का साथ सूर के लिए चुनौती बन गया है। "कुछ भी हो अग्नि को साथ लेकर तपना ही सच्ची तपस्या है।"[2] गहरे संघर्ष और आत्म मंथन के पश्चात वह इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि उनका विरोध नारी से नहीं वरन् उसके काम वासना का माध्यम होने से है। सूरदास अपने मन को दृढ़ता से वश में कर लेते हैं। कामवासनाओं पर विजय पाकर कन्तो के प्रति स्नेहित होकर भी पथभ्रष्ट नहीं होते। सूर काम रूपी

---

[1] खंजन नयन – अमृत लाल नागर पृ. 52
[2] खंजन नयन – अमृत लाल नागर पृ. 99

अग्नि पर अपनी आसक्ति, अपनी चाहत, अपनी वासना, अपने मोह और अहं को पकाते है। 'सूरज कन्तो, मेरा तप, सूरज स्वामी मेरी बुद्धि ओर वह श्याम मेरी प्रेम शक्ति है।"[1]

इस प्रकार नागर जी ने सूर और कन्तो की प्रेमधारा के अतिरिक्त तत्कालीन सामाजिक धार्मिक स्थितियों का भरपूर उद्‌घाटन कर सिकन्दर लोदी के शासन में हिन्दू समाज पर किये जाने वाले अत्याचारों का वर्णन किया है कि किस प्रकार दूसरे धर्म इस्लाम के समकक्ष बता देना भी शूली पर चढ़ाये जाने के लिए काफी था। सिकन्दर लोदी के बाद इब्राहीम लोदी, बाबर, हुमायूँ और अकबर का शासन काल भी उन्होंने देखा। परन्तु सिकन्दर लोदी के काल में खूनी तीज, घाटों पर स्नान की मुमानियत, चोटी और यज्ञोपवीत का निषेध, पवित्र स्थानों पर साधु एवं गायों के कटे सिर, हिन्दुओं के विवाह पर काजी को दक्षिणा देना आदि तत्कालीन विभिन्न धाराओं का नागर जी ने एक धारात्मक समीकरण प्रस्तुत किया है।

नागर जी ने अपने उपन्यास 'बूँद और समुद्र' में समुद्र रूपी समाज में बूँद रूपी समाज के अस्तित्व का महत्व आँकने का प्रयास किया है। 'बँद और समुद्र' पुरानी समाज व्यवस्था के बनते बिगडते औद बदलते हुए भारतीय परिवार का महाकाव्य है।[2]

नागर जी ने इस उपन्यास में महिपाल के माध्यम से कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के रीति–रिवाजों का पर्दाफाश किया है। कल्याणी के माध्यम से नागर जी ने तत्कालीन समाज की रुढ़िवादी स्त्री के स्वभाव का चित्रांकन किया है –

---

[1] खंजन नयन – अमृत लाल नागर पृ.
[2] आलोचना सं0 पृ. 32

"कल्याणी हँस पड़ी – "ई बखत तऊ बाला के सुकुल ऐसे अकड़िगे जैसे ननौरे क्यार ताल्लुकेदारी इनहीं के हिस्सा मां परी होय।"[1]

कल्याणी ने धीरे से कहा – "सिवचरन तऊ ऊगू के दुबे आयं। हम धकरबन के घरे न करब।"[2] शीला स्विंग के माध्यम से जो कि महिपाल की प्रेयसी है – एक भारतीय स्वच्छंद नारी का चित्र प्रस्तुत किया है इस पात्र के माध्यम से नागर जी ने स्वच्छंद प्रेम की अभिव्यंजना की है।

महिपाल के माध्यम से लेखक ने आधुनिक भारतीय लेखकों की दयनीय आर्थिक स्थिति का चित्रांकन किया है। "रोज कुआ खोदकर पानी पीने वाले मनुष्य के लिए एक दिन भी खाली बैठना भार हो जाता है। महिपाल के लिए नवंबर से ही तंगी शुरु हो गई थी। दिसंबर में आशा थी कि पुस्तकों की रायल्टी के डेढ़ पौने दो हजार आ जायेंगे, सो कुछ दिन पहले महिपाल के कई तकाजों के बाद प्रकाशक का पत्र आया था कि बाजार की मंदी के कारण इस समय उनका हाथ सैला नहीं।"[3]

ताई का चरित्र तो इस उपन्यास की प्रमुख धारा है जिसके द्वारा पारिवारिक असहयोग के चलते ताई को एक अवसाद ग्रस्त बदले की भावना से युक्त, समाज से नफरत करने वाली नारी के रूप में दर्शाया है।

इस उपन्यास में विरहेश, ताई, नन्दो, वनकन्या के पिता जगदम्बासहाय, बड़ी, छोटी, तारा आदि एक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं तो सज्जन, महिपाल, वनकन्या एवं

---

[1] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर पृ. 102
[2] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर पृ. 103
[3] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर पृ. 97

कर्नल दूसरे वर्ग के प्रतीक हैं। सालिगराम, राजा जी, जानकी सरन एक तीसरे ही वर्ग के प्रतीक हैं जो राजनीति की आड़ में अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं।

'बूँद और समुद्र' में नागर जी ने छोटी बड़ी कथा धाराएँ, रेखाचित्रों तथा संबद्ध प्रसंगों की तमाम धाराएँ इस तरह से बहाईं हैं कि ये उपन्यास रूपी महासागर के उद्देश्य को सम्पन्न करतीं हैं।

डा. राम विलास शर्मा ने इसके विषय में कहा है – 'बूँद और समुद्र पुरानी समाज व्यवस्था के बनते – बिगड़ते और बदलते हुए भारतीय परिवार का महाकाव्य है।''[1]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागर जी ने अपने उपन्यासों में विभिन्न कथा धाराओं का आकर्षक संगुफन करके एक सुन्दर, सरस रचना का आकार प्रदान किया है। नागर जी की रचनाओं में विभिन्न कथा धाराएँ मिलकर संगम का दृश्य सृजित करतीं हैं।

---

[1] आलोचना – पृ. 82 ले. राम विलास शर्मा

घटना-प्रवाह के स्थिति चक्रवात (SPACE)

 घटना-प्रवाह में स्थितियों का चक्रवात

 अमृत लाल नागर के उपन्यासों में देश तत्व का संगठन

घटना - प्रवाह के स्थिति चक्रवात

घटना प्रवाह में स्थितियों का चक्रवात

लेखक अपनी रचनाओं में अपना जीवन नहीं लिखता, लेकिन अपने जीवन को छोड़कर भी कुछ लिख पाना उसके लिए कठिन होता है। "उसके जीवनानुभव गंगोत्री के गोमुख की तरह उसकी रचना का स्रोत बनते हैं। जहाँ से निःसृत उसकी अपनी निजी करुणा, रचना के मैदानी इलाके में बहते और फैलते ही समूचे संसार की करुणा बनकर इठलाने लगती है।"[1]

उपन्यासकार के लिए उसके जीवन में घटित होने वाली घटनाएँ एक महत्वपूर्ण स्थान रखतीं हैं। उन घटनाओं का वर्णन करते करते कभी लेखक किसी पात्र के जीवन में विभिन्न घटनाओं को एक साथ घटित दिखाते हुए स्थितियों के चक्रवात बना देता है। जिसमें से उबरने के लिए उस पात्र को कड़ा मनः संघर्ष करना पड़ता है और कभी – कभी तो वह आत्महत्या के रास्ते पर जा पहुँचता है।

अमृत लाल नागर जी भी एक ऐसे अद्‌भुत प्रतिभा सम्पन्न कलाकार है जिन्होंने समाज में रहकर विभिन्न घटनाओं और प्रभावों को अपने अनुभव से कहानी का रूप देकर इस ढंग से प्रस्तुत किया है कि पाठक को कोई भी घटना काल्पनिक प्रतीत न होकर वास्तविक सी लगती है। नागर जी ने अपने उपन्यासों में घटनाओं को इतना अधिक स्थान दिया है कि कभी – कभी एक पात्र के जीवन में इतनी अधिक घटनाएं

---

1 अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व और रचना संसार – मधुरेश पृ. 9

घटित होते दिखाईं है कि वह सांसारिक जीवन से ऊबकर आत्महत्या करने के लिए तैयार हो जाता है।

'बूँद और समुद्र' में नागर जी ने महिपाल, शीला स्विंग और कल्याणी के माध्यम से उनके जीवन में परिस्थितियों के चक्रवात उत्पन्न किये हैं। महिपाल जो कि एक स्वाभिमानी लेखक है और अपने लेखन कार्य में कहीं भी किसी के भी आगे कोई समझौता नहीं करता है जबकि उसे अपने परिवार के पालन – पोषण के लिए आर्थिक अभावों से भी जूझना पड़ता है। उसकी पत्नी कल्याणी परम्परागत मान्यताओं तथा आदर्शों को मानने वाली, एक पतिब्रता, अशिक्षित और रूढ़िवादी पत्नी है उसके मन में अपने लेखक – पति को लेकर कोई महत्व कोई भावना नहीं। महिपाल का खिंचाव 'शीला स्विंग उसकी प्रेमिका है', उसके तरफ बढ़ता है। महिपाल के जीवन के घटनाक्रम इतनी जल्दी – जल्दी मोड़ लेते हैं कि उसका जीवन परिस्थितियों के चक्रबात में जूझने लगता है। यहाँ तक कि उसे घर छोड़ने पर भी मजबूर होना पड़ता है परन्तु सामाजिक लोक लाज और मित्रों के प्रयत्न से पुनः घर आता है अपनी भांजी के विवाह के अवसर पर उसके जीवन का रहस्य (ननिहाल में की गई चोरी) का भेद खुल जाने पर वह आत्म–गलानि से भर जाता है और स्थितियों के चक्रवात बनते – बनते अन्त में वह आत्म – हत्या कर लेता है।

'अमृत और विष' उपन्यास में उपन्यासकार अरविन्द शंकर का तीसरा बेटा उमेश शंकर जो कि पढ़ लिखकर आई.ए.एस. बन जाता है, अति महत्वाकांक्षी युवक है। वह आई.सी.एस. अधिकारी की बेटी से विवाह करके घर परिवार से कोई संबध नहीं रखता है क्योंकि उसके ससुर और पत्नी नहीं चाहते। परन्तु घटनाक्रम के विकास होते

स्थितियों का चकवात उसे आत्महत्या के लिए प्रेरित करता है और वह ऊबकर आत्महत्या कर लेता है।

'सात घूँघट वाला मुखड़ा' में बेगम समरू जो कि वशीर खाँ द्वारा नबाब समरू को दस हजार मोहरों में बेच दी जाती हैं के जीवन में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं के माध्यम से उसके जीवन की विविध स्थितियों का वर्णन किया है। बेगम समरू जो कि एक साधारण औरत थी अपनी महत्वाकांक्षाओं के चलते उसे बेगम तक का पद प्राप्त होता है। वह अपनी महत्वाकांक्षाओं व काम भावना से प्रेरित होकर कभी टामस की ओर आकर्षित होती है तो फिर बाद में लवसूल के साथ भागने तक को तैयार हो जाती है। परन्तु पकड़े जाने पर लवसूल आत्महत्या कर लेता है और बेगम समरू स्थितियों के चकवात में घिरकर पकड़ी जाने पर जेल भेज दी जाती है।

'नाच्यौ बहुत गोपाल' में निर्गुनियाँ अपने जीवन में स्थितियों के चकवात से जूझती रहती है। उसके जीवन में एक के बाद एक विषम परिस्थितियाँ घटतीं हैं। वह अपने जीवन के अनेक घटनाक्रम जैसे कि नाना नानी की मृत्यु के पश्चात अपने रखैल पिता के पास आने पर बलात्कार का शिकार होना, उसके बाद बूढ़े मसुरियादीन से विवाह होना, कामाग्नि में जलते हुए देह सुख की आशा से मोहना के साथ भाग जाना, भंगी कर्म अपनाने के लिए प्रताड़ित किये जाने पर असीम शारीरिक व मानसिक यंत्रणा भोगना, मोहना का डेविड की हत्या के बाद बशीरा डाकू के साथ भाग जाना इत्यादि विविध परिस्थितियाँ उसके जीवन में इस कदर चकवात उपस्थित करतीं हैं कि अन्त में संघर्षों से ऊबकर वह आत्महत्या कर लेती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नागर जी ने अपने उपन्यासों में विविध घटनाक्रमों के मध्य स्थितियों के ऐसे चक्रवात उपस्थित किये है कि पात्र को उन स्थितियों से जूझने के लिए बेहद संघर्ष करना पड़ता है। 'मानस का हंस' में तुलसीदास के जीवन में तथा 'खंजन नयन' में सूरदास के जीवन में स्थितियों के ऐसे चक्रवात उपस्थित हुए हैं कि उन्हें इस स्थिति से उबरने के लिए बेहद संघर्ष व मानसिक कष्टों से गुजरना पड़ता है।

अमृत लाल नागर के उपन्यासों में देश तत्व का संगठन

उपन्यास की कथावस्तु के अनुसार देशकाल के अन्तर्गत किसी भी राष्ट्र, देश अथवा समाज और जनजाति के आचार – विचार, वेशभूषा, रीति – रिवाज, सभ्यता संस्कृति, तथा सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थितियों का चित्रण किया जाता है। इसके अतिरिक्त उसे देश की प्राकृतिक, ऐतिहासिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों का अध्ययन भी होता है। इस प्रकार लेखक अपने औपन्यासिक कौशल से युग विशेष के परिवेश को जीवंतता के साथ प्रस्तुत कर देता है। ऐतिहासिक उपन्यासों की कथावस्तु देशकाल की सापेक्षता में रची जाती है।

"उपन्यास के देश और काल से हमारा तात्पर्य उसमें वर्णित आचार – विचार, रहन–सहन और परिस्थिति आदि से है इसे हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं – एक तो सामाजिक दूसरा ऐतिहासिक या सांसारिक । .... बहुत से उपन्यास आदि तो केवल इसलिए मनोरंजक होते हैं कि उनमें समाज के किसी विशिष्ट वर्ग, देश के किसी विशिष्ट भाग अथवा काल के किसी विशिष्ट अंश से संबंध रखने वाला ही

वर्णन होता है। ऐसी दशा में जिस उपन्यास का वर्णन जितना सटीक और स्वाभाविक होगा, वह उपन्यास उतना ही अच्छा माना जायेगा।"[1]

देश काल के औचित्य के संबंध में डा. गुलाबराय ने लिखा है कि –

देश काल के चित्रण में इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि वह कथानक के स्पष्टीकरणका साधन ही रहे, स्वयं साध्य न बन जाये। जहाँ देश काल का वर्णन अनुपात से बढ़ जाता है वहाँ जी ऊबने लगता है और लोग जल्दी – जल्दी पन्ने पलट कर कथा सूत्र को ढूँढने लग जाते हैं। देशकाल का वर्णन कथानक की स्पष्टता के लिए होना चाहिए, न कि उसकी गति में बाधा डालने के लिए।"[2]

नागर जी में देश प्रेम की भावना कूट –कूट कर भरी हुई थी और यही उनकी भावना उनके उपन्यासों में परिलक्षित होती हैं। वह बचपन से ही देश को आजाद कराने के जलूसों इत्यादि में शामिल होने लगे थे। उस जुलूस के अनुभव को नागर जी ने टुकड़े – टुकड़े दास्तान में लिखा है – 'साइमन गो बैक', महात्मा गांधी की जय, जवाहर लाल नेहरू की जय, वन्देमातरम् आदि नारों का दीवाना शोर जुझारू बाजों सा कानों में , मनों में गूँजकर एक अजब बेहोशी भरा जोश जगा रहे थे। .... पीछे हटती और आगे बढ़ती हुई भीड़ों के रेले पर रेले चलने लगे। मैं और प्रायः सभी व्यक्ति दो चक्की के पाटों में पिसने लगे। एक जगह मेरे पैर धरती से उठ गये थे।"[1] नागर जी ने गदर की पृष्ठभूमि में 'शतरंज के मोहरे' लिखा। पतनशील सामंतवाद की

---

[1] साहित्यालोचन डा. श्यामसुन्दर दास – पृ. 172
[2] बाबू गुलाबराय, काव्य के रूप – पृ. 170

कमजोरियों से लाभ उठाकर अंग्रेज धीरे–धीरे अवध को निगल रहे थे। राजसिंहासन पर अक्षम अयोग्य और विलासी राजा आसीन थे जो रासरंग व नशे में मस्त बने रहते थे। उनके महलों में उनके ही खिलाफ षड्यन्त्र होते रहते थे। अंग्रेज राज्य पर अधिकार प्राप्त करने के लिए किसी भी हद तक गिर कर अपना उद्देश्य सफल करने में लगे रहते थे। अंग्रेजों ने भारत के उद्योग और व्यापार का नाश किया उसे खेतिहर देश बनाया। इस अपराध को छिपाने के लिए उन्होंने कथा गढ़ी। भारत में उद्योग व्यापार का विकास कभी हुआ ही नहीं। इतिहास की इस समझ के अनुसार भारत में जो प्रगति हुई वह अंग्रेजों के कारण ही हुई।

नागर जी देश प्रेम के झूठे आदर्शों से सख्त परहेज करते हैं। "बूँद और समुद्र' में कांग्रेस के गाँधी के नाम पर राजनीति करने के ढोंग को वे जमकर लताड़ते हैं–

"सालिगराम, बापू जी के सिद्धान्तों को मूर्खों की महफिल में दुहरा लिया करो। उन लोगों में कोई जानता नहीं कि उनके सिद्धान्त क्या हैं? बाकी किसी लेखक के सामने आइंदा बापू जी और उनके सिद्धान्तों को लेकर अपनी ये कलुषित चोंच न खोलना। तुम कांग्रेस वालों को शर्म नहीं आती कि जिस महाविभूति ने अहिंसा का पूर्ण दर्शन करते हुए मानवता के लिए अपने प्राण तक खुशी–खुशी निछावर कर दिए उसके नाम पर झूठी डुग्गी पीटते हो?"[2]

---

[1] टुकड़े – टुकड़े दास्तान पृ. 53
[2] बूँद और समुद्र पृ0 186

नागर जी एक देश के दूसरे देश से लड़ने को अच्छा नहीं मानते बल्कि यह मानवता के लिए घातक है "आये दिन इकन्नी–दुकन्नी के पीछे तो हत्यायें होतीं हैं, अरबों रूपये और बेशकीमती दिमाग खर्च कर दुनियाँ को मिस्मार करने के लिए बम बनाए जाते हैं, अदना आदमी से लेकर महान राष्ट्रों तक हर कोई किसी न किसी का नाश करने की नीयत रखता है।"[1]

हमारा भारत देश सदैव महान संस्कृतियों को जन्म देने वाला सांस्कृतिक देश है। अनेकों अनेक आक्रमणकारियों ने हमारे भारत देश की संस्कृति को नष्ट करने का प्रयास किया किन्तु उन्हें इस कार्य में पूर्ण सफलता नहीं मिली मानव की इस बर्बर कार्रवाई पर 'बूँद और समुद्र' उपन्यास की कन्या का राष्ट्र प्रेम एक क्षोभ के रूप में प्रकट होता है– लेकिन इतिहास ऐसे ही लोगों की बर्बरता से आज बढ़ा है । यह हिन्दुस्तान का दुर्भाग्य है कि वह एक महान सांस्कृतिक देश है – भारत भाव–सौन्दर्य ही को नाना रूपों में देखता परखता रह गया और बर्बरता सदा उसे तबाह करती रही।"[2]

नागर जी के उपन्यास 'अमृत और विष' का नायक अरविन्द शंकर देश भक्त व देश प्रेमी के रूप में भी उपस्थित हुआ है। देंश के स्वतंत्र होने के बाद की स्थिति को देखकर उसका देश–प्रेम उसे झकझोर देता है – "आज के जीवन में मुझे कहीं एक प्रकार का खोखलापन भी लगता है। एक ओर जहाँ मुझे अपना आज का भारत पहले से कहीं अधिक उन्नत और वैभवशाली लगता है, वहीं मुझे बचपन और जवानी के दिनों

---

[1] बूँद और समुद्र पृ0 233
[2] बूँद और समुद्र पृ. 310

से यह देश कहीं अधिक खोया हुआ निष्प्राण और निकम्मा लगता है। मेरे बचपन में सदियों से सोता हुआ राष्ट्र फिर से करवटें बदलने लगा था। परिवर्तन के क्रम में अच्छाइयाँ और बुराइयाँ दोनों ही साथ–साथ तेजी से आगे बढ़ रहीं थीं। हम अपने लिए तेजी से नयी दुनिया ला रहे थे .... लेकिन आज? आजादी मिल गयी है, बड़े – बड़े बांध, नदी, घाटी योजनायें, बड़ी – बड़ी कलपुर्जे बनाने वाली फैक्ट्रियाँ यह सब कुछ थोड़ा बहुत अवश्य हो रहा है, लेकिन आम तौर पर हमारे शहरी बाबू और नौजवान किस कदर निष्क्रिय, अस्वस्थ, विचार शून्य, निकम्मे और परावलम्बी हो रहे हैं। मुझे हैरत होती है कि आज हर तरफ माँगे पूरी करने के नारे ही अधिकतर लगते हैं, स्वयं हमारे भी कुछ कर्तव्य हैं जिन्हें पूरा करने की बात दिमाग से एकदम भुला दी जाती है।"[1]

अंग्रेजों के शासन काल में हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियाँ परस्पर घुल मिल गयी थी। किन्तु, असामाजिक तत्वों के दुष्प्रयास और राजनीतिक कुचक्र के कारण देश में हिन्दू मुस्लिम दंगे होने लगे और पारस्परिक भ्रातृ भावना विलुप्त होने लगी। नागर जी हिन्दू–मुस्लिम एकता के समर्थक हैं। इस एकता का स्वर 'अमृत और विष' में मुखरित है – ये हिन्दू–मुस्लिम झगड़ा तो हमने सिर्फ शहर ही में आके देखा, हमारे गाँवों में तो यह तमाशा अभी तक दिखलाई नहीं देता। जब एक गाँव वाले दूसरे गाँव वालों पर हमला कर देते हैं तो हिन्दू–मुस्लिम सब साथ होते हैं। दो गाँव की लड़ाई होती है, हिन्दू – मुस्लिम की नहीं।[2]

---

[1] अमृत और विष – पृ. 96–97
[2] अमृत और विष – पृ. 516

'अमृत और विष' उपन्यास के अरविन्द शंकर का देश प्रेम उनके विचारों में झलकता है। चीनी आक्रमण से उनका दिल दहल जाता है – " हिमाचल पर चीन की चढ़ाई के बाद मुझे कुछ दिनों तक रह –रहकर महाकवि का प्रश्न और अपना उत्तर याद आता रहा। जिस महान हिमलय को 'अपने' हिमलय को रूस से अपने प्रेम संबंधों के सामने विनयनत मानकर मैं लज्जित नहीं हुआ था, उसी को चीन के द्वारा रौंदे जाते देखकर मेरा मन बर्दाश्त न कर पाया। नगाधिराज की एवरेस्ट चोटी जब तेन सिंह और हिलेरी ने पहली बार सर की, और अभी हमारे वीर फौजी जवानों ने चार – चार बार सर की तब भी यद्यपि हिमालय के आगे मनुष्य की अटूट लगन और श्रम शक्ति ही मुझे दिखलाई दी थी, तथापि देवात्मा हिमालय के प्रति मेरी आदर भावना में तनिक सी भी कमी न आ सकी थी। दोनों ही बार हिमालय को मैंने उसी प्रकार विनयनत किया, जैसे विद्या ददाति विनयम्।"[1]

देश की अखंड़ता और लोकतंत्र के विकास के लिए जन – जन में भावनात्मक ऐक्य का होना आवश्यक है। नागर जी ने भारतीय समाज को राष्ट्रीय एकता के सूत्र में बाँधने के उद्देश्य से ही 'एकदा नैमिषारण्ये' की रचना की थी। सुदूर अतीत में नैमिष में एक महान् सांस्कृतिक आन्दोलन का आयोजन हुआ था, जिसमें चौरासी हजार सन्तों का एक विशाल मेला लगा था। जहाँ पुराण, भागवत, महाभारत आदि ग्रन्थों का कथा प्रवचन हुआ था। "पौराणिक कल्पना के अनुसार उस आन्दोलन में एक लाख श्लोकों वाली महाभारत संहिता का पारायण तथा अन्य पुराणों के पठन पाठन से एक धर्म की

---

[1] अमृत और विष – पृ. 415

समन्वयकारिणी भावना को ही प्रश्रय दिया गया। तत्कालीन विश्रंखलित धार्मिकता में आर्यों के विभिन्न दल और वर्ग बँटकर देश की शक्ति को चूर – चूर कर रहे थे।"[1]

नागर जी की कल्पना का भारत अखंड आर्यावर्त है, जो सिन्धु से लेकर कामरूप तक, अमरनाथ से लेकर रामेश्वरम् तक आसेतु हिमालय विस्तृत है। इसमें अनेक जातियाँ अपने लघु–दीर्घ रूप में शताब्दियों से संघर्ष करतीं हुईं छिन्न विच्छिन्न होतीं रहीं हैं। इन्हीं जातियों के सांस्कृतिक समन्वय से विराट् चेतना का उदय हुआ "हमारे देश को कर्म और धन की सम्पन्नता, संगठन की एक सूत्रता तथा ज्ञान, विवेक और संयम की महाशक्ति चाहिए।"[2]

'सुहाग के नूपुर' में नागर जी ने दक्षिण भारत के प्राचीन समाज की आर्थिक उन्नति, नगर वधू, कुलवधू का परस्पर द्वन्द्व, नारी की सामाजिक स्थिति, कावेरीपट्टणम का वैभव, बड़े – बड़े राजकीय समारोह जिनमें नृत्य, गायन का आयोजन होता था तो दूसरी ओर बड़े–बड़े धनिकों, राजभवनों तथा मंदिरों के सामने बैठी हुई भिखमंगों की पंक्ति का भी वर्णन किया है। नागर जी ने कावेरीपट्टम के प्राकृतिक दृश्य का बड़ा ही मनोरम वर्णन किया है – "ब्रह्म मुहूर्त में ही कावेरीपट्टम के नौकाघाट की ओर आज विशेष चहल–पहल बढ़ रही है, सजे–बजे सुन्दर बैलों वाले शोभनीय रथों, पालकियों और घोड़ों पर नगर के गणमान्य चेट्टियार, प्रौढ़ और युवक कावेरी नदी के नौका घाट की ओर बढ़े चले जा रहे हैं।"[3]

---

[1] डा. सुदेश बत्रा – व्यक्तित्व, कृतित्व और सिद्धान्त पृ. 145 – 146
[2] एकदा नैमिषारण्ये – पृ. 294
[3] सुहाग के नूपुर – पृ. 9

'नाच्यौ बहुत गोपाल' के माध्यम से नागर जी ने तत्कालीन समाज के आधार पर समाज में निम्न व अछूत समझी जाने वाली जाति के विभिन्न रहस्यों को उद्घाटित करके उन्हें भी देश में सिर उठाकर समान भाव से जीने देने की कल्पना की है। जाति भेद को उन्होंने सिरे से नकार दियाहै।

'मानस का हंस' 'खंजन –नयन' आदि में नागर जी ने उस समय देश किन–किन स्थितियों से गुजर रहा था? इसका सटीक वर्णन किया है। मुगलों और पठानों के युद्ध तथा सत्ता के परिवर्तनों पर अनिश्चित राजनीतिक स्थिति के कारण जनता का सदा भयभीत रहना, मन्दिरों को तुड़वाकर मस्जिदें बनवाना, हिन्दुओं के साथ अच्छा व्यवहार न करना, रूपवती हिन्दू स्त्रियों को उठवाकर वेश्या बना देना, शैव व वैष्णवों में परस्पर धार्मिक कट्टरता, तुलसीदास को अनेकानेक विरोधों का सामना करते हुए भी आगे बढ़ना नागर जी का देश तत्व के संगठित रूप का प्रमाण है।

'महाकाल' में बंगाल के अकाल का हृदय द्रावक वर्णन करते हुए पाँचू गोपाल के माध्यम से नागर जी ने अपने देश प्रेम की भावना को व्यक्त किया है। 'सेठ बाँकेमल' में आगरा जिले के व्यापारियों की बोली बानी ही नहीं बल्कि एक मिटते हुए वर्ग का सम्पूर्ण चित्रण किया है।

नागर जी ने अपने सभी उपन्यासों में देश तत्व को प्रमुखता दी है। उन्होंने सामयिक वातावरण के अनुरूप ही अपने उपन्यासों की कथा का विकास किया है। प्रत्येक उपन्यास का अपना एक वातावरण होता है, जिसमें उसके पात्र अपनी गतिविधियों द्वारा जीवंत प्रतीत होते हैं। देश तत्व के संगठन द्वारा उपन्यासकार कथा में

रस, चरित्र–चित्रण में रोचकता तथा सौन्दर्य की मनोहारिणी सलिला प्रवाहित करता है। नागर जी के चित्रण प्रस्तुतीकरण शिल्प की सजीवता, सरलता का मौलिक उदाहरण है। नागर जी के उपन्यासों में देश तत्व का संगठन शिल्प सौन्दर्य के साथ वेष्टित है।

घटना-विकास में काल (TIME)

- वर्तमान में अतीत का स्मृत्याभास
- घटनाओं की परस्पर काल-स्थिति
- अमृत लाल नागर के उपन्यासों में काल-तत्व

घटना विकास में काल (Time)

1. वर्तमान में अतीत का स्मृत्याभास

नागर जी वर्तमान समाज की व्यवस्था से पूर्ण रूपेण सन्तुष्ट नहीं हैं इस भावना को उन्होंने अपने साहित्य में उपन्यासों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। अतीत की स्मृतियों के द्वारा नागर जी ने अपने जमाने की अच्छाइयों का वर्णन करते हुये वर्तमान को उससे हीन बताया है।

इस दृष्टि से उनका उपन्यास 'सेठ बाँकेमल' एक उत्कृष्ट कृति है। जिसमें नागर जी ने सेठ बाँकेमल नामक प्रमुख पात्र के माध्यम से अतीत के जीवन का शानदार वर्णन प्रस्तुत किया है तथा वर्तमान सामाजिक जीवन से असन्तोष व्यक्त किया है।

इस उपन्यास में नागर जी ने सेठ बाँकेमल अर्थात बीते हुए सामंतवादी युग की सांस्कृतिक परम्पराओं के साथ अपने खुद के व्यक्तित्व को भी साकार कर दिया है। राजेन्द्र यादव ने सेठ बाँकेमल के व्यक्तित्व के बारे में लिखा है – होरी और उसके केवल दो उत्तराधिकारी अमृत लाल नागर का 'सेठ बाँकेमल' और नागार्जुन का 'बलचनमा' अपने व्यक्तित्व में सामाजिक और सांस्कृतिक परम्पराओं को इस तरह आत्मसात करके साकार हो उठे हैं और इतने अधिक अपने व्यक्तित्व के लोग बन गये

हैं कि जहाँ हम उनमें एक युग अपनी सारी विशेषताओं के साथ देखते हैं वहाँ वे बहुत साधारण ही लेकिन बेजोड़ भी हैं।[1]

'सेठ बाँकेमल' अपनी दुकान पर बैठ कर अपने स्वर्गीय मित्र पारसनाथ चौबे और अपने अतीत जीवन के संस्मरण छोटे –2 किस्सों के रूप में चौबे जी के पुत्र को सुनाते रहते हैं। बदलते परिवेश में उन्हें पुरानी मान्यता और जीवन पद्धति बदलती हुई प्रतीत होती है। उनके हृदय में वर्तमान के प्रति असंतुष्टि एवं आक्रोश का भाव है। इसी आक्रोश के कारण उनके मानस पटल पर बीती हुई जिन्दगी की स्मृतियाँ बरबस उभरने लगती हैं। जब एकदम पुराने विचारों के प्रतिकूल विचारों वाली पीढ़ी से उनका टकराव होता है तब उस परिस्थिति में 'सेठ बाँकेमल' बहुत कुछ कह जाते हैं। आज की शिक्षित नारी की आलोचना करते हुये कहते हैं – "अब तो जमाना ही बदल गया है। आज कल की पढ़ी लिखीं लड़कियाँ हमारी धौंस थोड़ी माने हैं। तो बात ये है भैयो कि ये साला बाइस्कोप चला है , सनीमा , जिसमें साले में रोज ये ही बात बताई जावे है। किसी भी साले ऐरे–गैरे खुसकैट के साथ आँख लड़ा ली और जो माँ–बाप भला चाने वाले मना करें हैं। तो बिनों की छाती पे सवार हो जावे है ससुरी।"[2]

अपने अतीत की वकालत करने वाले सेठ बाँकेमल को अपने जमाने की नारी के सतीत्व पर गर्व है और नये युग की स्त्रियों के प्रति आक्रोश है। स्त्रियों के आधुनिक

---

[1] आलोचना – 4 , 1954–55 राजेन्द्र यादव का '*हिन्दी के सामाजिक कथानायकों का विकास*' शीर्षक लेख 9–48

[2] सेठ बाँकेमल पृ0 105

फैशन पर व्यंग्य करते हुये सेठ बाँकेमल कहते हैं – "फैशन है साले जार्जेट की साड़ियाँ पैनेगीं साब, जिससे साला सब बदन उघाड़ा दीखे।"[1]

आजकल के लड़कों और उनकी फैशन पर असंतोष जताते हुये सेठ बाँकेमल कहते हैं –

"मुझे तो छिमा करियो , बड़ा गुस्सा आवे है आजकल के लौड़ों पे। सालों की नसों में खून नहीं पानी दौड़े है पानी। लौंड़ें थोड़े ही हैं लौंडियाँ हैं लौंड़ियाँ। रंडियों की तरह से ससुरी माँग पट्टिया निकाल लीनी और चले सब मूँछ मुड़ा के सिगरेट पीते हुये। बड़ी तोपगी समझते हैं ससुरे। होगा क्या, अभी म्हाराज अंग्रेज हार जाये , हिटलर यहीं आके दन से पहुँचेगा और जहाँ देखा साब , मूँछे–फूँछ तो हैं ही नहीं कोई के , ससुरी भारतवर्ष में लौड़ियाँ है। मजा करो यार। पिल पड़ेगा साला पिल पड़ेगा। .... कोच्छ नहीं , आई योप डैमफूल , खुसकैट साले , फोक्स।"

अपने देश की सती स्त्रियों की प्रशंसा व वर्तमान फैशन व सिनेमा से अंसतोष जाहिर करते हुये सेठ बाँकेमल कहते हैं –

"इसी हमारे भारतवर्ष में औरतें सती होवें थी, तिनको देवी मान के पूज थे। अपनी इज्जत बचाने के लिए ससुरियाँ आग में जल के भसम हो जाया करें थी और अब ये जमाना आन लगा है कि घर घर में सब औरतें, लड़कियाँ ऐसे–ऐसे बाइस्कोप देखकर के रंडियां हुई चलीं जायं साली – नंईं मैं जे नंईं – कऊं हूँ कें पेले के जमाने में शुद्ध परित्तर ही थे , ऐसी कोई वारदातें होवई नहीं थी। नंई होवें थी जरूर पर

---

[1] सेठ बाँकेमल पृ0 55

बहुत कम और सो भी बड़ी दबी–ढ़ंकी भैयो।"

इस प्रकार नागर जी ने **'सेठ बाँकेमल'** के माध्यम से वर्तमान जीवन से असंतोष व्यक्त करते हुये अतीत का स्मरण दिलाया है तथा वर्तमान से कुछ मुद्दों पर अतीत को श्रेष्ठ बताया है।

2. घटनाओं की परस्पर काल–स्थिति

मानव परिस्थितियों का दास होता है। उसके जीवन में समय का बहुत महत्त्व होता है। मनुष्य के यदि समय अनुकूल होता है तो वह विभिन्न परिस्थितियों से संघर्ष करता हुआ आगे बढ़ जाता है और समय के अनुकूल न होने पर वह संघर्षों से जूझता हुआ हार जाता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि "मनुज बली नहिं होत है, समय होत बलवान।" मानव जीवन में नित्य प्रति नाना विध घटनाएँ घटित होती हैं। सामान्य जन पर उन घटनाओं का क्षणिक असर होता है परन्तु एक सर्जक साहित्यकार के मन में वे घटनायें स्थाई प्रभाव डालतीं हैं। वह रचना करते समय इन घटनाओं को इस तरह वर्णित करता है कि वे परस्पर एक दूसरे की पूरक बनती हुई आगे बढ़ती हैं। कभी –2 वह विभिन्न घटनाओं को एक ही समय में घटित होते दिखाता है। समय के अनुसार ही व्यक्ति पर उन परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता है।

नागर जी ने भी अपने उपन्यासों में घटनाओं का वर्णन करते समय काल का विशेष ध्यान रखा है। विविध घटनाओं को एक साथ घटित होते हुए वर्णित करने पर समय का विशेष ध्यान रखा है। समय का पात्र के जीवन में विशेष प्रभाव पड़ता है।

'मानस का हंस' में तुलसीदास के जन्म के समय विविध घटनाएँ एक साथ घटित होती हैं। समय की स्थिति के अनुसार ही तुलसी को जन्म के बाद नौकरानी की सास के पास भेज दिया जाता है ,माता की मृत्यु हो जाती है। पिता श्मशान घाट से ही चले जाते हैं गाँव मुगल आक्रान्ताओं द्वारा तहस नहस कर दिया जाता है। कुँवरीजू को पकड़ लिया जाता है जो बाद में अपने सम्मान के लिए नदी में कूदकर आत्म हत्या कर अपनी लाज बचाती है। गाँव में लड़ाई की तैयारियाँ होने लगतीं हैं। 'खंजन–नयन' में सूरदास के नेत्र विहीन जीवन में विविध घटनाक्रम एक ही काल में घटित होते हैं परन्तु उन परिस्थितियों से संघर्ष करते हुये सूरदास के जीवन में समय परिवर्तित होता है और कालानुसार महाकवि का स्थान प्राप्त होता है। 'सुहाग के नुपूर' में भी नागर जी ने कन्नगी और माधवी के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं की परस्पर काल–स्थिति का विशेष ध्यान दिया है। कन्नगी का कोवलन को सुहाग के नूपुर न देने का प्रण और माधवी का सुहाग के नूपुर प्राप्त करने की जिद में अन्त में वेश्या बनकर पागल होकर बौद्ध धर्म में शरण लेने की घटनाओं का वर्णन करने में नागर जी ने घटनाओं की परस्पर काल–स्थिति को कहीं भी टूटने नहीं दिया है बल्कि उनमें परस्पर साम्य रखते हुए उन्हें दर्शाया है।

3. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में काल–तत्व

नागर जी ने अपने उपन्यासों में उस समय में घटित होने वाली घटना को उस काल से जोड़कर इस तरह रचना की कि उपन्यास पढ़ने पर पाठक को उस काल की

परिस्थितियों का सही ज्ञान प्राप्त हो। नागर जी ने समय के मूल्य का पहचान व देश में उस समय अंग्रेजों , मुगलों और आम–जनता बीच हो रहे अन्तर्विरोधों को जनता के समक्ष रखा।

नागर जी की प्रत्येक रचना उनकी गहन अनुभूतियों का परिणाम थी इसीलिये उनकी रचनाओं में उस समय का समाज व स्थितियाँ जीवन्त हो उठतीं हैं। 'गदर के फूल' में उन्होंने विभिन्न स्थानों पर घूम–घूम कर व विभिन्न लोगों से संस्मरण प्राप्त कर गदर के फ़ूल के नायकों के जीवन का बहुत ही सत्य वर्णन किया है। 'गदर ' के विषय में अपने विचार नागर जी ने 'करवट' उपन्यास में प्रस्तुत किये हैं।

गदर प्रगतिशील अंग्रेजों के विरूद्ध प्रतिक्रियावादी सामंतो का संघर्ष नहीं था , वह जन विद्रोह था। "उत्तर भारत में अंग्रेजों के खिलाफ एक जबर्दस्त जन विद्रोह का विस्फोट हो चुका था।"[1] अंग्रेजों ने क्रूरता से जन विद्रोह को दबा दिया। गदर के बाद लखनऊ का यह हाल था – "हाँ पहले जौहरी बाजार, मीनाबाजार थे, वहाँ अब गधे चरते थे। इमाम बाड़ों में किसी में डाकघर, किसी में अस्पताल और किसी में छापे खाने खुल गये। जिन हौजों में कभी वेदमुश्क के सुंगध की लपटें उठा करती थीं वहाँ अब निर्लज्ज गोरे खड़े खड़े पेशाब कर रहे हैं लखनऊ की दुर्दशा देखकर वंशीधर का मन एक बार फिर अंग्रेजों के प्रति घृणा से भर उठा।"[2] अंग्रेजों के भक्त वंशीधर से देश की दशा छिपी नहीं रहती और किसानों का हाल यह था – काश्तकार अब जमीन का मालिक नहीं केवल एक दयनीय किरायेदार मात्र रह गया था.......... कितने ही अकुलीन

[1] करवट पृ0 118

और कुछ कुलीन किसान भूमिहीन बन चुके थे। ऐसे कुलीन वंश तो अपने पैतृक गाँवों से बाहर किसी अन्य नगर या कस्बे में जाकर मजदूरी करने लगते, और अकुलीन गरीब जमींदार तथा अपेक्षाकृत सम्पन्न कुलीनों की मुफ्त बेगार ढोते थे। नये राज में महाजन की स्थिति पहले से बहुत बढ़ गयी थी।[1]

शहरों में नये पढ़े लिखे वर्ग की सामाजिक और राजनैतिक जागृति बढ़ रही थी उस समय अंग्रेज भारत का ब्राह्मण था। अंगरेजियत हमारा आदर्श थी और अंग्रेज का वतन हमारा आदर्शलोक बैकुण्ठ। जो विलायत पास कर आता था वह स्वर्गदूत की तरह आम जनता के बीच ,सिक्कों में गिन्नी ,और नगों में हीरा – मानिक बनकर , अंग्रेज सरकार की छत्र छाया में अपने आपको प्रतिष्ठित करता था। यद्यपि यहाँ के रूढ़िवादी समाज में उन्हें हर अधिकार से वंचित कर दिया जाता था। .... इस तरह धन , कुर्सी डाक्टरी और बैरिस्टरी की शक्ति ने उस समय प्रगतिशील बनकर उस प्रतिक्रियावादी समाज को परास्त कर दिया जिसने अनजाने कल से समुद्रीयात्रा करने वाले भारतीय राष्ट्र को झूठ मूठ का शास्त्र निषेध लगाकर समुद्र लांघने से रोक रखा है।[2]

'अमृत और विष' उपन्यास में नागर जी स्वाधीनता आन्दोलन के समय और आज के समय की राजनीति में अन्तर करते हुये कहते हैं –

"सन् 42 में हम लोग जेल क्या गये कि हमारा सारा नैतिक बल और सत्य के लिये हमारा साहस, संगठन और कर्मशूरता ही अंग्रेजों के साथ भारत छोड़ो नारे को

---

2 करवट पृ0 135

1 करवट पृ0 163–164

मानकर चली गयी। आजादी के बाद आया क्रूर, असंगठन, विलास, व्यभिचार, लूट, डाके , खून और काले बाजार का जमाना।"[1]

'बूँद और समुद्र' में भी नागर जी ने उस काल की राजनीति का चित्रण किया है – "इतना बड़ा राजनैतिक आन्दोलन और त्याग करने के बाद भी खास गान्धी के चेले आर्थिक, सामाजिक आन्दोलन चलाने के बजाय मखमली कुर्सियों और मातहतों से हुजूर सरकार सुनने की लालच में बैठे रहे।"[2]

नागर जी ने उस काल में समाज की नारी की स्थिति का वास्तविक चित्रण 'बूँद और समुद्र' नामक उपन्यास में करते हुये लिखा है –

मौजूदा समय में नारी की एक अजीब सामाजिक स्थिति है। खास तौर से हमारे देश में तो यह विचित्रता और भी स्पष्ट होकर झलकती है। हम देखते हैं कि औरत इस समय आम घरों में किसी न किसी रूप में बेइज्जती का जीवन बिताती है छोटे आदमी कहलाने वालों की कौन कहे, बड़े बड़े सभ्य, रईसों और पण्डितों के घरों में भी स्त्री जाति का अपमान होता है। आम जहनियत में स्त्री घर का कामकाज, सबकी सेवा–टहल करने वाली और पुरुष के भोग की वस्तु होने के अलावा और कुछ भी नहीं , उसका एक महत्व अवश्य है कि वह बच्चे पैदा करने वाली मशीन भी है। बच्चे चूँकि इन्सानी जिन्दगी को बढ़ाने के लिये अहम जरूरी हैं इसलिये उनका उत्पादन करने

---

[2] साहित्य और संस्कृति – कलाकार की पृष्ठभूमि – पृ0 12

[1] अमृतलाल नागर – अमृत और विष पृ0 119

[2] अमृत लाल नागर – बूँद और समुद्र पृ0 468

वाली फैक्ट्री का भी महत्त्व है।"[1]

समाज में प्रचलित पर्दा प्रथा को नागर जी उस काल के अनुसर गलत मानते थे। राजाओं , नबाबों के महलों में सारे अच्छे बुरे कार्य पर्दे में होते थे। 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' में टामस बेगम समरू को देखने के लिये परेशान हो जाता है — 'लेकिन तस्वीर तो आखिर तस्वीर ही है। उसे रह रह कर हिन्दुस्तान के उस रिवाज पर झुंझलाहट आ रही थी जो औरतों को पर्दे में रखता है।'[2]

उस काल के पण्डितों के चरित्र के विषय में नागर जी "नाच्यौ बहुत गोपाल" में निर्गुणिया के मुख से कहलाते हैं — बड़े –2 त्रिपुंडधारी पंडितों को भी मैंने अछूत स्त्रियों के पीछे — 2 कुत्ते की तरह घूमते देखा है। लुक छिपकर मुँह काला करने के बाद फिर उजागर में मूँछों पर ताव दे के हटो — बचो चिल्लाना शुरू कर देते हैं।"[3]

"एकदा नैमिषारण्ये" में नागर जी ने उस काल में प्रचलित आराधना पद्धति के आधार पर तपस्वियों के प्रकारों का वर्णन किया है — अश्वमकुट्टु साधक पत्थर से अन्न या फल–मूल कूट कर खाते थे , दन्तोलूखली दाँतों से चबा चबा कर कच्चा अन्न खाते थे। होत्तिय अग्निहोत्र करते थे , कोत्तिय जमीन पर सोते थे और पोत्तिय कपड़े पहनते थे। संमज्जक नदी में कई गोते लगाते थे , उमज्जक केवल एक गोता लगाते थे। निमज्जक नदी में थोड़ी देर खड़े रहते थे। संपक्खाल अपनी शरीर मिट्टी से रगड़ कर स्वच्छ करते थे।[1]

---

1 अमृतलाल नागर — बूँद और समुद्र पृ0 105
2 सात घूँघट वाला मुखड़ा — पृ0 16
3 नाच्यौ बहुत गोपाल — पृ0 17
1 एकदा नैमिषारण्ये — पृ0 21–22

सभी वर्णो के अलग अलग परिधानों तथा रंगों का भी वर्णन किया है – ब्राह्मण गृहस्थ श्वेत वस्त्र , राजन्य वर्ग के लोग तथा सूत जन पीले तथा हल्के लाल रंग के परिधान पहनते थे।[2]

"मानस का हंस" तथा खंजन नयन में नागर जी मुगल साम्राज्य के समय का वर्णन करते हैं कि किस प्रकार उस समय निराशा से घिरे भारतीयों में इन कवियों ने चेतना व स्फूर्ति भरी थी।

शतरंज के मोहरे में उस काल के अवध क्षेत्र के लखनऊ का वर्णन किया है – साढ़े पाँच मील के घेरे में अवध के नबाब , वजीरों तथा प्रथम बादशाह अबुल मुजफ्फर मुईजुददीन शाहेजमा गाजीउददीन हैदर की राजधानी लखनऊ अवध की हरी भरी धरती पर बसी हुई ऐसी सुन्दर लगती है मानों धानी दुपटटे के पल्ले पर किसी अलबेले हुनरमंद ने जरदोजी का नायाब गुलदस्ता काढ़ दिया हो।[3]

एक तरफ नागर जी ने उस समय के लखनऊ की सुन्दरता का वर्णन किया है, तो दूसरी ओर गरीबी से जुझती हुई प्रजा के नारकीय जीवन का वर्णन भी किया है–

स्वर्ग और नरक एक सिक्के के दो पहलू होकर यहीं हर समय साथ–2 दिखलाई देते हैं। ऊँची –2 मीनारों, गुम्बदों और कलश कंगूरों वाली शानदार इमारतों के आसपास खपरैल के टूटे मामूली घर घिरे हैं। सोने चाँदी के छत्र धारण करने वाले शाह , शहजादों, अमीरों उमरा के हाथियों वाले जुलूस और फटे हाल भिखमंगों के हुजूम एक साथ देखने को मिलते हैं।

---

2 एकदा नैमिषारण्ये – पृ0 43
3 शतरंज के मोहरे – पृ0 34

महमहाती हुई कोठियों के साथ ही साथ कीचड़ दुर्गन्ध और सीलन भरी गली दर गलियों के छोटे छोटे मकान हरदम गन्दी हवा से बसे रहते हैं।[1]

---

[1] शतरंज के मोहरे – पृ0 35

घटना-क्रम का पर्यवसान

पर्यवसान की विभिन्न स्थितियां

यथार्थ वस्तु गतता

संकेतात्मक सम्भावना

अमृत लाल नागर के उपन्यासों में घटना-क्रम का पर्यवसान

घटना क्रम का पर्यवसान

1. पर्यवसान की विभिन्न स्थितियाँ

जब कोई उपन्यासकार मानव समाज में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं को आत्मसात करके रचना करता है तो वह उस समाज की स्थिति व स्वयं अपने विचारों को रखकर उसका पर्यवसान करता है। मानव मन सदैव से ही चिन्तन व मनन में लगा रहता है परन्तु साहित्यकार का संवेदनशील मन जब समाज में होने वाली विभिन्न परिस्थितियों से द्रवित हो उठता है तो उसकी लेखनी से निकले उसके विचार साहित्य का रूप ग्रहण करते हैं व समाज को उसे पढ़कर उससे प्रेरणा मिलती है। उपन्यास एक ऐसी विधा है जिसके माध्यम से उपन्यासकार मानव जीवन तथा समाज की इन विषमताओं , जटिलताओं तथा नवीन समस्याओं और परिस्थितियों को चित्रित करता है। वह समाज कल्याण और मानव–हित की भावना का लोगों में संचार करने के लिये तथा इन विषमताओं और जटिलताओं का समाधान प्रस्तुत कर वह उन्हें आदर्श रूप में परिणित करने के लिए अपनी रचनाओं का पर्यवसान विभिन्न स्थितियों में करता है। वैसे तो रचनाकार अपनी रचना का पर्यवसान सुखान्त रूप में ही करना चाहता है परन्तु घटना क्रम के अनुसार कभी –2 उसकी रचना का पर्यवसान मानव के कल्याण की कामना करते हुये भी किया जाता है। साहित्यकार चाहे ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना करे या सामाजिक उसका मूल उददेश्य सदैव अपनी रचना को विभिन्न घटनाओं को

दिखाते हुये आम जनमानस को सुखी देखना होता है। इसीलिये जिस उपन्यास को जिस घटना का आधार बनाकर लिखा जाता है। उसी के आधार पर उसका पर्यवसान कर दिया जाता है। किसी भी घटना को आधार बनाकर जब एक उपन्यासकार के मन में एक कृति को लिखने का विचार उत्पन्न होता है तब वह इस बात का भी विचार करता है कि उसकी घटनाओं का क्रम और उसका पर्यवसान ऐसी स्थिति में हो जिससे कि आगे आने वाला समाज इनसे सीख लेकर किसी गलत कार्य या विचार की ओर प्रवृत्त न हो। कभी वह अपनी घटनाओं को दुखद रूप में पर्यवसान कर देता है। कभी वह अपनी घटनाओं का पर्यवसान उन्हें विभिन्न स्थितियों से आगे बढ़ाते हुए सुखद रूप में करता है। कभी वह घटना के अन्त में किसी पात्र के माध्यम से कोई विचार कहलाकर घटनाक्रम का पर्यवसान करता है। इस प्रकार मैं कह सकती हूँ कि रचनाकार अपनी रचनाओं में घटनाक्रम का विभिन्न स्थितियों में पर्यवसान करता है।

2. यथार्थ वस्तुगतता

साहित्य समाज का दर्पण होता है वह केवल कोरी कल्पनाओं पर आधारित नहीं बल्कि यथार्थ के धरातल पर निर्मित होता है। प्रेमचंद से पूर्व के उपन्यास तिलिस्म और ऐय्यारी से भरे होते थे उनमें यथार्थ का अंश बहुत ही कम मिलता था परन्तु प्रेमचंद ने 'सेवा सदन' से लेकर 'गोदान' तथा अधूरे 'मंगल सूत्र' तक के अपने उपन्यास साहित्य में यथार्थ को ही अपने लेखन व उपन्यासों का आधार बनाया उन्होंने अपने उपन्यासों में समाज, मानव जीवन और युग–जीवन का सही और यथार्थ चित्र प्रस्तुत

किया और अपनी सजग यथार्थवादी दृष्टि से जीवित पात्रों और कथानकों को जन्म दिया। यथार्थ वस्तुगतता उनके समग्र उपन्यासों में देखी जा सकती है। प्रेमचंद उपन्यास को 'मानव जीवन का चित्र' समझते थे और मानव चरित्र पर प्रकाश डालना उसके रहस्यों को खोलना वे उपन्यास का मूल तत्व मानते थे।[1] उनकी रचनाओं में समाज और मानव जीवन के चित्र एक विशाल यथार्थ की भूमि पर उभरे हैं। यह यथार्थ उनके उपन्यासों का प्राणतत्व , उनकी सबसे बड़ी शक्ति है।

यथार्थवाद पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुये आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है – "कविता यथार्थवाद की उपेक्षा कर सकती है, संगीत यथार्थ को छोड़कर भी जी सकता है पर उपन्यास और कहानी के लिये यथार्थ प्राण है।"[2]

यथार्थ बोध , प्रखर सामाजिकता , व्यापक मानवतावाद तथा सामाजिक हास्य और व्यंग्य की गहरी क्षमताओं से युक्त अमृतलाल नागर इसी परम्परा की उपज माने जा सकते हैं।[3] नागर जी ने प्रेमचंद की यथार्थवादी परम्परा को आगे बढ़ाया है। नागर जी के उपन्यासों में समाज और युग जीवन का यथार्थ चित्र दिखाई पड़ता है। उनका 'महाकाल' उपन्यास उनके इसी यथार्थ का परिचय देता है जो एक मानवतावादी दृष्टिकोण लेकर हमारे सामने प्रस्तुत किया गया है। नागर जी की यथार्थ दृष्टि इतनी सूक्ष्म और पैनी है कि पात्रों में कहीं भी कृत्रिमता नहीं आ पायी है उनके अधिकांश पात्र जीवित पात्र हैं। सामाजिक जीवन की असंगतियों तथा ध्वस्त होती हुई सांमतीय सभ्यता का जो चित्र नागर जी ने अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। वह अन्यत्र

---

[1] कुछ विचार – प्रेमचंद पृ0 71
[2] विचार और वितर्क आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ0 95

दुर्लभ है। 'सेठ बाँकेमल' , 'बूँद और समुद्र' , 'शतरंज के मोहरे' , 'सुहाग के नुपूर', 'अमृत और विष' आदि में उभरती हुई नई चेतना के साथ मिटते हुये सामंतवाद की सड़ांध को सारी विविधता में देखा जा सकता है।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र के समय से विकास पाने वाली यथार्थवादी धारा को नागर जी ने अपने उपन्यासों में एक नया उत्कर्ष प्रदान किया है। 'अमृत और विष' में नागर जी ने तत्कालीन समाज और युग जीवन को यथार्थ की सजीव रेखाओं के साथ प्रस्तुत किया है। मध्यवर्गीय जीवन के अनेकानेक स्तर इस उपन्यास में नागर जी की यथार्थवादी दृष्टि से आलोकित उद्घाटित हुये हैं। नागर जी की रचनाओं में यथार्थ वस्तुगतता को देखते हुये भीष्म साहनी कहते हैं –

"जहाँ नागर जी की रचनाओं में यथार्थ जीवन बोलता है, वहाँ भाषा भी जन जीवन की भाषा होती है। कोई भी लेखक भाषाओं के बीच अपने को व्यक्त करते समय रेखाएँ नहीं खींचता वह उन्हीं शब्दों का प्रयोग करता है जिसमें उसके पात्र बोलते हैं , जो उसके पात्रों के माहौल में गूँजते हैं जो उसकी अपनी सर्जनात्मक भाषा में रच बस गये हैं। नागर जी लखनऊ में वर्षों से रहते आ रहे थे , लखनऊ की जबान ही उनकी लेखनी में उतर आयी थी।[1]"

यथार्थ वर्णन के प्रति नागर जी की रुचि को देखते हुए श्री आनन्द प्रकाश त्रिपाठी जी कहते हैं – "अमृतलाल नागर मध्यवर्गीय समाज–जीवन को नगरीय सन्दर्भ में देखने वाले मानवतावादी जीवनदृष्टि के कथाकार हैं। अपनी पूर्वाग्रह मुक्तता के

---

[1] नागर : उपन्यास कला – प्रकाश चंद मिश्र पृ0 32

कारण जीवन के यथार्थ के प्रति उनकी पकड़ बहुत मजबूत है। आस्था वादिता ने उनकी रचनाओं में आशा और विश्वास का स्वर फूँका है। सचमुच गांधी और मार्क्स , आदर्श और यथार्थ , नये और पुराने को एक साथ जीने वाला इतना बड़ा रचनाकार हिन्दी में कोई दूसरा नहीं है।"[1]

3. संकेतात्मक संभावना

जब एक रचनाकार अपनी किसी रचना के लिये प्रवृत्त होता है तो उसके मन में अनेक ऐसे विचार आते हैं जिन्हें वह स्पष्ट रूप में कह नहीं पाता बल्कि संकेतों के माध्यम से आगे आने वाली घटना का संकेत करता है। इसके द्वारा हम रचनाकार की कुशलता को देखते हैं कि जिस बात को वह सीधे भी कह सकता था उसे प्रत्यक्ष न कहकर किसी घटना क्रम के माध्यम से संकेत कर देता है।

नागर जी ने 'महाकाल' में पाँचू गोपाल की डिगती हुई ईमानदारी, परिस्थितियों से पलायन के बीच मृत माँ के पास रोते हुये नवजात शिशु के माध्यम से मृत्यु के बीच भी जीवन का संकेत दिया है।

'बूँद और समुद्र' में पैसे के अभाव में ननिहाल में की जाने वाली चोरी के बीच समारोह में उजागर हो जाने पर स्वाभिमानी और संघर्षशील लेखक महिपाल द्वारा की जाने वाली आत्महत्या इस बात का संकेत है कि एक लेखक किस तरह विभिन्न आर्थिक कठिनाइयों को झेलता हुआ अन्त में अपमानित होकर आत्महत्या को मजबूर हो

---

[1] साप्ताहिक हिन्दुस्तान ए 15 अप्रैल 1990 पृ0 27

[1] अमृतलाल नागर के उपन्यास , आनन्द प्रकाश त्रिपाठी पृ0 311–312

जाता है। 'अमृत और विष' में भी नागर जी ने लेखक अरविन्द शंकर के जीवन में आने वाली कठिनाइयों के माध्यम से एक रचनाकार के जीवन की विविध समस्याओं का संकेत दिया है।

'एकदा नैमिषारण्ये' में नागर जी ने तीसरी चौथी शताब्दी के भारत को अवध के धार्मिक , सांस्कृतिक विघटन के माध्यम से अंकित किया। विभिन्न घटनाक्रमों से नागर जी अपने भारत की संस्कृति को श्रेष्ठ बताने का जगह – जगह संकेत देते हैं।

'ये कोठे वालियाँ' और 'सुहाग के नूपुर' में वेश्या जीवन का जिस संवेदना से चित्रण किया है उससे यही संकेत मिलता है कि वेश्या को भी एक अच्छा जीवन जीने का मौका मिलना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नागर जी ने अपने उपन्यासों में किसी न किसी घटना के माध्यम से आगे घटित होने वाली घटना या उसके परिणाम का संकेत दिया है।

4. अमृत लाल नागर के उपन्यासों में घटनाक्रम का पर्यवसान

अमृत लाल नागर जी एक उपन्यासकार होने के साथ –2 एक श्रेष्ठ विचारक भी थे। उन्होंने अपने उपन्यासों में घटनाक्रम का पर्यवसान विभिन्न स्थितियों में किया है।

उनका उपन्यास 'महाकाल' बंगाल के अकाल पर लिखा हुआ एक श्रेष्ठ उपन्यास है। इसमें नागर जी ने अकाल के एक से एक लोमहर्षक चित्र खींचे हैं।

पूँजीपति और अंग्रेजों के षड़यन्त्रों को दिखाया है। परन्तु एक के बाद एक होते घटनाक्रमों से महाकाल उपन्यास के घटनाक्रम का पर्यवसान मृत्यु के बीच जीवन की चाह के रूप में किया है।

'बूँद और समुद्र' नागर जी का एक विस्तृत उपन्यास है। इस उपन्यास में महिपाल, कल्याणी, शीला स्विंग, सज्जन, वनकन्या, कर्नल, ताई आदि विविध पात्रों के जीवन में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं को नागर जी ने बड़े ही क्रमबद्ध ढ़ंग से प्रस्तुत किया है। परन्तु महिपाल के जीवन में घटने वाली घटना का पर्यवसान दुखद रूप में होता है। तो ताई, वनकन्या सज्जन के जीवन में घटित होने वाली घटनायें सुखद पर्यवसान प्राप्त कर लेतीं हैं। उपन्यास के अन्त में नागर जी सबके लिए सुख की कामना करते हुए व्यक्ति और समाज में उचित संतुलन की आस्था पर बल देते हुये कहते हैं – "मनुष्य का आत्म विश्वास जागना चाहिये, उसके जीवन में आस्था जागनी चाहिये। मनुष्य को दूसरे के सुख दुःख में अपना सुख दुख मानना चाहिए .... पर शर्त यह है कि सुख–दुख में व्यक्ति का व्यक्ति से अटूट संबंध बना रहे – जैसे बूँद से बूँद जुड़ी रहती हैं लहरों से लहरें। लहरों से समुद्र बनता है– इस तरह बूँद में समुद्र समाया है।[1]"

'शतरंज के मोहरे' उपन्यास तो नागर जी का घटनाओं का भंडार है। इसमें नागर जी ने विभिन्न घटनाओं का विभिन्न स्थितियों में पर्यवसान किया है। नबाब नसीरुद्दीन हैदर भोग और विलास में डूबा हुआ विभिन्न षड़यन्त्रों और घटनाओं के

---

[1] बूँद और समुद्र अमृतलाल नागर पृ0 583

माध्यम से उसकी मृत्यु के घटनाक्रम का पर्यवसान नागर जी उसको धोखे में जहर देकर हत्या के रूप में करवाते हैं। दुलारी जिस तरह विभिन्न षड्यन्त्र करके मलिका–ए–जमनियाँ के पद पर पहुँचती है। उसी तरह विभिन्न घटनाक्रमों के माध्यम से उसको अन्त में अपनी जान बचाने के लिए छिपना पड़ता है। कुदसिया बेगम को भी नागर जी ने नबाब की सच्ची पत्नी और प्रेमिका के रूप में प्रस्तुत किया है परन्तु विभिन्न घटनाओं के माध्यम से उसके अन्त के घटनाक्रम का पर्यवसान उसकी आत्महत्या के रूप में करते हैं।

भुलनी के जीवन में घटित होने वाली दुघर्टना, जिसमें कि अंग्रेज अफसर स्मिथ द्वारा उस पर बलात्कार किया जाता है, का नागर जी ने प्रायश्चित के रूप में आत्महत्या के द्वारा पर्यवसान किया है।

कुल्सुम के चरित्र की विभिन्न घटनाओं को नागर जी ने इस उपन्यास में स्थान दिया है। कुल्सुम यद्यपि दिग्विजय ब्रह्मचारी के संरक्षण में रहती है परन्तु धीरे –2 घटित होते घटनाक्रमों के माध्यम से उसके जीवन की घटना का पर्यवसान उसे वेश्या बनाकर करते हैं।

बादशाह बेगम के जीवन में घटित होने वाले विभिन्न घटनाक्रमों का पर्यवसान उनकी गिरफ्तारी के रूप में किया गया है।

'सुहाग के नूपुर' में नागर जी ने कुलवधू और नगर वधू के संघर्ष को विभिन्न घटनाक्रमों के रूप में प्रस्तुत किया है। कन्नगी के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का पर्यवसान नागर जी ने कोवलन से मिलन के रूप मे किया है तो माधवी के जीवन

में घटने वाली घटनाओं का पर्यवसान उसे वेश्या व अन्त में पागल होकर ईश्वर की शरण प्राप्त करने के रूप में किया है ।

'अमृत और विष' में अरविन्द शंकर के जीवन में विभिन्न घटनाएं घटती हैं उनका बड़ा लड़का बाहर नौकरी करता है । बीच का बेटा भवानी शंकर दूसरा अन्तर्जातीय विवाह करके परिवार से अपना संबंध तोड़ लेता है । तीसरा बेटा उमेश शंकर अति महत्वाकांक्षी और कैरिअरिस्ट किस्म का युवक है जो आई0ए0एस0 में आ जाता है परन्तु अपनी महात्वाकांक्षाओं के चलते नागर जी ने उसके जीवन की महत्वपूर्ण घटना का पर्यवसान असमय आत्महत्या के रूप में दिया है । एक बेटी वरुणा क्षय रोग से ग्रसित है परन्तु उसका प्रेम एक मुसलमान युवक से होता है जिससे वह गर्भवती भी हो जाती है । इस घटना से अरविन्द शंकर को बहुत चोट पहुंचती है । परन्तु अपनी मां के समझाने पर वह गर्भपात करवाने को राजी हो जाती है । इस घटना का पर्यवसान नागर जी ने समस्या से छुटकारा पाने के रूप में किया है । इस प्रकार नागर जी ने अरविन्द शंकर के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का पर्यवसान संघर्ष करते हुए समस्या सुलझाने के रूप में किया है ।

'सात घूँघट वाला मुखड़ा' में नागर जी ने बेगम समरू जैसे ऐतिहासिक चरित्र के जीवन में घटनाओं के विभिन्न उतार चढ़ाव दिखाए हैं । बेगम समरू को वशीर खां द्वारा उसकी इच्छा न होने के बावजूद सियासत के खेल में ढकेल दिया जाता है इसके बाद उसके जीवन में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं का पर्यवसान नागर जी ने उसकी गिरफ्तारी के रूप में किया है।

'एकदा नैमिषारण्ये' में नागर जी ने सोमाहुति इज्या, भारत, प्रज्ञा के माध्यम से विभिन्न घटनाओं के माध्यम से प्राचीन भारत की संस्कृति व गुप्त वंश का वर्णन किया है। सारे घटनाक्रमों को आगे बढ़ाते हुए समस्त घटनाक्रम का पर्यवसान नागर जी ने देशप्रेम की उच्च भावना व आदर्श "गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ते भारत भूमि भागे" कहकर किया है।

अमृत लाल नागर कृत 'मानस का हंस' एक श्रेष्ठ जीवन चरितात्मक उपन्यास है जिसमें नागर जी ने महाकवि तुलसीदास के जन्म की घटना से लेकर उनकी मृत्यु तक की एक–एक घटना को बड़ी सूक्ष्मता से चित्रित किया है। तुलसीदास के जन्म के बाद उनको घर से बाहर भिजवा देना , पार्वती बाई भिखारिन के साथ भीख माँगते हुए जीवन यापन करना ,पार्वती अम्मा की मृत्यु के बाद सूकर खेत के हनुमान मन्दिर पर बन्दरों के बीच जीवन यापन करना , वहीं पर बाबा नरहरि दास से भेंट , इसके बाद नर हरिदास द्वारा तुलसी को दीक्षा देना आदि घटनायें क्रम से आगे बढ़ती हैं। इसके बाद शेष सनातन द्वारा उच्च शिक्षा वहीं रहकर ग्रहण करते हैं। इसके बाद तुलसी के जीवन में एक घटना घटती है वह मोहिनीबाई के सम्पर्क में आकर उसके प्रति आकर्षित होते हैं परन्तु नागर जी ने इस घटनाक्रम का पर्यवसान मोहिनीबाई की माँ की फटकार से करवाकर तुलसी को गलत राह से रोक कर सच्चे मार्ग की ओर मोड़कर किया है। तुलसीदास को विभिन्न घटनाक्रमों से गुजरते हुए रत्नावली से विवाह के बंधन में भी बँधना पड़ता है। इसके बाद रत्नावली की फटकार सुनकर गृह त्याग तुलसी दास जी के जीवन की महत्वपूर्ण घटना है। इसके पश्चात तुलसीदास के जीवन

में विभिन्न घटनाएँ घटतीं हैं और इन घटनाओं का पर्यवसान नागर जी ने तुलसीदास को एक महाकवि के रूप में प्रतिष्ठापित करके किया है। रत्नावली के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का पर्यवसान नागर जी ने अन्तिम समय में तुलसीदास को उनके पास पहुँचाकर किया है।

'नाच्यौ बहुत गोपाल' निःसंदेह नागर जी की एक श्रेष्ठ कृति मानी जाती है। नागर जी ने इस उपन्यास में निम्न वर्ग की समस्याओं व छुआछूत की भावना , मेहतरों का जीवन आदि पर अपने विविध निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। निर्गुनियाँ एक ब्राह्मण लड़की है। उसकी माँ की मृत्यु के बाद उसका पालन पोषण अपने ननिहाल के संस्कारी माहौल में होता है। परन्तु नाना–नानी की मृत्यु के बाद उसे अपने पिता के साथ एक गन्दे वातावरण में रहना पड़ता है। उसके रखैल पिता की मालकिन का पुत्र उसके साथ बलात्कार करता है। इसके बाद मास्टर बंसत लाल , लाला मसुरिया दीन आदि उसके प्रेमी बन जाते हैं। धीरे–धीरे घटनाक्रम आगे बढ़ते हुए इस घटनाक्रम का पर्यवसान नागर जी निर्गुनियाँ का विवाह बूढ़े मसुरियादीन से करवा देते हैं। अपने बूढ़े पति से अंसतुष्ट निर्गुनियाँ कामाग्नि में अंधी होकर मेहतर मोहना के साथ भाग जाती है। यहाँ से फिर निर्गुनियाँ के जीवन में विविध घटनाक्रम घटित होते हैं और अन्त में मोहना की मामी के घर पहुँचने के बाद निर्गुनियाँ को वर्ण से ब्राह्मण संस्कारों की होने के बावजूद मार – मार कर मेहतरानी बना दिया जाता है। एक दिन जैक्सन के अड्डे पर डाकू वहीदा का आक्रमण होता है और मोहन भी डेविड की हत्या कर डाकू बन जाता है और यहीं से निर्गुनियाँ का जीवन बेहद संघर्षो और घटनाओं से भरा हुआ

व्यतीत होता है। इसके बाद बच्चों को पढ़ा लिखा कर उन्हें सम्मानित जीवन व्यतीत करने योग्य बना देती है। परन्तु अपने मन की व्यथा कथा व अपने जीवन के उतार –चढ़ाव बताकर निर्गुनियाँ का मन बेहद भारी हो जाता है। नागर जी ने इस संघर्षशील पात्रा के जीवन की अन्तिम घटना का पर्यवसान निर्गुनियाँ की आत्महत्या के रूप में किया है।

'खंजन –नयन' उपन्यास में नागर जी ने महाकवि सूरदास के जीवन –चरित का बड़ा ही सजीव व यथार्थ चित्रण किया है। इस उपन्यास में नागर जी ने सूरदास का जन्मांध होना , भाई बन्धुओं द्वारा ही भजन गाने पर ईर्ष्याभाव रखना , गृहत्याग , इसके बाद एक सन्यासी के सानिध्य में रहकर फलित ज्योतिष योग विद्या , रमल विद्या को सीखना , काव्य रचना का शौक के कारण गुरु का साथ छोड़ना इत्यादि घटनाक्रम धीरे –2 विकास को प्राप्त करते हैं। मथुरा जाते समय नाव में आक्रमण होने वाली घटना का पर्यवसान नागर जी ने सूरदास को बचाकर किया है। फिर कंतो के सम्पर्क में आए हुए सूर को अपनी काम–वासना पर बहुत नियंत्रण करना पड़ता है। इस घटना का पर्यवसान नागर जी ने सूर की दृढ़ इच्छा शक्ति व अपनी इन्द्रियों पर नियत्रंण के रूप में किया है।

विभिन्न घटनाओं से गुजरते हुये सूरदास अन्त में महाकवि कृष्ण भक्त सूरदास के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं। इस प्रकार नागर जी ने 'खंजन –नयन' में सूरदास के जीवन के विभिन्न घटनाक्रमों का अन्त में सुखद पर्यवसान किया है।

'बिखरे तिनके' उपन्यास में नागर जी युवा पीढ़ी के भटकाव की ओर चिन्तित दिखाई देते हैं। 'बिखरे तिनके' में जैसा कि इसके शीर्षक से ही प्रतीत होता है कि नागर जी ने लक्ष्य हीन युवा पीढी को ध्यान में रखकर इस विचलन और इसके साथ ही प्रतिरोध की सम्भावनाओं को टोहने का प्रयास किया है। "बिखरे तिनके उनका एक वैसा ही उपन्यास है जिसे कोई भी बड़ा लेखक अपनी महत्वपूर्ण कृतियों के बीच विभिन्न सांसारिक दबावों के बीच लिखता है। एक बड़े और व्यवस्थित परिवार की रसोई में वह धेलुए में बने पकवान जैसा है , जिसमें कुछ भी विशेष न होने पर भी उस रसोई की अपनी गन्ध और स्वाद सुरक्षित रहते हैं"[1]।

नागर जी ने इस उपन्यास में बेहिसाब घटनाओं को संगुफित किया है। छिद्दा डाकू का प्रसंग , स्वतंत्र कुमार और सरसुतिया के विवाह में बिल्लू दल की भूमिका , बबलू राठौर की सहायता इत्यादि घटनाक्रमों को नागर जी ने इस उपन्यास में स्थान दिया है। बिल्लू के जीवन में घटित होने वाली विविध घटनाओं का पर्यवसान उसकी राष्ट्रवादी सोच का पर्यवसान नागर जी ने सिर्फ फेरों की गुनाहगार श्यामा से विवाह कराके किया है।

'अग्निगर्भा' नागर जी की नारी के प्रति संवेदनशील दृष्टि का परिचायक है। इसमें नागर जी ने पढ़ी लिखी सीता के माध्यम से धन लोलुपुओं की क्षुद्रता का वर्णन किया है। एक प्रिंसीपल होने के बावजूद उसका पति रामेश्वर उसे सदैव दहेज के लिये प्रताड़ित करता है यहाँ तक कि उसे अपनी कमाई के पैसों पर भी अधिकार नहीं है।

---

[1] अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व और रचना संसार – मधुरेश – पृ. 103

उसे अपने भाई और पिता से भी मिलने नहीं दिया जाता है। अन्त में विभिन्न घटनाक्रम घटित होते –2 सीता को उसके दो वर्ष के बेटे अंशुमाली से भी मिलने नहीं दिया जाता है। सीता घर छोड़कर विभिन्न सताई हुई लड़कियों को साथ लेकर अत्याचार के विरुद्ध लड़ने को तैयार हो जाती है।तभी एक दिन अचानक एक घटना घटती है रामेश्वर सीता से प्राचार्या बनने के लिए कहता है परन्तु सीता मना कर देती है। रामेश्वर के द्वारा घर तक छोड़े जाने पर जैसे ही वह कार से उतरने वाली होती है एक व्यक्ति उसकी गोली मारकर हत्या कर देता है। और इस स्वार्थी समाज में सीता का संघर्ष अधूरा रह जाता है। इस प्रकार नागर जी ने सीता के जीवन में घटने वाली विभिन्न घटनाओं का पर्यवसान उसकी मृत्यु के रूप में किया है।

'करवट' उपन्यास में नागर जी ने वंशीधर टंडन उर्फ तनकुन के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का भिन्न–2 स्थितियों में पर्यवसान किया है। वंशीधर उर्दू फारसी के अच्छे जानकार होने के साथ–2 अंग्रेजी पर भी थोड़ी बहुत पकड़ रखते है। उनका विवाह बचपन में ही एक लड़की से हो जाता है। अंग्रेजों की संगति में उसके जीवन में अनेक घटनाएँ घटती हैं। यहाँ तक माल्कम की पत्नी नैन्सी से उसका प्रेम हो जाता है परन्तु संस्कारशील भारतीय की तरह वंशीधर के जीवन में घटने वाली इस घटना का पर्यवसान नागर जी ने अपनी पत्नी के प्रति प्रेम व दृढ़ चरित्रता दिखाकर किया है। इसी तरह नागर जी ने वंशीधर टंडन की पत्नी चम्पकलता के जीवन में घटने वाली विविध घटनाओं का पर्यवसान उनको साँप द्वारा काटने पर अकाल मृत्यु के रूप में किया है। इधर वंशीधर टंडन का बेटा देशदीपक डाक्टर बनकर परिवार व

समाज की सेवा करता है तथा एक अपहृत लड़की के साथ विवाह करके समाज की कुरीतियों का विरोध करता है। नव वर्ग पर आर्य समाज की भूमिका का भी असर पड़ता है। विभिन्न दकियानूसी विचार के लोगों के षड्यन्त्रों को खत्म करते हुये नागर जी ने अनेक घटनाक्रमों का पर्यवसान किया है। अन्त में नागर जी वंशीधर की गिल्टियों द्वारा मृत्यु दिखाकर उनके जीवन की घटनाओं का पर्यवसान कर देते हैं।

'पीढ़ियाँ' नागर जी का अन्तिम उपन्यास है जिसमें नागर जी ने करवट से आगे की कथा को आगे बढ़ाया है। इसमें नागर जी ने मुख्य रूप से राय बहादुर वंशीधर टंडन के पौत्र शहीद जयन्त टंडन की पीढ़ी को उपन्यास के अन्दर मुख्यमंत्री पुत्र सुमन्त टंडन के बेटे युधिष्ठर टंडन के द्वारा लिखे गए उपन्यास के माध्यम से व्यक्त किया है। जंयत टंडन जो कि स्वाधीनता संघर्ष के बलिदानी नायक थे परन्तु उनमें उनकी पीढ़ियों की चारित्रिक दृढ़ता के विपरीत कमजोरी उसी का खुलासा युधिष्ठिर एक –2 घटना की तह में जाकर पुराने लोगों से संस्मरण सुनकर करता है। अपनी युवावस्था में अनारो के प्रति आकर्षण, गर्भवती जानकर कानून की पढ़ाई के लिए इंग्लैण्ड चले जाना, पत्नी मन्नो देवी के साथ सुखी वैवाहिक जीवन बिताते हुए भी मनोरमा देवी इलाहाबाद से बाकायदा संबध रखना , इंग्लैण्ड में भी विभिन्न स्त्रियों से सम्पर्क रखना आदि ऐसी विभिन्न घटनायें जिनका कि नागर जी ने बड़े ही सूझबूझ से पर्यवसान किया है। जयंत टंडन को विभिन्न घटनाक्रमों से गुजारते हुये नागर जी ने उनका पर्यवसान शहीद जंयत टंडन के रूप में किया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नागर जी ने अपने उपन्यासों में घटनाक्रमों का पर्यवसान भिन्न –2 स्थितियों में किया है। कुछ दुःखद है , कुछ सुखद हैं तो कुछ संदेशात्मक और कुछ विचारात्मक भी है।

अमृत लाल नागर के उपन्यासों की रचना-''प्रविधि'' की उपलब्ध संरचना

अमृत लाल नागर के उपन्यासों की रचना "प्रविधि" की उपलब्ध संरचना

उपन्यास साहित्य की आधुनिक विधा है। यह कलात्मक विधा के रूप में प्रतिष्ठित है इसका प्रविधि पक्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रविधि के बिना कला अधूरी होती है। हमारे यहाँ नानाविध विधियों रीतियों और प्रक्रियाओंके समुच्चय को शिल्प--विधि माना गया है।[1] उपन्यासकार के मस्तिष्क में समाज की सच्चाइयाँ, मानव की स्थिति और परिवेश के यथार्थ संग्रहीत होते रहते हैं इसके वर्णन हेतु उसके मन में भावों का उद्वेलन होता है वह उन भावों को खुले चित्रपट पर उतारना चाहता है। जिस प्रकिया से वह उसे उतारता है वही उसका शिल्प विधान है।

शिल्प – विधान की शक्तिमत्ता, निर्मलता कथाकार की प्रतिभा और उसकी क्षमता पर निर्भर है। एक मूर्तिकार का जैसा शिल्प होगा वैसा ही निखार उसकी मूर्ति में आयेगा उपन्यास शिल्प भी अपने आप में किसी कृति को अभिव्यक्ति देने का सर्वोत्तम साधन है। प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी उपन्यास धारा के महान् साहित्यकार अमृत लाल नागर का व्यक्तित्व अपने ही आलोक से आलोकित है। उन्होंने अपनी कथाओं को कमवार कुशलता से गुम्फित किया है।

---

[1] *इस प्रकार साहित्यकार अपने सृजन की प्रारंभिक अवस्था से लेकर इसे कलात्मक रूप प्रदान करने की अंतिम अवस्था तक जिन नाना प्रकार की विधियों, रीतियों एवं प्रक्रियाओं को काम में लाता है वह सभी रीतियाँ और विधियाँ शिल्प विधि के नाम से पुकारी जातीं हैं* – डा0 (श्रीमती) ओम शुक्ल (हिन्दी उपन्यास की शिल्प विधि का विकास) पृ. 26

नागर जी ने मानव जीवन के व्यापक धरातल को अपनी कृतियों में यथार्थ रूप में उतारकर जनमानस को सचेत करने का सफल प्रयत्न किया है। उनके उपन्यासों की सुरभि से हिन्दी साहित्य निधि आकंठ सुवासित ही नहीं अपितु प्रेरणा स्त्रोत भी बनी हुई है।

हमने अपने इस शोध ग्रन्थ में नागर जी की रचना प्रविधि को यथाशक्ति अन्वेषित कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। आन्तरिक अवयवों के महत्व को प्रतिपादित करते हुए सर्वप्रथम नागर जी के अनुभूति जगत् की ओर हमने ध्यानाकर्षित किया है। तदुपरान्त उनके उपन्यासों के घटना अनुक्रम को बताने का प्रयत्न किया है। इस घटना प्रधान जीवन में अनवरत् घटनाएँ घटित होती रहतीं है कुछ घटनाएँ सामान्य होतीं है और कुछ विशेष घटनाएँ होती हैं। घटित होने वाली घटनाएँ जीवन के सुख–दुःख के चिन्हों को चिन्हित करतीं हैं। सामान्य घटना कभी – कभी विशेष रूप धारण कर लेती है और उसका जीवन में महत्व बढ़ जाता है। वहीं घटित होने वाली विशेष घटना भी सामान्य प्रतीत होती है। किसी भी घटना का बाह्य जगत् पर पड़ने वाला प्रभाव तथा मानव के आसपास का वातावरण सामान्य को विशिष्ट तथा विशिष्ट को सामान्य बना देता है।

नागर जी के उपन्यासों में हमने ऐसी ही घटनाओं को उठाते हुए उनके घटना अनुक्रम को निर्देशित करते हुए उनसे प्रभावित होने वाले मानस–हृदय की ओर संकेत किया और यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि प्रत्येक घटना मनुष्य को एक नई दिशा प्रदान करती है। मायावरण से आच्छादित होने के कारण मानव की आँखों पर

अज्ञान का पर्दा पड़ा रहता है जिससे वह घटित होने वाली घटनाओं को नजर अंदाज कर देता है यदि वह प्रत्येक घटना पर ध्यान देते हुए उसे समझने का प्रयास करे तो निश्चय ही उसका जीवन सफलता की चरम–सीमा को प्राप्त कर ले। नागर जी के उपन्यासों की ऐसी घटनाएँ हमें एक नई दिशा प्रदान करतीं हैं। नागर जी ने अपने उपन्यासों में घटनाओं का वर्णन करते समय एक–एक क्रम से घटनाओं को रखा है कि अन्त तक सारी घटनाएँ एक दूसरे से मिली हुई प्रतीत होतीं हैं। नागर जी के कथा संगठन के कौशल का अध्ययन करते समय हमने इस बात का वर्णन किया है कि नागर जी ने कथा को सरस तथा रुचिपूर्ण बनाने हेतु उसके विकास क्रम में आवेग और स्थैर्य का संश्लेषणात्मक चित्रण किया है। नागर जी अपने वर्णनों में कहीं राजनैतिक छल छद्म कहीं स्वार्थपरता, कहीं लोभ, लिप्सा, कहीं नारी पर अत्याचार तो कहीं भटकती हुई युवा पीढ़ी को दिखाते हुए बेहद आवेग में आ जाते हैं परन्तु फिर धीरे – धीरे उसमें रोचकता रखते हुए स्थिरता लाकर अपने कथा–प्रवाह को आगे बढ़ाते हैं। श्री प्रकाश चन्द्र मिश्र ने हिन्दी कथा–साहित्य में अमृत लाल नागर का स्थान निर्धारित करते हुए लिखा है – "प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कथा साहित्य के अज्ञेय, जैनेन्द्र, इलाचन्द्र, जोशी, यशपाल, नागार्जुन और रेणु जैसे कथाकारों के साथ ही नागर जी का स्थान भी हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण है। 'बूँद और समुद्र' तथा "अमृत और विष" जैसी उनकी कृतियाँ हिन्दी कथा साहित्य को तथा उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति देने में सक्षम रहीं हैं। इसे हिन्दी कथा – साहित्य के गौरव तथा नागर जी की एकनिष्ठ साहित्य साधना का प्रमाण माना जा सकता है।"[1]

---

[1] अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य -- प्रकाश चन्द्र मिश्र – पृ. 23

नागर जी के उपन्यासों में कथा का संगठन इस ढंग से किया गया है कि उसमें नाटकीयता, रोचकता, सरसता, सत्यता, यथार्थ, कल्पना सभी का आकर्षक सम्मिश्रण है। उनके कथा– संगठन में कहीं भी बिखराव या बनावटीपन देखने को नहीं मिलता। "किसी उपन्यास की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि कहानी कहने वाले ने कहानी ठीक–ठीक सुनायी है या नहीं अनावश्यक बातों को तूल तो नहीं दिया है। x x x x x सौ बात की एक बात वह शुरू से अन्त तक सुनने वाले की उत्सुकता जाग्रत रखने में नाकामयाब तो नहीं रहा।"[1]

सत्यता का संबंध यथार्थ जीवन के अनुभूत तथ्यों से है। रोचकता एक ऐसा गुण है जो पाठक की संवेदनशीलता को आदि से अंत तक बनाये रखता है। नाटकीयता से तात्पर्य कथावस्तु के विकास, उत्कर्ष, चरम–स्थिति, समापन आदि के सम्यक् नाटकीय विधान से हैं।

कथासंगठन संबंधी उपर्युक्त सभी तत्वों की कुशल नियोजना प्रेमचन्द परम्परा के उपन्यासकारों की रचनाओं में सर्वथा नवीन सन्दर्भों एवं मौलिक तकनीक के साथ प्रस्तुत हुई है। नागर जी प्रेमचन्द परम्परा के यशस्वी कथाकार हैं।

कथा–विकास के बिन्दुओं का अध्ययन करते हुए घटनात्मक गति का विवरण दिया गया है। अपने आस–पास के वातावरण व हमारे दैनिक जीवन में विभिन्न घटनाएँ घटित होतीं हैं नागर जी ने अपने उपन्यासों में विभिन्न घटनाओं को गति प्रदान करते हुए अपने कथानक को आगे बढ़ाया है। नागर जी ने अपना समस्त साहित्य बेहद

[1] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी – साहित्य का साथी पृ. 82

आत्मविश्वास के साथ लिखा है। नागर जी के साहित्य में कहीं भी आत्मविश्वास का अभाव देखने को नहीं मिलता। नागर जी के अदम्य आत्मविश्वास को रेखांकित करते हुए विष्णु प्रभाकर ने कहा है – "कितना अदम्य आत्मविश्वास है इस पत्र के शब्द शब्द में! उनका समूचा साहित्य इस विश्वास का प्रमाण है। किसी भी विधा में लिखा हो, उनकी मूल चिन्ता सदा व्यक्ति और समाज को लेकर रही है। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की है – चाहे इतिहास में गया हूँ, चाहे आज के समाज में रहा हूँ व्यक्ति और समाज का नाता किसी भी हालत में छोड़ा नहीं है।" इतिहास व्यक्ति और समाज के जटिल संबंधों के द्वन्द्व से विकसित होता है। इन संबंधों के सूत्रों को पकड़कर नागर जी जिस कुशलता से कथा का ताना–बाना बुनते हैं, वह उनकी सूक्ष्म और सहज दृष्टि का परिणाम है।[1]

नागर जी की चरित्र–सृष्टि तो अपूर्व है उनके पात्र अपनी जीवंतता के कारण अपने मार्ग स्वयं बनाते हैं। उनके पात्र हमें अपने आसपास के वातावरण में चलते फिरते दिखाई देते है। कथानक की अभिव्यक्ति पात्रों द्वारा ही होती है। कोई भी कथा अथवा घटना व्यक्तियों की क्रियात्मकता के बिना अस्तित्वहीन एवं निर्जीव है। नागर जी के पात्र जीवित पात्र हैं उनमें रक्त की लालिमा है, जीवन की सक्रियता है और इसीलिए वे जिन्दगी की लड़ाई में आगे बढ़कर प्रतिकूलताओं को पूरे वेग के साथ पीछे ढकेल देने में सक्षम हैं। नागर जी के उपन्यासों में जितने प्रकार के पात्र हैं, उतने प्रकार के पात्र हिन्दी के किसी कथाकार ने नहीं दिए हैं। नागर जी की वर्णनात्मक

---

[1] साप्ताहिक हिन्दुस्तान – 15 अप्रैल सन् 1990 – पृ. 20

कुशलता तो देखते ही बनती है। कथा विकासके विश्लेषणात्मक चित्र को इस ढ़ंग से प्रस्तुत किया गया है कि नागर जी के उपन्यासों में कला व शिल्प का पूर्ण निदर्शन होता है। उन्होंने अपनी कथा के प्रवाह में विभिन्न पात्रों की मनः स्थिति का इतनी बारीकी व कुशल ढंग से चित्र प्रस्तुत किया है कि उनके उपन्यासों को पढ़ते समय पाठक का ध्यान उपन्यास से एक पल भी विरत होकर अन्यत्र जाने का प्रयत्न नहीं करता है। साथ ही उससे अपने जीवन में भी सचेत रहकर अवधानपूर्वक कदम उठाते हुए दुःखावधि में निमग्न होते हुए भी प्रसन्नतापूर्वक बिना लज्जावनत हुए वेदनार्णव पार कर लेता है।

'बूँद और समुद्र' उपन्यास में नागर जी ने 'ताई' के चरित्र को केन्द्र में रखकर इस विधि से प्रस्तुत किया है कि पाठक उन्हें अपने स्मृति–पटल से मुक्त नहीं कर पाता है। ताई का चरित्र हमें यह शिक्षा देता है कि नानाविध अन्तर्विरोधों के मध्य भी मानवीय गुणों का त्याग न करें।

नागर जी एक संवेदनशील उपन्यासकार ही नहीं बल्कि एक कोमल हृदय मानव भी हैं। नागर जी मुख्य रूप से मानव जीवन के चितेरे हैं। आर्थिक अभाव, दो पीढ़ियों का टकराव, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर वैयक्तिक संवेदनाओं का स्पर्श, नारी की विवशता और विद्रोह एवं उसकी गरिमा की छुवन, आधुनिक जीवन का असन्तुलन, युवा पीढ़ी का भटकाव आदि स्थितियाँ उनके उपन्यसों का आधार बनीं हैं। नागर जी ने वर्णन करते हुए पाठक की रोचकता को ध्यान में रखते हुए मानवीय अनुभूतियों का इतना स्वाभाविक एवं सजीव चित्रण किया है कि पाठक पढ़ते – पढ़ते संवेदना की

चरम–स्थिति तक पहुँच जाता है। नागर जी के उपन्यासों में संवेदना के चरम–बिन्दु अध्ययन करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि नागर जी ने अपने उपन्यासों में संवेदना को जिन बिन्दुओं के माध्यम से चरम–स्थिति तक पहुँचाया है उन सभी का स्पष्ट रूप से चित्रण किया गया है। महिपाल द्वारा की जाने वाली आत्म–हत्या, अरविन्द शंकर के आई.ए.एस. बेटे उमेश शंकर की आत्महत्या, कुदसिया बेगम द्वारा की जाने वाली आत्म–हत्या, भुलनी द्वारा की जाने वाली आत्महत्या, निर्गुनियाँ द्वारा स्लीपिंग पिल्स खाकर की जाने वाली आत्महत्या, सीता की हत्या, उसके ससुराल वालों द्वारा किया जाने वाला आर्थिक शारीरिक व मानसिक शोषण, चम्पक लता की साँप द्वारा काटने पर मृत्यु, भूखों मरते लोगों के वीभत्स दृश्य आदि अनेक बिन्दु हैं जो नागर जी के उपन्यासों के चरम–बिन्दु हैं।

नागर जी में संवेदना कूट–कूट कर भरी है। उन्होंने साहित्य को स्वयं जिया है, उसे अनुभव किया है। उसका साहित्य कल्पनाश्रित नहीं है अपितु यथार्थ पर आधारित है। जीवन में होने वाली प्रत्येक हलचल को उन्होंने अनुभव किया है और ऐसा अनुभव एक संवेदनशील रचनाकार ही कर सकता है। नागर जी का साहित्य मानवीय संवेदनाओं से ओतप्रोत है।नागर जी की एवं उनके साहित्य की संवेदनशीलता के संदर्भ में डॉ. सुदेश बत्रा ने उचित ही लिखा है –

"नागर जी एक मानवता प्रिय, जीवन प्रकाश से भरपूर आशाओं में विश्वास रखने वाले संवेदनशील मानव हैं। उन्होंने जीवन को जिया है, भोगा है, और पल – पल के चुने हुए कणों को लेखनीबद्ध किया हैं। उनका साहित्य बालू पर खींची गई

लकीरें नहीं वरन् चिरन्तन मानवीय फलक पर गहरी रेखाओं से अंकित यथार्थ जीवन के पदचिन्ह हैं।"[1]

नागर जी के उपन्यासों मे घटनाओं की भरमार है। प्रत्येक मनुष्य के जीवन में प्रतिपल अनेक घटनाएँ घटित होतीं हैं। नागर जी ने घटना–चक्र के माध्यम से विभिन्न घटनाओं के क्षैतिज प्रवाह का वर्णन किया है। जिसमें कि विभिन्न घटनाएँ एक दूसरे की पूरक होकर भी अपना पृथक अस्तित्व रखतीं हैं। नगर जी ने अपने उपन्यासों में विभिन्न कथा धाराओं को मिलाकर गंगा जमुनी संगम बना दिया हैं। विभिन्न धाराओं की अपनी अलग–अलग धारा है। अपना अलग–अलग उद्देश्य है परन्तु आगे चलकर वही एक दूसरे में मिलकर उपन्यास रूपी महासागर के उद्देश्य को सम्पन्न करतीं हैं। नागर जी ने अपने आसपास के वातावरण में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं को कथा धारा बनाकर उनका परस्पर समीकरण बनाया है। इसीलिए उनके उपन्यासों के कथानक में कहीं भी बिखराव नहीं आने पाया है।

घटना के प्रवाह में नागर जी ने स्थितियों के चक्रवात बनाये हैं। कभी–कभी एक समय में एक व्यक्ति के जीवन में अनेक घटनाएँ, अनेक स्थितियाँ इस प्रकार से आतीं हैं कि व्यक्ति का जीवन उन स्थितियों के चक्रवात में उलझकर रह जाता है। उसके जीवन की दिशा बदल जाती है उसके पूर्व नियोजित सभी कार्य व उद्देश्य बदल जाते हैं और वह किंकुर्तव्य विमूढ़ होकर रह जाता हैं। घटना–चक्र का प्रवाह व्यक्ति के मस्तिष्क को इतना अधिक उद्वेलित कर देता है कि वह अपने जीवन से निराश हो

[1] अमृत लाल नागर – व्यक्तित्व कृतित्व एवं सिद्धान्त – डा. सुदेश बत्रा पृ. 53

जाता है। नागर जी के उपन्यासों में देश–प्रेम का संगठन बड़ी ही सूझबूझ व चतुराई के साथ किया गया है। नागर जी को अपने देश, रहन–सहन, परिवेश, अपनी संस्कृति, वस्त्राभूषण सभी से विशेष प्रेम था इसीलिए उनके उपन्यासों में देश प्रेम के चित्र जगह–जगह भरे पड़े हैं। नागर जी ने देश तत्व, राष्ट्रीयता, राष्ट्र प्रेम व राष्ट्रवाद जैसे मुद्दों को अपने उपन्यास जगत् में यथेष्ट स्थान दिया है। नागर जी के पात्र राष्ट्र विरोधी नहीं हैं। वे उच्छ्रंखल हो सकते हैं, अनाचार, पापाचार में लिप्त तो हो सकते हैं किन्तु उनमें राष्ट्र प्रेम का गुण अवश्य है। नागर जी के राष्ट्र पेम का जज्बा हिन्दुस्तानियों में नहीं अपितु अन्य धर्मावलम्बियों में भी हैं। भारतीय ईसाई समाज में भी राष्ट्रीयता की भावना विद्यमान हैं। 'बूँद और समुद्र' उपन्यास में ईसाइयों के राष्ट्रप्रेम का चित्रण है – "ईसाई समाज–घोर काला, खालिस भारतीय ईसाई समाज–उस जमाने में अपने को अंग्रेज जाति का खास मौसेरा भाई समझता था। यह समझ, यह अकड़ उस हालत में थी जबकि अंगरेज, अंगरेज ही क्या मामूली किरंटे भी इन्हें मुँह नहीं लगाते थे। राष्ट्रीय आन्दोलनों ने बीसवीं सदी के आरंभ से ही इस भारतवासी ईसाई समाज के अंदर भी राष्ट्रीयता की लहर दौड़ा दी थी।"[1] आज की बदली हुई देश की परिस्थिति को देखकर नागर जी के हृदय में असीम वेदना उठती है। अरविन्द शंकर कहते हैं – "एक ओर जहाँ मुझे अपना आज का भारत पहले से कहीं अधिक उन्नत और वैभवशाली लगता है, वहीं मुझे बचपन और जवानी के दिनों से यह देश कहीं अधिक खोया हुआ निष्प्राण और निकम्मा लगता है।"[2]

---

[1] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर – पृ. 463
[2] अमृत और विष – अमृत लाल नागर – पृ. 96

नागर जी के उपन्यासों में राष्ट्र व देश प्रेम की भावना प्रत्येक जगह पर देखने को मिल जाती है।

नागर जी के घटनाक्रम के विकास में काल–तत्व का अध्ययन करते समय काल तत्व का विशेष ध्यान रखा गया है। नागर जी ने वर्तमान में अतीत का स्मरण करते हुए वर्तमान को अतीत से श्रेष्ठ बताया है। 'सेठ बाँकेमल' नामक पात्र के माध्यम से नागर जी ने अतीत के संस्मरणों को सुनवाया है। 'सेठ बाँकेमल' में नागर जी ने संकलन त्रय का सुन्दर निर्वाह किया है। यह हास्य व्यंग्य प्रधान उपन्यास है। इस उपन्यास में नागर जी ने सेठ बाँकेमल के किस्सों और संस्मरणों के माध्यम से उनकी चरित्रगत विशेषताएं, उनके जमाने के रीति–रिवाज और अभिरूचियों का वर्णन करते हुए वर्तमान में अतीत का स्मरण किया है। नागर जी ने घटनाओं का वर्णन करते समय उनकी परस्पर काल स्थिति का विशेष ध्यान रख है। नागर जी के उपन्यासों में 'काल साकार रूप से मूर्तिमान हो उठा है। जिस काल का नागर जी ने अपने उपन्यासों में वर्णन किया है वह साकार से जीवंत हो उठा है। चाहे वह 'महाकाल' उपन्यास की भूख की भीषणता हो या 'शतरंज के मोहरे' का ऐतिहासिक काल हो। 'सुहाग के नुपूर' का दक्षिण भारत का काल हो या फिर 'खंजन नयन' और 'मानस का हंस' में सूरदास और तुलसीदास के जीवन में काल के महत्व को दर्शाया हो। काल का व्यक्ति के जीवन में विशेष महत्व होता है यदि समय उसका साथ दे तो असंभव को भी मनुष्य संभव कर सकता है। उस काल का वर्णन करते समय नागर जी वातावरण को भी सजीव रूप से उपस्थित कर देते हैं – "कटी फटी पतंगों, मकड़ी के जालों, घोसलों, चिड़ियों,

गिलहरियों और पीपल के दानों से लदा अनगिनत इन्सानों के चंचल मन समूह सा हरहराता हुआ घना पीपल कई सदियों से मुहल्ले का साथी है।"[1]

नागर जी के उपन्यासों में घटनाक्रम का पर्यवसान का अध्ययन करते समय पर्यवसान की विभिन्न स्थितियों का विवेचन किया गया है। कोई भी साहित्यकार अपने जीवन में होने वाली या समाज और देश में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं से अपने आपको अलग कर नहीं सकता वह उन्हीं परिस्थितियों से प्रेरणा लेकर अपनी रचना का निर्माण करता है और विभिन्न स्थितियों में अपने घटनाक्रमों का पर्यवसान करता है। नागर जी के सभी उपन्यासों की कथावस्तु मौलिकता और यथार्थ के निकष पर खरी उतरती है। प्रेमचन्द की यथार्थवादी परम्परा के उपन्यासकारों में विशेषतः मध्यवर्गीय समाज का चित्रण करने वाले उपन्यासकारों में अमृतलाल नागर का नाम प्रमुख है। एक ओर जहाँ प्रेमचन्द ने ग्रामीण मध्यवर्गीय जीवन को अपनी रचनाओं का आधार बनाया है तो नागर जी ने शहर व नगर के मध्यवर्गीय जीवन को स्थान दिया है। इन दोनों उपन्यासों की तुलना करते हुए आनन्द प्रकाश जी लिखते हैं—

"हिन्दी में मध्यवर्गीय समाज का नागर जी जैसा सशक्त कथाकार मुंशी प्रेमचन्द को छोड़कर दूसरा कोई नहीं हुआ। प्रेमचन्द से इनकी तुलना करने पर हम देखते हैं कि प्रेमचन्द जी ग्रामीण मध्यवर्ग को चित्रित करने वाले कथा शिल्पी होने के कारण अलग और विशिष्ट हैं। किन्तु नागर जी में निरीक्षण की सूक्ष्मता और चित्रांकन की बारीकी प्रेमचंद की अपेक्षा अधिक हैं। नागर जी के उपन्यासों में जिन्दगी का कैनवास

---

[1] बूँद और समुद्र – अमृत लाल नागर – पृ039

भी अपेक्षाकृत व्यापक है। इस दृष्टि से यह मानने में किसी को तनिक भी संकोच नहीं होना चाहिए कि अमृतलाल नागर ने हिन्दी उपन्यास जगत् में प्रेमचन्द परम्परा को आगे बढ़ाने का सराहनीय कार्य सम्पन्न किया है। नगरीय जीवन के कथाकार होने के कारण वे प्रेमचन्द के पूरक भी हैं इन दोनों उपन्यासकारों की कथा–यात्रा में एक खास अंतर यह भी है कि प्रेमचन्द आदर्श से यथार्थ की ओर जाते हैं जबकि नागर जी निरंतर यथार्थ से आदर्श की ओर बढ़ते हैं।''[1]

नागर जी ने अपने उपन्यासों में घटनाक्रम का पर्यवसान विभिन्न स्थितियों में किया है। कहीं तो उनके उपन्यासों में घटना क्रम का पर्यवसान भाईचारे व देशप्रेम की भावना का प्रसार करते हुए किया गया है। 'महाकाल' में मानवता का संदेश देते हुए पर्यवसान किया है, 'सुहाग के नूपुर' में सतीत्व की विजय को दर्शाते हुए घटनाक्रम का पर्यवसान किया है, 'बूँद और समुद्र' में समाज में प्रत्येक व्यक्ति का महत्व दर्शाते हुए समभाव का सन्देश देते हुए अपने घटनाक्रमों का पर्यवसान किया है। नागर जी ने 'अग्निगर्भा में दहेज जैसी समस्या से जूझती हुई नारी के जीवन में घटने वाले विभिन्न घटनाक्रमों का पर्यवसान उसकी हत्या के रूप में किया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आस्था, लगन और कर्मनिष्ठा ने नागर जी को कथा साहित्य जगत् में शीर्ष स्थान पर बैठा दिया। हमारा विष–अमृतमय यथार्थ जीवन उनके साहित्य में सजीव हो उठा है। हेमिंग्वे की कार्यनिष्ठा, निराला की दृढ़ता, शरत्बाबू की संवेदनशीलता और प्रेमचन्द की मानवतावादी जीवन दृष्टि के समन्वित

---

[1] अमृत लाल नागर के उपन्यास – आनन्द प्रकाश त्रिपाठी – पृ0 313 – 314

तत्वों से संघटित नागर जी का साहित्य अप्रतिम और हर किसी के लिए स्पृहणीय है। डा0 राम विलास शर्मा ने नागर जी के विषय में प्रारम्भ में ही लिखा है – हाईस्कूल पास पंडित अमृतलाल नागर को जिन्दगी के विश्वविद्यालय से सब डिग्रियाँ मिल चुकीं हैं। किंग लियर की तरह परिस्थितियों ने मरम्मत करके उनको नख–शिखा संवार दिया है। अब न एक आँच की कसर है न दो की, वे खूब तप चुके हैं और हिन्दी की सेवा करने के लिए पूर्ण योग्यता प्राप्त हैं।"[1]

हिन्दी साहित्य में नागर जी का स्थान अति विशिष्ट हैं। भारतीय अस्मिता–समाज–संस्कृति–इतिहास–पुरातत्व की विविध विधियों में साधिकार विचरण करने वाला उनका कथाकार हिन्दी साहित्य का अप्रतिम रचनाकार है। वे अपने कथा–रस में अद्वितीय है। उनकी यह विशेषता चिरस्मरणीय है। इस संदर्भ में डॉ. विश्वनाथ प्रसाद का यह कथन अत्यधिक मूल्यवान है – "नागर जी अपने उपन्यासों के कथा–रस के कारण निरन्तर याद किये जायेंगे। किस्सागोई में वे प्रेमचन्द से भी आगे हैं। जैनेन्द्र से अधिक व्यापकता और सरसता, यशपाल से अधिक खुलापन और विश्लेषण की क्षमता, भगवतीचरण वर्मा से अधिक विस्तार, सरसता तथा शैली का आकर्षकण, अज्ञेय से अधिक जीवन – स्थितियों का चित्रण और मूल्यान्वेषण तथा हजारी प्रसाद द्विवेदी से अधिक यथार्थ की दृष्टि उनमें दिखाई पड़ती है।"[2]

नागर जी ने अपने समकालीन उपन्यासकारों से अपना एक अलग विशेष स्थान बनाया हैं आनन्द प्रकाश त्रिपाठी ने अन्य उपन्यासकारों से नागर जी की तुलना करते

---

[1] नीर – क्षीर – अमृतलाल नागर अंक -- पृ035

[2] आज (दैनिक समाचार पत्र) 18 मार्च 1990 का विशेष अंक पृ. – 1

हुए लिखा है – "इलाचन्द्र जोशी फ्रायडवादी दृष्टिकोण से प्रेरित होने के कारण संवेदना को उसकी सहजता के साथ अभिव्यक्ति प्रदान करने में सफल हो जाते हैं। जीवनगत प्रश्नों के प्रति भगवतीचरण वर्मा का दृष्टिकोण व्यक्तिवादी ढंग का हैं। जैनेन्द्र का कथा–साहित्य उनकी दर्शन और मनोविज्ञान निष्ठा के कारण एक प्रकार की रहस्यात्मकता से ग्रस्त हो गया है और उसमें सहज मानवीयता का अभाव दृष्टिगत होता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के सांस्कृतिक उपन्यास समकालीन जीवन की गुत्थियों को नहीं सुलझाते। जबकि अमृत लाल नागर अपने सामाजिक उपन्यासों में जिन्दगी के महत्वपूर्ण प्रश्नों को संवेदना के स्तर पर तो उभाड़ते ही हैं, संस्कृति उपन्यासों में भी वे समकालीन जीवन से सीधे जुड़ते हैं। शिल्प की दृष्टि से नागर जी किन्हीं बिन्दुओं पर प्रेमचन्द, इलाचन्द्र, जोशी, जैनेन्द्र और भगवतीचरण वर्मा से न्यून पड़ सकते हैं किन्तु वहाँ भी कहानी कहने की कला और भाषा के विविध स्तरीय प्रयोगों के नाते वेजोड़ है। नागर जी में वस्तु और शिल्प का मणिकांचन संयोग हुआ है।"[1]

नागर जी एक सम्पूर्ण रचनाकार हैं। साहित्य की हर विधा में उन्होंने सृजन किया है। जीवन के गहनतम अनुभवों को अपनी रचनाओं में मूर्तरूप प्रदान किया है। जीवन के विभिन्न धरातलों को अपनी कथावस्तु का आधार बनाकर चुना है। उनका व्यक्तित्व अद्वितीय एवं निराला है। नागर जी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को परिभाषित करती हुई डॉ. सत्यपाल चुघ की यह टिप्पणी दृष्टव्य है – "जीवन संग्राम के जीवन्त योद्धा, उदार अलमस्त मानव, रूढ़िमुक्त, शैव, आस्तिक, घुमक्कड़, बहुपठित, बहुबोली, पारखी,

[1] अमृत लाल नागर के उपन्यास – आनन्द प्रकाश त्रिपाठी – पृ. 314–315

बहुभाषाविज्ञ, जागरुक, इतिहासज्ञ, पुराण प्रेमी, पूर्वाग्रह मुक्त, प्रगतिशील, विचारक, अनुसंधित्सु, क्षेत्रीय शोधकर्ता, योग्य अनुवादक, सुधीसम्पादक, कुशल अभिनेता, सफल रंगमंच, निर्देशक, प्रवीण सिनेरियो, लेखक, अपूर्व शैलीकार, बाल साहित्य प्रणेता और असंख्य लेखो –निबन्धों, संस्मरणों, रेडियोनाटकों, कहानियों तथा उपन्यासों के रचयिता सब मिलाकर जो व्यक्ति बनता है उसका नाम है – अमृत लाल नागर"[1]

डा. राम विलास शर्मा नागर जी को बीसवीं सदी का एक उत्कृष्ट गद्य शिल्पी मानते हुए लिखते है –

"निःसंदेह नागर जी उपन्यासकार के रूप में याद किये जायेंगे। मेरे लिए वह बीसवीं सदी के बहुत बड़े गद्य–शिल्पी हैं। मानक और गैर मानक दोनों तरह की हिन्दी की शक्ति उन्होंने उद्घाटित की है।"[2]

हिन्दी साहित्याकाश के दैदीप्यमान उपन्यासकार नागर जी के विषय में विद्वद्वरेण्यों के कथन अक्षरशः सत्य हैं उनके उपन्यासों की प्रविधि सर्वोत्कृष्ट तथा उपन्यासों को चार चाँद लगाने वाली है। जिस ढंग से उन्होंने कल्पना का सहारा लेते हुए अपने भावोंको परिष्कृत और परिमार्जित करते हुए प्रस्तुत किया वह प्रशंसनीय है। उनकी शैली ने हिन्दी साहित्य के लिए अद्वितीय मार्ग प्रशस्त किया हैं। नागर जी के शिल्प–विधान की कलात्मकता को इस शोध–प्रबन्ध के माध्यम से प्रकाश में लाने का एक लघु प्रयास किया है। नागर जी जैसे कुशल शिल्पी के उपन्यासों में 'वस्तु' के साथ–साथ 'शिल्प' पर भी बरबस ही दृष्टि चली जाती है। इस अनूठे शिल्पी के कला

---

[1] आस्था के प्रहरी – डॉ0 सत्यपाल चुघ – पृ. 1

[2] अमृत लाल नागर रचनावली की भूमिका से पृ. 47

सागर में डुबकी लगाकर मैने भी दो चार मुक्ता चुनने का प्रयत्न किया हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे इस शोध प्रबंध से हिन्दी अनुसंधान जगत् में शिल्प पर किये गए अध्ययन में एक छोटी सी कड़ी और जुड़ेगी जो आगे नागर जी के शिल्प पर कार्य करने वाले शोधार्थियों के लिए सहायक होगी।

सन्दर्भ - ग्रन्थ

पत्र एवं पत्रिकाएं

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

विवेच्य उपन्यास

1. महाकाल — अमृत लाल नागर 1947
2. सेठ बाँकेमल — अमृत लाल नागर 1955
3. बूँद और समुद्र — अमृत लाल नागर 1956
4. शतरंज के मोहरे — अमृत लाल नागर 1958
5. सुहाग के नूपुर — अमृत लाल नागर 1960
6. अमृत और विष — अमृत लाल नागर 1966
7. सात घूँघट वाला मुखड़ा — अमृत लाल नागर 1968
8. एकदा नैमिषारण्ये — अमृत लाल नागर 1972
9. मानस का हंस — अमृत लाल नागर 1973
10. नाच्यौ बहुत गोपाल — अमृत लाल नागर 1978
11. खंजन—नयन — अमृत लाल नागर 1981
12. बिखरे तिनके — अमृत लाल नागर 1982
13. अग्निगर्भा — अमृत लाल नागर 1983
14. करवट — अमृत लाल नागर 1985
15. पीढ़ियाँ — अमृत लाल नागर 1990

अन्य ग्रन्थ

1. कुछ विचार — प्रेमचन्द
2. साहित्यालोचन — श्याम सुन्दर दास
3. हिन्दी उपन्यास साहित्य — बाबू बृजरत्न दास
4. काव्य के रूप — गुलाब राय
5. हिन्दी साहित्य कोष — नवल जी
6. हिन्दी विश्व कोष — सं० धीरेन्द्र वर्मा
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास — रामचन्द्र शुक्ल
8. बंग साहित्य उपन्यासेर धारा — श्री कुमार बन्द्योपाध्याय
9. हिन्दी गद्य साहित्य — शिवदान सिंह चौहान
10. श्री निवास ग्रन्थावली — सं0 डा0 श्रीकृष्ण लाल
11. हिन्दी साहित्य — हजारी प्रसाद द्विवेदी
12. आधुनिक हिन्दी साहित्य — लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
13. विवेक के रंग दो आस्थाएं — डा0 देवीशंकर अवस्थी
14. आस्था और सौन्दर्य — डा0 राम विलास शर्मा
15. उपन्यासकारों के बीच प्रेमचन्द — विश्वम्भर मानव
16. हिन्दी नव लेखन — डा0 रामस्वरूप चतुर्वेदी
17. हिन्दी उपन्यास का यथार्थवाद — डा0 त्रिभुवन सिंह

18. हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ — डा0 शशि भूषण सिंहल

19. अमृत लाल नागर का उपन्यास साहित्य — प्रकाश चन्द्र मिश्र

20. अमृत लाल नागर व्यक्तित्व, कृतित्व एवं सिद्धान्त — डा0 सुदेश बत्रा

21. आस्था के प्रहरी — डा0 सत्यपाल चुघ

22. अमृत लाल नागर व्यक्तित्व और रचना संसार — मधुरेश

23. अमृत मंथन — सं0 डा0 शरद नागर

24. मानविकी पारिभाषिक कोश — सं0 डा0 नगेन्द्र

25. हिन्दी उपन्यास की शिल्प विधि का विकास — डा0 श्रीमती ओम शुक्ल

26. नये पुराने झरोखे से — डा0 हरिवंशराय बच्चन

27. काव्य शास्त्र — डा0 भागीरथ मिश्र

28. साहित्य का साथी — डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी

29. जिनके साथ जिया — अमृत लाल नागर

30. आधुनिक हिन्दी उपन्यास — डा0 भीष्म साहनी

31. हिन्दी नव लेखन — रामस्वरूप चतुर्वेदी

32. प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की शिल्प विधि — सत्यपाल चुघ

33. टुकड़े – टुकड़े दास्तान — अमृत लाल नागर

34. विचार और वितर्क — आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

35. अमृत लाल नागर के उपन्यास — आनन्द प्रकाश त्रिपाठी

36. उपन्यास और लोक जीवन – रैल्फ, फॉक्स अनु. – नरोत्तम नागर

37. प्रेमचन्द और शरतचन्द्र के उपन्यास –
हिन्दी का बिम्ब – डा0 सुरेन्द्र नाथ तिवारी

38. संवेदना के स्तर – राजकमल वोरा

39. आधुनिकता के संदर्भ में आज का हिन्दी उपन्यास – डा0 अतुलवीर अरोड़ा

40. आधुनिक उपन्यास विविध आयाम – डा. विवेकी राय

41. अमृत लाल नागर के उपन्यास – डा0 हेमराज कौशिक

42. अमृत लाल नागर – भारतीय उपन्यासकार – डा0 पुष्पा बंसल

43. आधुनिक साहित्य – विविध परिदृश्य – सुन्दर लाल कथूरिया

44. हिन्दी उपन्यास – डा0 सुषमा धवन

45. अमृत लाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना – डॉ श्रीमती शोभा पालीवाल

46. हिन्दी उपन्यासों का शिल्प – विधान – डॉ प्रदीप कुमार शर्मा

47. अमृत लाल नागर के उपन्यासों में आधुनिकता – डॉ अनीता रावत

48. उपन्यासः स्थिति और गति – डॉ चन्द्रकान्त वांदिवडेकर

संस्कृत ग्रन्थ

1. रघुवंश महाकाव्यम्	–	कालिदास
2. स्वप्नवासवदत्तम्	–	भास
3. अमर कोष	–	अमर सिंह
4. नाट्यशास्त्रम्	–	भरतमुनि
5. अभिज्ञान शाकुन्तलम्	–	कालिदास
6. किरातार्जुनीयम्	–	भारवि
7. याज्ञवल्क्य स्मृति	–	याज्ञवल्क्य

अंग्रेजी ग्रन्थ

1. Forms of modern fiction - O'connar, William Van

2. Twelve Original essays on great English Novels - Shapario Charles

3. A Treatise on the novel - Liddell Robert

4. Understanding Fiction - Brooks and ¡rren

5. Thɜ realities of fiction - Hale, Nancy

Letter quoted in Garden Murphy's book

6. 'An Introduction to Psychology - Mozart

7. Theart and the craft of writting - J.W. Marriot

8. The quest for beauty - James L. Jarrett

9. Writers at work. Edited by cowley malcom

10. An Introduction to the study of Literature- William Henry Hudson

11. The structure of the novel - Edwin Muir

12. Aspects of the novel - E.M. Forster

13. The analysis of mind - Bertrand Russel

पत्र - पत्रिकायें

1. आज – दैनिक – 19 अगस्त 1979
2. धर्मयुग – 9 नवम्बर 1980
3. नया जीवन – मई–जून 1962
4. नीर क्षीर – 15 अगस्त 1966
5. माध्यम – मई – 1965
6. सुदीप – 27 नव. से 3 दि. 1983
7. सरल बंगला अभिधान –
8. नूतन बंगला -- अभिधान
9. आलोचना – उपन्यास विशेषांक
10. कादम्बिनी – दिसम्बर 1973
11. साप्ताहिक हिन्दुस्तान– 15 अप्रैल–1990
12. समीक्षा – अंक 6 1976
13. दस्तावेज – अंक 2 1979
14. गगनांचल – डॉ रणवीर रांग्रा
15. समीक्षा – अप्रैल–जून 1982
16. आलोचना – जनवरी 1966
17. पीर का पुराण – अंक 1–अक्टूबर 1978
18. आज – 18 मार्च 1990